वत्सला टूट गई !

(मनोवैज्ञानिक उपन्यास)

लक्ष्मीकान्त शर्मा

चित्रगुप्त प्रकाशन

प्रकाशक
जगदीश प्रसाद माथुर
चित्रगुप्त प्रकाशन
पुरानीमंडी, अजमेर

प्रथम संस्करण १९७६

मूल्य तीस रुपये

मुद्रक
सतीशचन्द्र शुक्ल
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर

पृष्ठभूमि

प्रत्येक कथा-रचना अपने परिवेश से जुडी रहती है। इस दृष्टि से 'वरसला टूट गई!' का परिवेश १९६२ का भारत-चीन युद्ध है। इससे पूर्व का काल उपन्यास के नायक नीहार का निर्माणकाल कहा जा सकता है जिसमे कि उसने अपने व्यक्तित्व विकास के विभिन्न उपकरणों को, देश-विदेश मे जुटाया। प्रस्तुत उपन्यास मे मैंने कथानायक के जीवन के दोनो पक्ष लेने का प्रयत्न किया है, अर्थात् इसके जीवन का वयक्तिक पक्ष तथा सामाजिक पक्ष। प्राय देखा गया है कि या तो कोई उपन्यास किसी पात्र के वयक्तिक पक्ष को लेकर ही लिखा जाता है या उसके सामाजिक पक्ष को ही अभिव्यक्ति दी जाती है। मेरे विचार में व्यक्तिगत पक्ष और सामाजिक पक्ष एक-दूसरे से जुडे हुए हैं, अत उनमें से एक का नकार तथा दूसरे का स्वीकार सभव नहीं है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए मैं इसे मनोविश्लेषणात्मक सामाजिक उपन्यास कहना चाहूँगा।

व्यष्टि और समष्टि का द्वन्द्व, केवल सघर्ष के धरातल पर ही अवस्थित नहीं है, उसमे सहयोग के स्वर भी हैं। इन्ही स्वरो का सधान करना मेरा लक्ष्य रहा है। सामाजिक दृष्टि से देखा जाये, तो कथानायक प्रारम्भ में अपनी शिक्षण-सस्थाओ से और बाद म अपनी क्रिया-स्थली (अस्पताल का जीवन) स जुडा हुआ है। वह एक होनहार विद्यार्थी, उत्तरदायी डाक्टर और सहृदय प्रेमी है।

कथानायक के व्यक्तित्व मे चुम्बकीय आकर्षण है। यही कारण है कि बचपन मे डौरोथी और युवावस्था म एकाधिक युवतियाँ उसकी ओर आकृष्ट होती हैं। निरुपम रूप-सभार से आवेष्टित ये युवतियाँ कथानायक के मन में द्वन्द्व का संचार करती हैं उसके मानसिक सतुलन के भग हो जाने की प्रतिपल सभावनाए बनी रहती है किन्तु नीहार का मन जिस धातु का बना है वह आसानी से नही पिघल सकती वह उलझनो और द्वन्द्वो क बावजूद अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता है उसकी मानवीय चेतना सघन अनुभूतियो की सुरगो मे से गुजरती है और वह एक उत्तरदायी पति तथा प्रेमी प्रमाणित होता है। उसके मन के तराजू पर डौरोथी और वत्सला कभी ऊँची-नीची होती हैं तो कभी समस्थिति में ठहर जाती हैं।

आज का जीवन जिन द्वन्द्वो और मरीचिकाओ में उलझा हुआ है उनसे नीहार अस्पृश्य नही रह पाता। उसकी मानवीय चेतना बहुआयामी है और उसका सयम अद्भुत तथा कभी-कभी अविश्वसनीय-सा भी प्रतीत होता है। इन्ही सब चुनौतियो को झेलता हुआ वह आगे बढ़ता है और अपने जीवन की सिद्धि को पाता भी है तथा खोता भी है। जीवन का यह द्वन्द्वात्मक स्वर, उसके जीवन -पट पर सतरगी इन्द्रधनुष की आभा और प्रतिबिम्ब उत्पन्न करता है, जिससे कि पाठक चमत्कृत विस्मित होता है।

डौरोथी और वत्सला के मानसिक अवयव तथा नारीजनोचित प्रवृत्ति को भी मैंने सहानुभूतिपूर्वक उभारने की चेष्टा की है। इसमे कहा तक सफल हुआ हू इसका निर्णय विज्ञजन अथवा प्रबुद्ध पाठक ही कर सकते हैं। उपन्यास के पट पर, अनेक नर-नारी-पात्र आये हैं, किन्तु उन सबका केन्द्र बिन्दु (फोकस) नीहार का व्यक्तित्व ही है अथवा यों भी कह सकते हैं कि उपन्यास की नायिका वत्सला भी अनेक स्थलो पर इस केन्द्र बिन्दु (फोकस) की परिधि मे आई है, तो अनुचित न होगा। नीहार और वत्सला के चित्र ही मुख्य रूप से उपन्यास के कलेवर को विस्तार देते हैं इसमे डौरोथी की भूमिका भी कम महत्त्वपूर्ण नही है किन्तु वत्सला के जीवन की ट्रेजेडी, डौरोथी के व्यक्तित्व को ढक लेती है। अन्य नर-नारी पात्र चित्र को केवल पूर्णता एव वैविध्य ही प्रदान करते हैं।

कुल मिलाकर यह प्रकट रूप म तो एक कथा-दुखान्तिका ही है, किन्तु नीहार और डौरोथी के सयोग से एक नई 'वत्सला' का भी जन्म होता है, जिसे प्रतीकात्मक रूप में इसी रूप म लिया जाय कि निराशा के गहन अधकार मे भी आशा का अरुणिम प्रभात छिपा रहता है और समय पाते ही वह अपनी किरणो से कथापट को आलोकित करता है।

प्रस्तुत उपन्यास में मैंने डाक्टरी-जीवन को, उसके विभिन्न पहलुओं को, चित्रण का विषय बनाया है। यह डाक्टर नीहार, डौरोथी और वत्सला कहानी है। किस प्रकार एक अबोध बालक, डाक्टरी-जीवन की बाहरी तड़क भड़क से आकर्षित होता है उसकी मेधा स्वदेश और विदेश में अपने विष के आवश्यक उपकरण जुटाती है, और फिर किस प्रकार चीनी आक्रमण पर, वह अपने आपको घायलों की परिचर्या में लगा देता है इसका लोम ह वृतान्त आप इस उपन्यास में पढ़ेंगे। डाक्टर नीहार का सामाजिक व्यक्ति जब शत्रु की विनाश-लीला से मुठभेड़ ले रहा था और क्षत विक्षत शरीं पर मरहम-पट्टी कर रहा था, तभी उसके विद्यार्थी-जीवन की एक कि छाया—वत्सला, अब डाक्टर वत्सला, उसके जीवन प्रवाह में आती है, उसके व्यक्तित्व को अपने सहज नारीजनोचित गुणों से आच्छन्न कर लेती उसकी सुकुमारता मार्जित रुचि और शुचितापूर्ण व्यक्तित्व अपने सौरभ से केवल डाक्टर नीहार को ही प्रभावित करते हैं, बल्कि अस्पताल के सम वातावरण में एक दिव्य प्रेरणा प्रस्फुटित हो उठती है। फ्लोरेंस नाइटेंगिल- विद द लैंप का आधुनिक संस्करण डा० वत्सला सभी रोगियों के मन प्राण छा जाती है। उसके मन में डाक्टर नीहार के प्रति कोमल भाव हैं, यही उसे आजीवन कौमार्यव्रत धारण करने के लिए विवश करते हैं। वत्सला मु सकती है पर टूट नहीं सकती। उसका इस्पाती व्यक्तित्व उसे पीड़ित मान के एक नव्य क्षेत्र में ले जाता है पर जो घुन अनजाने ही उसके फेफड़ों म गये थे, व समय पाकर इस्पात में भी, जंग लगा देते हैं, उसके व्यक्तित्व क्षार-क्षार कर देते हैं।

मधुर दाम्पत्य जीवन की परिधि में आबद्ध डा नीहार, एक गहरे अन्त में लीन हो जाता है और उसके सामने रह-रहकर पत्नी और का द्वन्द्व घनीभूत होता है। युग के प्रलोभन, मरीचिकाएँ और रूप तृष्णाएँ अपनी तुष्टि के लिए नये-नये मार्ग खोजती हैं पर नीहार का व्यक्ति जिस मिट्टी का बना है, उस पर इन कलुषित छायाओं का प्रभाव नहीं पाता। युग की आग में, उसकी विभीषिका में डा नीहार का व्यक्तित्व कु सा निखरता है, दमकता है। प्रणय के शाश्वत त्रिकोण को, मैं एक नये प्रस्तुत करने के लिए सदैव और सर्वत्र सचेष्ट रहा हूँ। यदि यह कृति पाठकों का यत्किंचित मनोरंजन कर सकी और उन्हें संस्कारों की राह डाल सकी—अवश्य ही ये नये संस्कार हैं तो अपने प्रयास को विफल समझूंगा।

यह मेरा तीसरा उपन्यास है। इससे पूर्व मैं 'नये अकुर' तथा 'चटक्ती कलिया उभरते कांटे' हिन्दी-जगत् को भेंट कर चुका हूँ। 'नये अकुर' ही नये सस्करण में 'प्रतिभा की रेखाएँ' के रूप मे प्रकट हुआ है। इन दोनों उपन्यासो में एक बधी हुई परिधि में मुझे काम करना पड़ा था, किन्तु इस तीसरे उपन्यास मे मैंने किसी बधी-बधायी परिधि को स्वीकार नहीं किया है। 'वत्सला टूट गई!' म किशोर प्रणय के घरौंदे, युवावस्था की अठखेलिया तथा एक वयस्क, उत्तरदायी डाक्टर के गुरु-गम्भीर एव उद्देश्यपूर्ण क्रिया-कलाप भी हैं। समयानुसार राष्ट्रीयता के स्वर भी उभरे हैं और देश की इस्पाती सुदृढता भी प्रकट हुई है।

विदेशी पात्रा के द्वारा मुझे अग्रेजी शब्दावली का प्रयोग ही अधिक रुचिकर प्रतीत हुआ है। हिन्दी भाषी पाठक की सुविधा के लिए मैंने उसका हिन्दी रूपान्तर भी प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास का पट देश-विदेश में फैला हुआ है अत वविध्य, वचित्र्य एव रोमास के भी पर्याप्त उपकरण उपन्यास मे बिखरे पडे हैं। इसका मूल स्वर व्यक्तित्व का समुचित विकास, राष्ट्रीयता एव सेवा भावना ही कहा जा सकता है। पूर्व और पश्चिम की विचारधारा का सम्मिलन भी यथावसर हुआ है किन्तु भारतीयता को कहीं भी आंच नहीं आने पायी है। मैंने यथासाध्य, यथामति यही चेष्टा की है कि भारतीयता के स्वर को सुरक्षित रखते हुए भारत के वेश को, सटीक शब्दो मे प्रकट किया जाय। अपने इस मिशन में मैं कहा तक सफल हुआ हूँ, यह बतलाना मेरा काम नहीं है। यदि पाठको ने मेरे इस प्रयास को रुचिकर और उत्साहवद्धक पाया, तो मैं शीघ्र ही कुछ एसे उपन्यास और लिखना चाहता हूँ।

एक शब्द उपन्यास के शिल्प के सम्बन्ध में भी इधर शिल्प और शली तत्त्व को लेकर अनेक प्रयोग हुए हैं, इन सबके प्रभाव को मैंने अपने ढग से अपनाया है और विकसित किया है। इस सम्बन्ध में यदि प्रबुद्ध पाठक अपनी मानसिक प्रतिक्रियाओ से, मुझे अवगत करायेंगे, तो प्रसन्नता ही होगी। निवेदन की कफियत कुछ अधिक बढ गई है, इसके लिए क्षमा चाहता हूँ, किन्तु साथ ही यह भी कहना चाहता हूँ कि इन पृष्ठभूमिगत सूचनाओ का आकलन मेरी दृष्टि म आवश्यक था। इसका यह तात्पय न समझा जाय कि मैं पाठक की कल्पना या विचारणा को किसी भी रूप म नियन्त्रित करना चाहता हूँ। वह स्वतन्त्र है और अपनी प्रतिक्रियाओ को मुक्त रूप मे प्रकट कर सकता है। इनका सहर्ष स्वागत होगा।

अन्त में आभार प्रदर्शन के दो शब्द। इस कृति के आलेखन में मेरे चार प्रिय शिष्यों का योग बड़ा महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। यदि सत्यप्रकाश दुबे की सतत प्रेरणा एवं सक्रिय सहयोग प्राप्त न हुआ होता, तो यह कृति अपने अस्तित्व को ही प्राप्त न कर पाती! फिल्मी गीतों का उपयोग, दुबे की सूझ-बूझ का ही द्योतक है। प्रेम प्रकाश भाटिया और हीरालाल ने भी समय-समय पर इसके लेखन में सहयोग दिया है। लक्ष्मीचन्द जैन ने बड़े मनोयोग और तत्परता से इस उपन्यास की पाण्डुलिपि का टंकण किया है। इन अपने प्रिय छात्रों को मैं सद्भावना के अतिरिक्त और भला क्या दे सका हूँ! यही छात्र इस उपन्यास के पहले पाठक रहे हैं और मुझे लिखने की निरन्तर प्रेरणा देते रहे हैं। बन्धुवर चम्पालाल रांका और प्रो. रामप्रकाश अग्रवाल गीताई ने भी इस उपन्यास के कुछ अंशों को सुना है और बड़े ही मूल्यवान सुझाव दिये हैं। यह दूसरी बात है कि उन सुझावों का पूरा उपयोग नहीं कर सका, किन्तु इससे उनका मूल्य किसी भी रूप में कम नहीं होता।

प्रस्तुत उपन्यास के सुरुचिपूर्ण प्रकाशन में चित्रगुप्त प्रकाशन, अजमेर के स्वत्वाधिकारी श्री जगदीश प्रसाद माथुर की प्रेरणा एवं तत्परता काम आई। उन्होंने बड़े मनोयोग और रुचि से, इस कृति को, प्रकाशित किया है। अत वे लेखक के धन्यवाद के पात्र हैं। मुद्रण की तत्परता के लिए श्री सतीश शुक्ल और प्रूफ-संशोधन के लिए सुपुत्र नीरज को भी धन्यवाद देना चाहता हूँ। इन्हीं की तरह हिंदी जगत् ने भी यदि इस कृति को अपनाया, तो मैं इस दिशा में कुछ और ठोस कार्य कर सकूँगा। एवमस्तु।

—लक्ष्मीकान्त शर्मा
दयानन्द कॉलेज, अजमेर

बसन्त पंचमी, ७६

१

बचपन की स्मृतियां किसे नहीं सुहातीं ! उनमें कुछ ऐसी ताजगी नवीनता, वचित्र्य और आह्लाद होता है कि मन उनमें रम जाता है, जैसे एक बार हम फिर बचपन के आंगन में लौट आये हों, या यों कहें कि बचपन को दुबारा जीने लगे हों। तीस साल के लम्बे व्यवधान को पार कर, मेरी कल्पना जहां जाकर टिक गई है, वह एक अद्भुत दृश्य है।

बड़े अस्पताल के पार्श्व का एक टेनिस कोर्ट, बीच में चटकीले लाल रंग के किनारे वाली हरी जाली खिंची है और उसके दोनों ओर स्त्री-पुरुषों का एक एक जोड़ा मुस्तैदी में, गतिमयता में खड़ा है। सफेद झक्क पैंट ऊपर कमीज और कुछ ऐसी ही वेश में दोनों ओर की स्त्रियां हैं। नारी का पृथकत्व केवल उनके केशों से, सौम्य ललित चेहरे से ही झलकता है, अन्यथा उनमें क्या अन्तर है!

हाथ में कसा हुआ रैकिट और उससे इठलाती हुई गेंद, उनके क्रीडाशील एवं आमोदप्रिय व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है। गेंद स्फूर्ति के साथ इधर से उधर जाती है और चार दृष्टियां उसका पीछा करती हैं पर कोई एक नाजुक कलाई उस पर भरपूर जोश के साथ आघात करती है, दूसरी ओर से भी पुरुष के मजबूत हाथ भरपूर ताकत से उसका जवाब देते हैं।

न जाने क्या यह खेल और उसके खेलने वाले मेरे मानस पट पर कुछ ऐसे अंकित हैं कि उसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवरण भी मैं अनायास ही प्रस्तुत कर सकता हूं। मुझे याद आता है कि घण्टे भर के स्फूर्तिशील खेल के उपरान्त खिलाड़ी एक गोल मेज के चारों ओर बैठ गये हैं और बॉय ने झाग से भरे हुए सोडे के गिलास और नमकीन व मीठे बिस्कुटों की अलग अलग प्लेटें उनके सामने लाकर रख दी हैं। खान-पान के साथ मधुर गपशप भी चल रही है जिसमें अस्पताल के मरीजों व दवाइयों का जिक्र तो आता ही है, किन्तु साथ ही शहर की राजनीति भी उनके विवाद का विषय बनती है।

डाक्टर सिन्हा कुछ गम्भीर होकर कहते हैं, 'देखो माथुर, ये कमे अजीब लोग हैं, कि बिना जांच पड़ताल के ही अखबार में मनमानी चीजें छाप देते हैं।"

'अरे भाई, इनका रोजगार तो आखिर इन्हीं पर चलता है। हमारे जरनलिज्म में धोखाधड़ी और चारसौबीसी बाकी अदा से खुलकर खेलते हैं ' कहकर

यिरक्त हुए हाटा स डाक्टर माथुर न सा को "सिप' करते हुए कहा । अब तक डाक्टर गार्गी चुप थीं उनकी चचल अगुलियाँ स्वेटर बुनत हुए बडी भली लग रही थी। एकाएक ही व गम्भीर हो गई और कहन लगा "डाक्टर साहब, मजेदार बात सुनाऊँ। हमारे यहाँ एक मरीजा को शिकायत है कि उसका बच्चा बदल गया है। अब बताइये उसके वहम को कैसे दूर किया जाय। कल वो यह कहने लगगी कि उसका खाविन्द बदल गया है। मैं तो सोचती हूँ कि ऐसे मरीजो को मेन्टल हास्पिटल म दाखिल कर दिया जाय।"

अब तक डाक्टर नमा उनकी बातें सुनते हुए कुछ सोच रहे थे। अब व भी जस उकता गये हो गय और डाक्टर गार्गी क वक्तव्य क समाप्त होन ही अचानक बोल पड "शहरी इलाके से एक जट्ट जमींदार आया है उसकी सहत भली चंगी है पर उसे शिकायत है कि वह बीमार है। उसकी बीमारी फिजिकल से बढ कर मेन्टल है।

डाक्टर सन्तोष जो कि नई उम्र की डाक्टर थी और जिन्होंने पिछले साल ही प्रक्टिस आरम्भ की थी कुछ अजीब शायराना अन्दाज स कहने लगी, मेरी मरीजा को शिकायत है कि उसका आदमी उससे मोहब्बत नहीं करता है और तनहाई म पीती पत्नी पढती वह तपेदिक की मरीज हो गई है। क्या डाक्टर माथुर क्या हमारे पास कोई ऐसी दवा भी है जिससे हम इस मरीजा की मोहब्बत को उसे फिर लौटा सकें।

डाक्टर सतोष की दिलचस्प बात से उपस्थित मडली म एक अच्छा-खासा ठहाका लगा और डाक्टर सिन्हा ने अपनी घडी पर नजर गडाते हुए कुछ व्यस्तता क साथ कहा आलराइट डाक्टस वी मस्ट डिपार्ट नाउ (अच्छा डाक्टर बन्धुओ अब हम विदा होना चाहिए ! ')

लान क एक तरफ खडी हुई कारें गतिशील हुई और जहा थोडी देर पहल ही उल्लास चाचल्य एव स्फूर्ति मिश्रित विनोद का अट्टहास था वहा अब एक अजब सन्नाटा था और बाय गेंदा और फर्नीचर को बटोरते हुए यथास्थान रख रहा था।

मैं न जाने क्या काफी देर तक वहाँ खडा रहता और इस कार्यवाही का मूक रूप स देखा करता, यह मेरा सध्या का दैनिक कार्यक्रम था। न जान क्या यह सब देखना मुझे बडा प्रिय लगता था ! क्या इसलिए कि घर और मोहल्ल क वातावरण स यहाँ एक पृथकता थी ? घरो म महिलायें और बालिकाय कोल्हू क बैल की तरह आँख पर पट्टी बाध एक सुनिश्चित घेरे म ही चक्कर काटती दिखाई दती। इनकी तुलना म यहा उन्मुक्त जीवन था, नित्य भेंट सामाजिक सम्पर्क म कोई बाधा न था समृद्धि और आधुनिकता यहा भरपूर

थी और सम्भवत यही सब मेरे बाल-मन को गेंद की तरह उछाल रहे थे। अज्ञात रूप से ही मैंने मन म दृढ़ सकल्प किया कि मैं भी डाक्टर बनूंगा और इस आमोद प्रमोद का एक मूक दश क न रहकर स्पष्ट उपभोक्ता हो बनकर रहूंगा। बचपन म यह जो गाठ मन मे लगी थी, उसने मुझे को एस-सी मे विज्ञान का अध्ययन करने की सकारण प्रेरणा दी और तब मैं मेडिकल कॉलेज का विद्यार्थी बना। अब न जाने क्या व चीजें जो दूर से बडी चमत्कार लगा करती थी, कुछ बेभाव सा नज़र आने लगी। डाक्टरी का व्यस्त अध्ययन, चीरफाड, उजा न वाले सब कर, कभी-कभी यह सोचने के लिय बाध्य करते कि मैं गलत जगह तो नही आ गया हूं पर न जाने क्यो एक दिव्य प्रेरणा कदमो म अनजाने ही गति भरती गई और सारी रुकावटो और अरुचियो को चीरता हुआ मैं एम बी बी एस के आखिरी साल तक जा पहुंचा।

□□

परिचित थी, उसके स्थान पर जो दिव्य आभा-से प्रदीप्त तरुणी मेरी आंखो के सामने आ खडी हुई है, उसका स्वागत करने मे, मुझे हिचकिचाहट नही है, बल्कि कोई सोई हुई चीज को पाने की साध है।"

"बडी बातें बनाने लगे हो डाक्टर!" अतीत की प्रिय स्मृतियो मे झाकते हुए डौरोथी ने कहा, जसे उसका यह भाव भी हो कि वह युवा डाक्टर के गालो पर हल्की चपत लगा रही हो।

खर, जाने दो डौरोथी इन वातो को। आओ घर चलें और मम्मी से तुम्हारा मिलना क्या जरूरी नही है?' यह कह कर मैंने उसे अपने साथ आने का सकेत किया।

क्वाटर म पहुँचे तो मालूम हुआ मम्मी अभी अभी ड्यूटी से लौटी हैं और कुछ पलो म कपड बदल कर आना चाहती हैं। दूसरे ही क्षण मम्मी इस तरुण जोडी के सामने थी। वे विस्मय और साथ ही अद्भुत उल्लास के साथ कहने लगी नवागतुका से 'डौराथी, तुम तो बहुत बडी हो गई हो, पहले से बहुत बदल गइ हो!

"आटी मेरा बडा हो जाना न जाने सबको क्या अखर रहा है। अभी अभी डाक्टर ने भी कुछ ऐसी ही बातें कही थी।'

लेकिन आटी ने उसकी वात को अनसुना कर दिया और नाश्ते की तयारी मे लग गई।

चचल बचपन कितना आह्लादक होता है कसे-कैसे विचित्र चित्र आखो की पलको पर तैरते रहते है और जगत् के प्रभाव से अप्रभावित उस जीवन मे किलकारियें तो होती ही हैं, पर उनके साथ मन मे अजीब हिलोरें भी उठा करती हैं। मुझे याद आया कि कैसे मैं और डौरोथी बरसात होने पर घरौंदे बनाया करते थे और मैं नटखट बालक के उद्धतपन को लेकर कैसे उसके घरौंदे को आनन फानन मे बिखेर दिया करता था, वह निरीह बालिका सुबकती रह जाती और उसकी वह लाचारी मेरे मन म न जाने कैसे आनन्द की हिलोरें उठा जाती! आज सोचता हूँ क्या उस खेल मे कोई तुक था! कहीं ऐसा तो न था कि बचपन का वह घरौंदा उत्तरदायित्वपूर्ण गृहस्थी का पूर्व रूप हो और मेरी वह अल्हड उद्धतता पुरुष की निर्दयता और अत्याचार का एक लघुरूप हो। मैं इन्ही विचारो मे खोया हुआ था और डौरोथी की डबडबाती आँखें चारो ओर के वातावरण से एकबारगी ही परिचित होना चाहती थी, कि मम्मी ट्रे मे चाय और कुछ नाश्ता ले आइ। अब वे भी हमारे

साथ बैठ गई थी और डौराथी से नाना प्रकार के प्रश्न करती हुई पिछले चार-पांच मास के इतिहास को जैसे समझ लेना चाहती हो।

डौराथी ने जो कुछ बताया उसका सार यही है कि नहरी इलाका बड़ा अजीब होता है यहां 'फार क्लूज' का पासना बड़ा प्रचलित है। मम्मा के रहस्य पूर्ण दृष्टि से देखने पर उसने स्पष्ट किया कि 'फार क्लूज' से तात्पर्य वाइन वूमन वल्थ और वपन से है। वाइन और वूमन 'चाहिये ऐश के लिये' वपन चाहिये दुश्मन से मुकाबला के लिये और वल्थ चाहिये सामाजिक सफलता के लिये। उसने यह भी बताया कि वहाँ व्यक्ति का मूल्यांकन भी खून के आधार पर होता है। पांच खून नायक पमल सात खून नायक फसल और दस खून नायक चमन। अर्थात् चमन इतनी हुई है कि पांच सात या दस खून किये जाने पर भी उसका आसानी से खून के जुर्म में बरी हुआ जा सकता है। डौराथी मिशन कॉलेज में पढ़ती थी और सरदारों के लड़के उसकी बस के आने पर इधर-उधर की गलियों से निकलकर इकट्ठे हो जाते और अजीब मुंह बनाकर डौराथी की सहेलियों को चिढ़ाया करते थे। सहेलियां भी किसी से कम नहीं थीं और उनके पास इन सब बातों का एक ही जवाब था और वह था नई मजबूत चप्पल से प्रेमी युवक का स्वागत-सत्कार। डौराथी ने यह भी बतलाया कि उसकी मम्मी की सेहत उस नहरी इलाके में कुछ ठीक नहीं रह पाई इसलिए डिवीजनल हैडक्वार्टर में बड़े प्रयास और अनेक दिक्कतों के साथ तबादला करवाया जा सका है।

अब तक मेरी छोटी बहिन नीनी उर्फ नीलिमा कॉलेज से लौट आई थी और आते ही डौरोथी से बड़े स्नेहपूर्वक गले मिली। दो सहेलियों के मुक्त सम्पर्क और वार्तालाप की दृष्टि से मैं और मम्मा उठकर दूसरे कमरे में चले गये। चला तो आया मैं अपने कमरे में पर मेरे कान और मेरी दृष्टि शत-सहस्र रूप धारण कर उसी कमरे के इर्द-गिर्द मंडराने लगे। कभी मुक्त हास्य की तरंगें आकर छू जाती कभी दो सहेलियों की अठखेलियां मेरे मन को प्रमुदित कर जातीं कभी कोई अस्पष्ट अपूर्ण वाक्य मेरी श्रवण शक्ति की परिधि में कैद हो जाता और कभी उन सखियों की चुहुलबाजी मेरे मन को भिगो जाती। मतलब यह था कि उनसे अलग होकर भी मैं उनके साथ था अन्दृश्य मूक एवं निस्तन्द्र। तभी आवा ने क्या देखा कि डौराथी नीली से विदा ले रही है और तब क्वार्टर के आहाते तक मैं भी नीली के साथ उसे छोड़ आने के लिये बेतहाशा दौड़ पड़ा।

एकान्त में मैं जब सोचता हूँ कि इस प्रकार बेतहाशा दौड़ने की मुझे क्या जरूरत

थी, तो उसका कोई माकूल उत्तर नही मिल पाता। क्या यह तरुणाई का वेग भरा आलोडन विलोडन था या खौलते हुए खून का एक ऐसा रेला था, जो मुझे क्वार्टर की अंतिम सीमा तक ठेलता ले गया था!

मगर जो कुछ भी हो "बाई बाई" के आदान प्रदान के साथ हम डोरोथी से विदा हुए और मैंने नीली की आँखों में झाँकते हुए महसूस किया कि वे कुछ गीली थी। लौटते हुए नीलिमा के चरण जिस उचलता और अद्भुत उल्लास से पृथ्वी पर पड़ रहे थे, उससे यही ध्वनित होता था कि वह अपनी सखी को पाकर बेहद खुश है और कि वह अपना बस चलते उससे कभी अलग न होने देगी। पर डोरोथी मेरे मन मे न जाने क्या-कुछ कुरेद गई थी कि मैं बहुत देर तक एकांत चिंतन मे निमग्न कोई डेढ़ घण्टे तक अपने कमरे में खोया हुआ सा बैठा रहा। डोरोथी की नीलकमल सी आँखें मुझे न जाने किस स्वप्नलोक का आभास दे रही थी! उसके दमकते हुए चेहरे की कांति ऐसी लग रही थी, जैसे कि मोती में से उसकी आब बनकर होकर झाँक रहा हो। दाड़िम सी उसकी शुभ्र दंतावली उसके सौंदर्य में चार चाँद लगा रही थी। नुकीली नासिका मेरे मन की परतों में बहुत गहरी होकर चुभ आई थी और एक अद्भुत साँचे में ढला हुआ उसका भरा पूरा शरीर, लम्बा, छरहरा डील डौल, उन्नत आकांक्षाओं से उरोज न जाने किस मानसिक परिवर्तन की सूचना दे रहे थे!

मैं चौंका नीहार जिस गलत रास्ते पर तुम बढ़ रहे हो क्या यही तुम्हारा प्राप्तव्य है क्या मम्मी ने तुमसे यही अपेक्षा की थी और स्वर्गस्थ पिता की आत्मा क्या इस डगर पर कदम पड़ने पर उसका निषेध न करेगी! तभी नीली ने आकर पीछे से मेरी आँखों को मूँद लिया और कहने लगी क्या सोच रहे हो भैया? अभी से न जाने क्या खोये खोये से दीख पड़ते हो! क्या भूल गये कि आज संध्या को हम आरती देखने चलना है!"

वास्तविकता की इस तीखी मार से जैसे मेरे मन पर चाबुक लगा और मैं जैसे नियन्त्रित हो गया। भावनाओं के बीहड़ जंगल में से अपने आपको उबारते हुए नीली को यही आश्वासन दिया 'अपनी नन्हीं बहन का वायदा मैं भूल सकता हूँ!

अच्छा तो मैं नन्ही कब से हो गई।" इस नीलिमा को यह कैसे बताऊँ कि वह हमेशा ही मेरे लिए नन्हीं ही रहेगी चाहे वह कितनी ही बड़ी क्यों न हो जाय!

□□

अन्यमनस्क-सा बैठा एक पुस्तक के पन्ने पलट रहा था। यों आरम्भ से ही मेरी पढ़ने में रुचि रही है और अपने विषय के अतिरिक्त भी अंग्रेजी हिन्दी व बंगला के उपन्यास पढ़ता रहा हूं। कविता में भी मेरी अभिरुचि रही है जैसा बहुरंगी और अनन्तरूप चित्र उपन्यास के पट पर अंकित होता है वैसा कविता में कहां! फिर भी मानता हूं कविता एकान्त क्षणों का आनन्द है और उसकी सौन्दर्य चेतना जीवन का एक मधुर-मधुरिम उपहार है। उपन्यास में तो हर्दिन जीवन का संघर्ष, कटुता एवं तिक्तता ही रहती है। इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था कि सुबह की डाक से मुझे मिला एक सुनहरा निमन्त्रण-पत्र! खोलने पर विदित हुआ कि कल सन्ध्या डौरोथी का जन्म दिवस है और उसने आग्रहपूर्वक लिखा है कि मैं जरूर नवट्टर कवंरा जदविन की कोठी पर आऊं क्योंकि वहीं पर उनके हाल में जन्म दिन का आयोजन है। डौरोथी ने स्वयं अपनी लिपि में लिखा था कि यदि मैं नहीं पहुंचा तो वह सदा सर्वदा के लिए नाराज हो जायगी और फिर कभी न बोलेगी।

मैं सोचता हूं यह आग्रह क्या है? यह आग्रह ही नहीं वरन् एक चुनौतीपूर्ण धमकी सी है। क्या है इसमें? स्नेह सान्निध्य की मधुर कल्पना या कि सार्वजनिक प्रदर्शन या एक सुना रंगमंच। सच पूछिए तो मैं ऐसे आयोजनों में अपने आपको फिट नहीं कर पाता, इसलिए सकपकाता हूं। भीड़ और चहल-पहल का प्राणी मैं नहीं हूं। जीवन के प्रारम्भ से ही न जाने क्यों एकान्त सेवी रहा हूं और मेरे मनोवैज्ञानिक मित्रों ने बताया है कि मैं अन्तर्मुखी प्रवृति का व्यक्ति हूं स्वभावतः सभा सोसायटी और क्लब-जीवन के प्रति मेरे जीवन में आकर्षण भले ही हो पर अपनी स्वयं की विवशता से प्रेरित हो मैं इन संगठनों से कभी भी आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर सकूंगा कम-से कम मुझे तो इसमें सन्देह है।

इसी बुनउधेड़ में साया था कि नीली आ गई और उसने मेज पर पड़े हुए लिफाफे को अनायास ही खोलते हुए पढ़ा और उपालम्भ के स्वर में कहने लगी भैया तुम बड़े वैसे हो अकेले-अकेले जाने का इरादा कर रखा है पर मैं तुम्हें अकेले न जाने दूंगी।

अरी नीली तू बड़ी अजीब है अकेले क्या, मैं तो जाना ही नहीं चाहता पर

तेरी सखी ने कुछ ऐसी किलेबन्दी की है कि उससे निस्तार नहीं। चल तू ही डूबते को तिनके का सहारा बन।"

"अच्छा, अच्छा!" कहती उछलती-कूदती मैना की तरह नीलिमा मेरी आंखों से ओझल हो गई पर जाते-जाते यह कह गई थी कि मैं साढ़े आठ बजे तयार रहूंगी और इस अवसर पर हमें जरूर पहुंचना है।

□ □ □

डाक्टर क्लेराजटकिन जर्मन डॉक्टर हैं। उन्हें महाराजा विक्रमसिंह अपनी जर्मनी की यात्रा के दौरान उनकी विशेष सेवाओं से प्रसन्न होकर अपने साथ ही ले आये थे और वे रियासती अस्पताल के महिला विभाग की इन्चार्ज थीं। देखने भालने में लम्बे डील डौल की यह महिला एक विचित्र आकर्षण से परिपूर्ण थीं। पुष्ट मांसल शरीर गुलाबी रंग, छुओ तो जैसे खून बरस पड़े और योरोपीय सौन्दर्य का भव्य उदाहरण, यह महिला अकेली ही अपने बंगले में रहती थीं। बगल में ही सिस्टर फ्रैंकलिन का क्वार्टर था और उसमें कोई भी बड़ा कमरा न होने के कारण, डाक्टर क्लेरा ने आग्रहपूर्वक इस जन्म दिन की व्यवस्था अपनी कोठी के हाल में की थी। डाक्टर क्लेरा को यहां आये १३ १४ साल हो गये थे। वे कुशल सर्जन थीं और इतने लम्बे अरसे से हिन्दुस्तानियों के सम्पर्क में आने से टूटी फूटी हिन्दुस्तानी भी बोल लेती थीं। हिन्दी संस्कृत और जर्मन में तो कभी-कभी वे अद्भुत समानता ढूंढ लेतीं और इस देश के वासियों के प्रति एक प्रबल आत्मीयता अनुभव करती थीं। महाराजा की इन पर बड़ी कृपा थी और महल में अक्सर वे इलाज के लिये जाया करती, इस कारण उनके बारे में अतीव अजीब अफवाहें उड़ी थीं कि महाराजा का उनसे निकट संबंध है और वे उन्हीं के आग्रह पर अपनी मातृभूमि को छोड़ इतनी दूर चली आई थीं।

पर जो कुछ भी हो, संतान न होने के कारण और तथाकथित आजीवन कौमार्यव्रत के कारण वे डौरोथी को बड़ा स्नेह करती थीं। इसी स्नेह के कारण स्वयं उन्होंने महाराजा से कह कर कोठी पर रंगीन रोशनी का बड़ा सुन्दर प्रबन्ध करवाया था। पत्ते-पत्ते पर लाल, हरे नीले, पीले बल्ब लगे थे और सामने के फव्वारे में फुटलाइट्स का कुछ ऐसा प्रबन्ध किया गया था कि उछलता हुआ पानी नाना रंगों में प्रतिबिम्बित होता था और यह तारल्यपूर्ण सुन्दरता उस ग्रीष्म की सन्ध्या में भी एक शीतलतापूर्ण परितृप्ति का संचार कर रही थी। सामने के हाल में कुछ लम्बी मेजें लगी थीं और उनके दोनों ओर डाइनिंग चेयर्स रखी हुई थीं। अनेक कलामय चित्रों से वह हाल विभूषित

था और स्थान स्थान पर रखे हुए गुलदस्ते बड़े मनमोहक प्रतीत हो रहे थे। खिड़कियों के नीले पर्दे अन्दर के प्रकाश को कुछ कुछ मद्धिम रूप में बाहर भी फेंक रहे थे।

जब मैं डाक्टर के बंगले पर पहुँचा तो साढ़े आठ बज रहे थे और पूर्णिमा की चाँदनी सर्वत्र छिटकी हुई थी। ऐसा प्रतीत होता था कि दूर आसमान के चन्दा ने भी अपनी चाँदनी को डोरोथी के जन्म दिन में शरीक होने के लिये बड़े उल्लास और चाव से भेजा था।

मुझे और नीली को देखते ही डोरोथी ने स्नेहपूर्ण अभिवादन किया और डाक्टर बनेरा से हमारा घनिष्ठतापूर्ण परिचय करवाया।

यही हैं आपके डा० नाहाररंजन गुप्ता और इनके साथ वाली यह नौजवान लड़की इनकी बहन मालूम होती है कह कर उनके होठों पर एक ऐसा उल्लासपूर्ण हास्य मुखरित हुआ, जिसके मर्म में एक रहस्यपूर्ण व्यंग्य भी निहित था।

मैं यद्यपि उनकी इस टिप्पणी में कुछ कट सा गया था किन्तु फिर भी मैं साहस जुटाकर जैसे अपनी झेंप मिटाने के लिए ही कह रहा होऊँ डाक्टर बहुत मुद्दत से आपके बारे में सुनता रहा हूँ। आज आपसे मुलाकात कर सोचता हूँ जो कुछ कहा गया था वह गलत नहीं था।

कहने को तो मैं यह कह गया पर सम्भवतः अपने कहे के अर्थ को मैं भी ग्रहण नहीं कर पाया था। कह नहीं सकता कि डाक्टर बनेरा पर इसका क्या प्रभाव पड़ा क्योंकि वे तुरन्त ही हमें बड़े आग्रह के साथ एक सुनिश्चित स्थान पर बैठा गई। बनेरा से निबटते ही थे कि डोरोथी ने घर दिखाया मेरे मन में यह शक था नीली कि तुम्हारे भैया आयेंगे भी या नहीं पर तुम दोनों को यहाँ पाकर मैं बेहद खुश हूँ। ऐसा कहते हुए उसकी तीव्र दृष्टि मेरे पर गड़ गई थी जैसे वह अन्तर्भेदन करके मेरी मानसिक स्थिति को समझ लेना चाहती है।

अब तक मैं काफी साहस जुटा चुका था और ठंडे पानी के गिलास ने भी मेरी प्रगल्भता को उत्तेजित किया बोल पड़ा अनायास ही डोरोथी तुम्हारे जन्म दिन की इस सजावट को देखकर मेरे मन में यही आ रहा है कि किसी डाक्टर का साया हमें भी मिल जाता और हमारा भी जन्म दिन कुछ ऐसे ही मनाया जाता।

डोरोथी कब चूकने वाली थी उसने बड़े स्नेहपूर्ण आवेग के साथ कहा

डाक्टर तुम्हारा जन्म दिन मैं और नीली यह क्या इससे भी बढ़कर मनायेंगे

पर इसके लिय एक शत है।" मैं कुछ कहू इससे पूव ही नीलो बोल पडी, जसे वह मेरी ढाल हो 'आखिर बतलाओ ता सही डौरोथी क्या शत है ? तुम्हारी एसी रहस्यपूण बात ठीक मौका आने पर ही बताई जा सकती है, अभी नहीं।" डौरोथी के चेहरे पर यह कहकर एक ऐसी अभेद्य दृढ़ता आ गई कि नीलो का आग्रह समाप्त हुआ और मेरी उत्सुकता भी।

अब तक सम्मान्य अतिथि आ चुके थे और सब यथास्थान बैठ चुके थे। डौरोथी के पिता और मा भी श्वेत वेशभूषा मे उचित स्थान पर बठे थे। डौरोथी की मम्मी न आग्रहपूवक डाक्टर क्लेरा म जन्म दिन का केक काटने के लिए कहा। डाक्टर क्लेरा न बड उल्लास एव अपूव गरिमा के साथ इस काय का सम्पन्न किया, तब अतिथियो से अल्पाहार आरम्भ करने का सकेत किया गया और क्लेरा व डौरोथी उसकी मम्मी और पापा आग्रहपूवक लागों को खिलाने लगे। गपशप के बीच पेय पदार्थो और मधुर व्यजनो से हम काफी तृप्त हो गय थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि इन ईसाइयो न भी मनुहार की पद्धति को भारत मे रहन क कारण अपना लिया है।

एक बडी मेज पर आकपक सजावट के साथ वे उपहार रख गय थे, जो कि डौरोथी को उसके मित्रो एव सहेलियो ने प्रदान किय थे। मैंने देखा कि मेरा उपहार यद्यपि नगण्य था फिर भी न जाने क्या उसे सवप्रमुख स्थान दिया गया था। नीलिमा ने इस उपहार को आते ही डौरोथी को चुपके मे सौंप दिया था। वास्तव म मुझे और नीलिमा का इस उपहार को चुनने म बडी कठिनाई हुई थी और शीघ्रता की विवशता क कारण ही मने एक किश्तीनुमा टेबुल लम्प महता ब्रदस के यहा से खरीद लिया। नीली ने अपनी सखी के लिय सुनहरे टाप्स ले लिये थे और साथ ही मैंने कुछ किताबें भी ले ली थी जो कि डौरोथी को पसद हो सकती थी। अनेक भडकीले उपहारो के बीच हमारे उपहार क्या मूल्य रखते हैं यह तो मैं न सोच सका पर उसी समय क्लेरा न बताया कि डौरोथी को किश्तीनुमा टेबुल लम्प बहुत पसन्द आया।

किश्तीनुमा टेबुल लम्प ! एक छोटी-सी किश्ती उसके सफेद पाल और उसमे बठे हुए दो प्राणी, उनक ऊपर नीले बल्ब का मधुरिम प्रकाश। यह दृश्य जीवन के किस दृश्य का प्रतीक है ! किश्ती के चारो ओर अगाध जलराशि का चित्रण और उसमे बठ हुए व प्रेमी युगल कौन सी भावनाओ म तल्लीन थ और किधर बढे चले जा रह थ ? यह मैं आज भी नही सोच पाया हू पर न जाने कौन सी दिव्य प्ररणा इस उपहार को देखकर मन को भिगो गई, कह नही सकता ! क्या य अदृष्ट नियति के हाथ थ जो अज्ञात रूप से किन्ही के भविष्य

का नवार र, थ ? यह किसका भविष्य था ? क्या डोरोथी और मरा और तभी मुझे अटित की एक बात याद आ गई, जिसका तात्पर्य था कि कला की रहस्यमयता और उसकी विराटता गुप्तता म है। आर्टेस्ट सितारों थाम्।
ऽहीं विचारा म डूबा था कि नोनिमा न हाथ दबाकर डोरोथी की ओर विचित्र सकत किया जो कि हम बुला रही थी। अब उसके मम्मी और पापा तथा डॉक्टर करता अतिथियों का विदा कर रह थ।

डोरोथी न अपना पाध, आन ना सकत किया और हम दूसरी मंजिल क एक कमरे म स गई। कमर क सामने ही छत पर ग्रीष्म-पूर्णिमा की निर्मल ज्योत्सना जस ग्रीष्म क सम्पूर्ण प्रभाव का तिरोहित कर रही थी और हम एक विचित्र स्वप्नलोक क लिए आमंत्रित करती प्रतीत होती थी। मुझे लगा कि डोरोथी क मन म भी ऐसी ही दूधिया चादनी रानि रानि रूप म छिटकी त रही थी और उसके मन का मीत बना चद्रमा दूर आकाश म क्या मरी ही प्रतिच्छवि का प्रतीक नहीं था !

मसनी जन्म दिन तो अब मनाया जा रहा है नीनी न अपनी सखी क कंधे पर हाथ रखत हुए कहा। सचमुच भीड म मैं सकपकाया हुआ था और उस विशिष्ट दिन क उल्लास की पीठ म कुछ-कुछ असमय भी था पर अब मैं प्रहसित हाकर उस अननुभूत उल्लास का सहभागी हो पान करन लगा और मुसीबत यह थी कि ज्यों ज्यों पीता जाता था त्यों त्यों प्यास बढ़ती जाती थी। क्या यह प्रणय की वारुणी थी जो मेरे कठ को तप्त करती जा रही थी और जग मैं साकी से कह रहा होऊ भर भर क पिलाये जा जाम !

नोनिमा ने डोरोथी की सेहत का जाम पीया और मुझे भी छक-छक कर पिलाया। मुझे लगा कि नीनी मुझ से भी अधिक भावुक है क्योंकि यह अपनी सखी क ज म दिन क उपलक्ष्य म एक फिल्मी गाना गा रही थी तुम जीओ हजारों साल और हर साल क दिन हों एक हजार !'

नगीन के इस मधु आसव का मुझ से अधिक डोरोथी पी रही थी। कसी दिन एक आत्मीयता थी इन सखियों म ! यद्यपि म वहीं कुछ ठहरना चाहता था पर फिर भी मैंने औपचारिकता का निर्वाह करते हुए यही कहा डोरोथी अब हम विदा दो क्योंकि इस समय साढ़े-दस बजा चाहत हैं।

वास्तविकता क इस बोध स डोरोथी को या लगा कि जस कोई प्रहरी असमय ही समय का डका बजा बठा है ! आखिर समय किन्हीं क लिए क्या रुकन लगा, वह तो अपनी ही गति बढ़ता ही जायगा उस कौन रोक सकता है ! इसी लाचारी की मानसिक अवस्था म हम तीनों नीचे आय जहाँ

कि डाक्टर क्लेरा मम्मी और पापा तथा दो चार अन्य व्यक्ति कालाकोना पी रहे थे। डॉक्टर क्लेरा ने हर्ष विनोद के साथ कहा "ओहो! डाक्टर नीहार, डौरोथी और नीलिमा, तुम अलग कसी खिचडी पका रहे थ!" इससे पूर्व कि हम कुछ जवाब देते सिस्टर फ्रकलिन एक हिन्दी के मुहावरे को याद करती सी कहने लगी "इनकी मथुरा तीन लोक से न्यारी है!" कह कर जसे व हम पर आशीर्वाद की मागलिक वर्षा करने लगी।

इन टिप्पणियों का डौरोथी के मुख पर न जाने कसा प्रभाव पडा, पर नीलिमा अब भी निष्प्रभाव थी और कह रही थी

डॉक्टर हर उमर अपना रास्ता अलग ही निकालती है, आप बुजुर्गों के बीच हमारी दाल कसे गल सकती थी!"

दटस ग्राल राइट! (हां यह ठीक है)" कहते हुए क्लेरा ने एक एसा ठहाका लगाया कि उसकी छाया म हमने अपना रास्ता नापा और घर की ओर चल पड।

दूधिया चान्दनी वियोग के प्रशस्त राजमार्ग पर शिथिल होकर पसरी थी और बगले के फाटक पर खडी डौरोथी अपने दो अनन्य मित्रों को विदा कर रही थी।

भारी मन और भारी पग, उस डग पर बढाते हुए, मैं और नीली अपने रास्त पर बढे चले जा रह थे। पलक मारते ही हम अपने क्वाटर के समीप थ जहा विश्रान्तिदायक बिस्तरा हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। नीलिमा चारपाई पर पडते ही सो गई पर मेरी आखो म नींद न थी!

☐ ⅃

४

जीवन म सयोग और तज्जनित सुख एव उल्लास ही नही है, वहा इसका दूसरा प र भी है। समय पर वियाग और तज्जय सताप भी आता है। सर सपाटे और मिलने जुलने मे ग्रीष्मावकाश बीत गया। अब वर्षारम्भ के साथ ग्रीष्म का उत्ताप कम हो गया था और स्कूल तथा कॉलेज खुलने लग थ। मैं भी छुट्टिया बिताकर कॉलेज जान की तयारी कर रहा था कि पीछ स चुपके चुपके आकर किसी न मेरे नयन मूद लिए। मैंन सोचा ऐसी शरारत लाली के सिवाय और कौन कर सकता है!

यह क्या मुसीबत है नीली हर समय तुम्हें शरारत सूझती है। खोलो आखें जल्दी स नहा तो तुम्हारी अगुलियाँ चीथ दूगा।

इस चुनौतीपूर्ण धमकी का कोई प्रतिकार किया गया और हाथों की जकड और दृढ हो गई। मुझे लगा कि पकडने वाली हस भी रही है पर भेद खुलने के डर से जस हसी को कद कर रखा है।

इस मौन ने मेरे धय को समाप्त कर दिया और मैं क्षोभ के साथ अपने नाखूनों का दन्ता स परिपूर्ण कर उन पकडन वाले हाथो पर धावा बोल बैठा। पर यह क्या, य ता नीली क हाथ नही थ इनकी कोमलता उगलियो का पतलापन और सुरभि कुछ भि न थी। हैरत म आ गया मैं और मैंने उन्हे बलपूवक अलग कर दिया।

देखा ता नीली नही उसकी सखा डौरोथी थी। उफ मैं शर्म और आत्मग्लानि स लाल हो गया और उस मीठी पकड़की शरारत मुझे बडी भली लगी। डौरोथी का तमतमाया चहरा उसके आरक्त कपोल और शरारत स अटखेलियाँ करती हुई उसकी आखें मेरी स्मृति म सदा सदा के लिए बस गई हैं।

आप तो नाहक ही नाराज हो गये। क्या नाखून इतनी जल्दी धीरज खो बैठते हैं? ठहाके के बीच कहा डौरोथी ने फिर कुछ साँस लेकर कहने लगी चुपके चुपके कहा की, तयारी हो रही है डाक्टर? हमें तो कानो कान खबर नही लगा और आप चलने की तयारी करने लग।

इस वाक्य म कुछ एसा उपालम्भ था कुछ एसी करुणा थी कि मैं एकबारगी ही कोई उत्तर न दे सका। डौरोथी के नयनो म जसे वेदना की नीलाम

प्रवाहित हो रही हो और पलक मारते ही क्या देखता हू कि नीलकमल सी वे आखें अश्रुसिक्त हो आई हैं।

"डौरोथी तुम्हे तो मालूम ही है कि अब कॉलिज खुलने वाला है और मुझे अब जाना ही होगा।" सफाई देते हुये मैंने कहा।

मैं आगे यह भी कहना चाहता था कि मुझे सख्त अफसोस है कि मैं इससे पूव तुम्हें सूचित नही कर पाया, पर न जाने क्यो, किसी ने गले को पकड लिया था और मैं अपनी भावुकता मे स्वय ही भीग गया।

" ता चुपके चुपके कूच करने की स्कीम बनायी जा रही है। मैं कोई रोक थोड ही लेती डाक्टर!" एक अभियोग के से स्वर में उसने कहा।

'नही ऐसी बात नही है मैं तयारी करके सबसे पहला काम यही करता कि तुम्हें सूचना देता" स्पष्टीकरण के स्वर मे कहा मैंने, "और देखो तुम्हें यकीन न हो, तो वह देखो मैंने तुम्हारे लिए खत भी लिख रखा है और वह इस शत पर दे सकता हू कि तुम उसे अकेले म घर जाकर ही पढोगी।'

कहने को तो मैं कह गया पर स्वय ही अपने कहे पर सकुचित हुआ और हिम्मत नही कर पाया कि मेज पर रखे हुए उस पत्र को उसे दे दू। वह मेरी मन स्थिति को सभवत ताड गई थी, देखता हू कि उसने आगे बढकर वह खत अपने ब्लाऊज मे दबा लिया।

ओहो यहा तो बडी तयारियाँ हो रही हैं, मिलाप हो रहा है, दो बिछुडने वाले प्राणियो का। क्या मैं आपकी बातो में कुछ हस्तक्षेप कर सकती हू?" कहते हुए आ धमकी नीली, उसके हाथ म नाश्ते की प्लेट और लस्सी का गिलास था। कहने लगी 'अपनी सहेली के लिए मैं अभी लाती हू।"

पर तब तक मैंने अतिथि के सम्मुख वह प्लेट और गिलास बढा दिया था, जिसे लेने मे आना-कानी की जा रही थी। एक बिछुडते हुए साथी की क्या इतनी अदना सी इच्छा का पूरा नही करोगी डौरोथी? मैंने बड अनुनय के साथ उसकी आखो म झाकते हुए कहा।

नीली तब तक सभी आवश्यक सामग्री ले आई थी और हम तीनो विचित्र उल्लासपूर्ण भावो मे डूबे ग्रीष्म के उस प्रभात म गप शप कर रहे थ। बातो ही बातों मे मैंने बताया कि मैं उस जन्मदिन क सम्मान और स्नेह के लिए अतीव कृतज्ञ हू और एसे अवसरो पर आगे भी नही भुलाया जाऊगा ऐसी उम्मीद है।

सखियों मे फिर जो बातचीत आरम्भ हुई तो जसे मैं भुला ही दिया गया,

पर मां ग्रांग चुराकर रमा ि डोरोथी जान की जल्दी म था ग्रौर नैस काट उत्सुकता उमके चरणा का टकेल रही थी। जाने समय उसने मुभम विन ला ग्रौर ग्राश्वासन दिया कि सन्ध्या को वह डा० वनरा या अपनी मम्मी क साथ मुझे स्टेशन पर सी ग्राफ" करने ग्रायगी।

डोरोथी घर लौटी ता वहा पर कोई न था ग्रौर डाक्टर वनरा क नौकर न उस घर की चाबी दी। ग्रपना कमरा खोलने पर सबसे पहला काम जा उसने किया वह था पत्र का पठन ग्रौर पुनःपठन

मेरे मन के मीत !

विदा हो रहा हू तुमसे फिर मिलने की साध लिये। न्यो कब मिलना होगा है ! मैं मीठी स्मृतियों का एक सागर लिए जा रहा हू जा मुझे प्रतिपल इस बात का एहसास करवाता रहगा कि प्रेम ग्रमर है ग्रौर उसकी शक्ति ग्रपराजेय है !

प्रेम एक सतत् ग्रौर निर्बाध प्रेरणा है। मेरे प्रत्येक कार्यारम्भ म तुम्हारी स्मृति महकती रहेगी। मन की एकात ग्रमराई में तुम्हारे स्नेह की कोयलिया कूजती रह प्रतिपल निर्बाध ग्रौर निर्व्याज यही मेरी कामना है।
कह नहीं सकता तुम्हारे हृदय म मेरे लिए क्या विचार हैं पर मैं तो तुम्हारे प्रति समर्पित हू और यह सब-कुछ इतना ग्रनायास हुग्रा है कि मुझे विस्मय होता है।
क्या हम दोनों की रचना एक दूसरे क लिए नहीं हुई है ? उम्मीद करता हू कि तुमने गात्र ही सुनने को मिलेगा। लिखना तो बहुत कुछ चाहता हू पर ग्रभी इतना ही

शप तुमसे सुनने पर। क्या मैं उम्मीद करू कि निम्न पते पर तुम्हारा पत्र मुझे ग्रवश्य मिलेगा ? ग्रलविदा डार्लिंग !

सदैव तुम्हारा ही
नीहार।
कमरा न० ४१ मेडीकल कॉलेज होस्टल
जयपुर।

पत्र को पुन पुन पढ़कर भी डोरोथी का मन नहीं ग्रघा रहा था। वह सचमुच प्रणयावेग म भीग सी गई थी। उसने खत को सुरक्षित स्थान पर रखा ग्रौर उसी समय उत्तर लिखने को बैठ गई। उसकी स्मृति म पत्र का ग्रक्षर ग्रक्षर ग्रंकित था। भावनाएं कुछ ऐसी उमड घुमड रही थी कि दिना बरसे उन्हे चैन कहा !

उदयपुर,
दिनांक ५ जुलाई

"मेरे जीवन सर्वस्व,

आपके स्नेहपूर्ण पत्र के लिए आभारी हूँ। मेरे अहोभाग्य कि आपने मुझे अपने हृदय मे स्थान दिया !

मैं आपकी भावनाओ के अनुरूप अपने को ढालने का प्रयास कर रही हू। सचमुच, अवकाश के दो माह ऐसे बीते कि दो घण्टो मे ही जसे वे समाविष्ट हो गये हो।

आपकी अनुपस्थिति एव अभाव की जब कल्पना करती हू तो हृदय मुँह को आने लगता है। ये वियोग के पल कसे कटेंगे, सोच नही पा रही हूँ। आपका प्रेमपूर्ण ममत्व पाकर मैं सब कुछ पा गई हू जसे अब कुछ शेष नही रहा है !

प्रेम के सम्बन्ध म जो अनुभूति-रजित विवरण आपके पत्र म है, वह आपकी सदाशयता का द्योतक है। किन्तु मेरे प्रियतम, आप इतने भावुक न बनें। मैं कभी भी नही चाहूगी कि आप मेरे कारण कर्त्तव्य च्युत हो। मैं आपके पावो की बेडी नही अपितु सतत् निष्कलुष प्रेरणा ही हुआ चाहती हू।

मेरे ईश्वर, मुझे शक्ति दे कि मैं अपने को आपके योग्य बना सकू।

इसी प्रकार, समय-समय पर लिखते रहेंगे, ऐसी आशा है। अपने हृदय का समस्त स्नेह आपके चरणो म अर्पित करती हू।

सदव आपकी ही,
डौरोथी।"

लिखने को तो यह सब लिख लिया गया, पर इसे देने का सुयोग पत्र लेखिका न पा सकी। सन्ध्या को मैं जब अपने मित्रो से घिरा प्लेटफाम पर खड़ा था, तो देखता हूँ कि डा० क्लेरा के साथ डौरोथी मेरी ओर बढ़ी चली आरही है।

मित्रो से चन्द मिनटो की रुखसत माग, मैंने उन दोनो का तपाक से स्वागत किया। डा० क्लेरा उस समय विनोदपूर्ण गाभीर्य का भव्य उदाहरण बनी हुई थी और डौरोथी के नयन सूचना दे रहे थे कि वे जसे अभी-अभी बरस कर आये हो। उनमे घुले हुए आकाश की सी निर्मलता थी और चेहरे पर उनका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था। डौरोथी की उस समय की मुखमुद्रा देखकर मुझे एक बहुत पुराना चित्र याद हो आया अश्रु सिक्त सौन्दर्य (ब्यूटी इन टीयस)।

औपचारिकता की बातें हुई और मैंने डा० क्लेरा के प्रति अपना बहुत आभार जतलाया। अब तक मित्र भी निकट आ गए थे और मह मिश्रित समाज मेरे प्रति अपनी शुभकामनाएं प्रकट कर रहा था कि इंजन ने सीटी दी। तब एक हृसाड मित्र ने मुझे कमर से पकड़ कर उठा लिया और वस्तुस्थिति के प्रति जागरूक रहने का सकेत किया।

ट्रेन सचमुच चल पड़ी थी और स्टेशन पर खड़े अगणित रूमाल मुझे विदाई दे रहे थे। मैं भी खिड़की में खड़ा उनको प्रत्युत्तर दे रहा था तभी देखता हूँ कि दो निर्निमेष नयन गीले हो गए हैं और मुझे भाव भीनी विदाई दे रहे हैं।

इस विदाई के अवसर पर न जाने जी कैसा हो आया! बड़ी विचित्र भावनाएं मन में डूबने उतराने लगी। डोरोथी के मन पर क्या बीत रही होगी इसकी मैं सहज ही कल्पना कर सकता हूं। ट्रेन ने अब गति पकड़ ली थी और उसके साथ ही साथ मेरा मन भी पर्गे मारने लगा था। स्टेशन पर स्टेशन आते जा रहे थे, पर मेरा मन अब भी डोरोथी के नयनों के स्टेशन पर खड़ा था और वहां से टस से मस नहीं हो रहा था!

उस विदाई की याद आज तक प्राणों में उथल पुथल मचा देती है इससे पूर्व मुझे ऐसी अनुभूति कभी नहीं हुई थी। प्रिय का वियोग कितना दुःखदायी होता है मन की शान्ति को कचोटने वाला होता है यह आज मैंने पहली बार अनुभव किया।

इंजन के साथ मन भी धर धर करता रहा और न जाने कब बेसुध होकर निद्रालीन हो गया कह नहीं सकता। सुबह जगा तो पलकें भारी थी और जयपुर का नवनिर्मित भव्य स्टेशन मेरा स्वागत कर रहा था।

□□

५

मेडिकल कॉलिज में नई चहल पहल है। सर्वत्र एक उल्लास और वचित्र्य दृष्टि गोचर हो रहा है। प्रथम वर्ष में जो नये चेहरे दिखाई दे रहे हैं उन्हें खूब बनाया जा रहा है। कॉलिज के अनुभवी एवं प्राचीन विद्यार्थी इस समय अपनी शरारतों के शीर्ष पर हैं। न जाने क्या इस सारी हलचल में, मैं कभी दिलचस्पी न ले पाया। पिछले चार सालों से यद्यपि मैं यह सब देखता आ रहा हूँ, फिर भी कभी बढ़-चढ़ कर भाग नहीं ले सका और न अब लेना चाहता हूँ किन्तु इससे क्या! एक मेरे अकेले की तटस्थता, क्या अर्थ रखती है? जीवन में हलचल और गुलगपाड़ा तो होगा ही, वह मेरे रोके रुक नहीं सकता।

मैं अपने कमरे में बैठा हुआ हूँ। छुट्टियों के दृश्य एक एक कर मेरी चेतना में तैर रहे हैं तभी क्या सुनता हूँ कि बाथरूम में एक लड़के को बन्द कर दिया गया है और वह बेचारा उसमें छटपटा रहा है। किन्तु दरवाजा कोई नहीं खोलता। व्रजबिहारी बड़ा शरारती लड़का है। उसने गुसलखाने के झरोखे में से झांक झांककर अन्दर वाले नये विद्यार्थी को बनाना आरम्भ किया 'क्यों बे, पेट में चूहे तो दण्ड नहीं पेल रहे? अरे मियां डाक्टर बनना कोई हंसी-खेल थोड़े ही है। ये सब पापड़ बेलने ही होंगे।

अन्दर वाले विद्यार्थी की घिग्घी बंध गई है और वह तौलिया लपेटे अन्दर से ही अनुनय विनय करता है "अरे भई अब तो छोड़ दो। इस पिंजरे में कब तक पर फड़फड़ाऊँ, कि भूख तो खूब लगी हुई है, इसमें क्या शक है!

व्रजबिहारी ने मुँह बनाते हुए जवाब दिया अरे यार, आज तो पानी पर ही रहो, घर से जो कुछ अनापशनाप खाकर आये हो वह सब पच जाना चाहिये। उसके बिना पचे डाक्टरी का ज्ञान नहीं हासिल हो सकता।" तभी नीचे से महेश कौल ने एक भूठी थाली व्रजबिहारी को पकड़ा दी और कहने लगा "अरे बेचारे को भूखा क्यों मारते हो? यह हत्या तुम्हें ही लगेगी।" कहते हुए उसने वह थाली व्रजबिहारी को झरोखे के बीच में से नीचे पकड़ा देने का संकेत किया।

मैंने सुना कि विद्यार्थी को कुछ धैर्य प्राप्त हुआ। वह बेचारा अनुभव करने लगा कि पापियों की लंका में कोई न-कोई तो हितचिन्तक है पर उसे क्या मालूम था कि इस हितचिन्तन में भी एक क्रूर व्यंग्य था!

अन्दर वाला विद्यार्थी बड़े पशोपेश में पड़ा है कि अब क्या करें? धर्मसंकट में यदि भोजन ग्रहण करता है तो हँसी का पात्र बनता है, और यदि उसे ग्रहण नहीं करता है, तो भूख के मारे उसे दिन में ही तारे दिखने लगेंगे। उसे बन्द किये दो घण्टे हो चुके हैं पर कोई उसे नहीं खोल रहा है।

अब मेरा धीरज भी टूट गया है और मुझ से यह सब नहीं देखा जा रहा है। मेरे पास एक गादरेज के ताले की चाबी थी मैंने सोचा कि खुदा न ख्वास्ता मेरी यदि यह चाबी लग गई तो बेचारे अभागे छात्र का बेड़ा पार लग जायगा। सब लोग उसे इतनी देर परेशान करके ऊब कर चले गये थे। अब वहाँ सन्नाटा था। मैंने चुपके से दरवाजा खोल दिया और उसे बिना शोर मचाये ही जाने का संकेत दिया। वह विद्यार्थी कृतज्ञता के आँसू मन में सजाये हुए चला गया और जाते-जाते मुझे ऐसी दृष्टि से देख गया कि जैसे मेरे इस उपकार के लिये अतीव कृतज्ञ है और सात जन्मों में भी जैसे वह उऋण न हो पायेगा।

दुःख से छुटकारा दिलाने के कारण उस विद्यार्थी को मेरे प्रति अगाध सहानुभूति हो गई थी और वह मुझे बड़े आदर के साथ भाई साहब कह कर बुलाया करता। जब ब्रजबिहारी का शरारती दल दो घण्टे सोकर वहाँ फिर आया तो उनके होश फाख्ता हो गये थे। चिड़िया खेत को चुग कर उड़ चुकी थी। हर एक एक दूसरे से पूछ रहा था कि आखिर यह हुआ कैसे? यह जरूर किसी घर के भेदी के कारनामे हैं।

मेडिकल कॉलेज का जीवन बड़ा व्यस्त है। नाश्ता करके सुबह ८ बजे से ही लेक्चर्स (व्याख्यान) और प्रेक्टिकल्स (व्यावहारिक कार्य) प्रारम्भ हो जाते हैं। बारह बजे लंच के लिये एक घंटा मिलता और फिर हम अपने मोर्चे पर आ जुटते हैं। ५ बजे तक यही क्रम चलता है कहीं अस्थिपंजर के सामने खड़े हुए और प्रोफेसर के पोस्टर का अनुसरण करते हुए शरीरविज्ञान का मर्म समझते हैं कहीं पोस्टमार्टम रूम में (मुर्दे की चीर फाड़ का कमरा) मुर्दे को चीर फाड़ कर शरीर की आंतरिक स्थिति का परिज्ञान करते हैं और विभिन्न अंगों के कार्य एवं महत्त्व से अवगत होते हैं। यहाँ आकर मेरी सम्पूर्ण सौन्दर्य चेतना विलुप्त हो गई और निर्गन्ध मृतक शरीरों में भी मुझे काल्पनिक दुर्गन्ध आने लगी। इस कमरे में कोई लिंग भेद नहीं है। पुरुष और नारी अंगों को छात्र और छात्रायें निस्संकोच देखते हैं और एक दूसरे की ओर शरारत भरी निगाहों से देखकर कागज की गोलियाँ भी मारते हैं। कभी-कभी छात्रों के कपोल पर चाक का एक हल्का टुकड़ा लग जाता है और तब सब भेदी निगाहें

स एक दूसरे को देखते हैं। छात्रा इतनी निश्चेत हो जाती कि काटो तो खून नहीं!

मैं सदा अपने काम से काम रखता था और इन तमाशों से दूर अपना ही स्थानीयुनाव पकाया करता था। इसीलिए मेरे साथी मुझे दार्शनिक कहा करते और मेरे अफलातूनी चेहरे पर व्यंग्य किया करते। कुछ विद्यार्थी तो मुझे बिलकुल काल्पनिक प्राणी ही समझते, किन्तु मेरे सम्मुख उनका मुंह इसलिए नहीं खुल पाता कि मैं अपनी कक्षा का मधावी छात्र था और सभी न चाहते हुए भी मुझे आदर की दृष्टि से देखा करते।

दफ्तर से एक चपरासी ने आकर मेरे नाम की चिट दी, मेरा कोई 'एक्सप्रेस डिलीवरी' का पत्र है और डाकिया निजी हस्ताक्षर के लिए मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। दफ्तर में आया तो मिला एक नीला लिफाफा जिसकी प्रफुल्ल लिपि मेरी चिरपरिचित थी और मुझे लगा कि अज्ञात रूप से मैं इसी की प्रतीक्षा में था। 'मजमून भाप लेते हैं लिफाफा देखकर" वाली कहावत मुझ पर लागू हुई और मैंने उसे बिना खोले ही पेंट की जेब में रख लिया।

कक्षा में पहुंचा तो डाक्टर चटर्जी मुझे ही याद कर रहे थे। वे किसी क्रियात्मक प्रयोग में मेरी गलती बताना चाहते थे कि मैं पाया गया नदारद! खुश किस्मत समझिये कि मैं तुरन्त वहां पहुंच गया और डाक्टर चटर्जी के सम्पूर्ण निर्देश को बड़े मनोयोग से सुनने लगा। किन्तु यह मनोयोग आरोपित एवं कृत्रिम था क्योंकि वास्तव में मेरा मन नीले लिफाफे के गुलाबी रहस्य को जानने के लिए बेताब हो रहा था, ज्यों-त्यों करके पांच बजे और कॉलेज के कत्लखाने से छुट्टी हुई। अब मैं होस्टल के अपने कमरे में था। अब पेंट में से नीला लिफाफा निकाल कर पढ़ रहा था और महसूस कर रहा था एक वियोगी हृदय की तड़पन और मजबूरी भरी धड़कन को। मुझे लगा कि यह पत्र नहीं है बल्कि किसी का धड़कता हुआ हृदय है। सहसा अमरिकन महाकवि वाल्ट ह्विटमन की वह टिप्पणी याद हो आई, जो उनके आलोचकों ने उनकी कृति 'लीव्ज आन द ग्रास' पर प्रकट की थी यह पुस्तक नहीं है यह तो एक जिन्दा इन्सान का धड़कता हुआ दिल है, जो अपनी मार्मिकता से पाठक की आत्मा को पूर्णतः भिगो देता है और इसी से मिलता-जुलता स्वयं कवि का व्यक्तित्व था।

क्या रौशोथा के इस नीले लिफाफे के प्रति मैं भी वाल्ट ह्विटमन के उद्गारों को अक्षरशः सत्य होता हुआ नहीं पाता हूं!

इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था कि महेश कौल ने पीछे से कंधे पर हाथ मारते

हुए कहा 'डाक्टर नीहार'! कमरे में बैठे बैठे क्या मक्खियाँ मार रहे हो? आओ टेनिस के दो-दो हाथ हो जायें और तब मैं टेनिस कोर्ट पर मैच में उसी तरह संलग्न था, जैसा कि जीवन के प्रारम्भ में मैंने अपने बचपन के चंचल नेत्रों से डाक्टर सिन्हा, शर्मा और बड़ी डाक्टर गार्गी को देखा था।

तब और अब में कितना अन्तर था! उस समय सोचा करता था कि जो लोग ऐसी शान शौकत से खेलते हैं, वे जरूर देवपुरुष और देवकन्यायें होंगी, पर आज जब मैं स्वयं उसी स्थिति में खेल रहा था तो मुझे वह उल्लास और कौतूहल प्राप्त न हो सका जो कि बचपन के उन नटखट दिनों में सहज ही प्राप्त हो जाता था। संभवतः जीवन का क्रम कुछ ऐसा ही है कि जो वस्तु अप्राप्य होती है हम उसका अधिक मूल्य आंकते हैं। प्राप्य वस्तु सहज ही हमारी उपेक्षा की पात्र हो जाती है।

सचमुच वे दिन कितने अजीब थे जबकि हम दृश्य न होकर द्रष्टा थे और दृश्य स्थिति का अन्तर दृश्य के आनन्द में बाधा प्रस्तुत करता था। जब स्वयं अभिनेता मंच पर प्रस्तुत होता है तो अपनी गतिविधि एवं भंगिमा का स्वयं ही आस्वादन नहीं कर सकता तब दृश्य का आनन्द गूंगे का गुड़ हो जाता है जिसका यद्यपि हम आस्वादन कर रहे हैं किन्तु जो इतना यान्त्रिक है कि स्वयं ही उससे हम अप्रभावित रह जाते हैं। इससे एक परितृप्ति जरूर हुई और वह यह कि जीवन यात्रा में, मैं काफी कुछ आगे बढ़ आया हूं और मन अपनी मंजिल को बहुत कुछ पा लिया है। अब मैं गर्व के साथ छाती फुला कर यह अनुभव करता हूं कि मैंने अपनी माता के स्वप्न को साकार करने में एक सपूत जैसा ही आचरण किया है।

हॉस्टल का भोजन-कक्ष। डाइनिंग हाल में बैठा मैं अपने मित्रों से गपशप कर रहा हूं। आरम्भ से ही मेरी आदत कुछ ऐसी है कि बोलता कम हूं सुनता अधिक हूं।

अरे यार, इस साल तो सेशन (सत्रारम्भ) की शुरुआत कुछ डल (फीकी) सी रही। कोई बड़ा हादसा (घटना) नहीं हुआ। जब हम प्रथम वर्ष में आये थे तो हमारे आकाओं ने हमें बड़ा छकाया था।' यह शरारतियों के सरताज महेश कौल का वक्तव्य था।

नई पीढ़ी के प्रति पुरानी पीढ़ी का कुछ ऐसा ही रुख रहता है। हमारे प्रोफेसर कहा करते हैं ना कि हमारे जमाने में एज्यूकेशन के स्टेंडर्ड (शिक्षा स्तर) बहुत ऊंचे थे और अब वे निरन्तर नीचे गिरते जा रहे हैं, कुछ ऐसी ही बात इस मामले में भी है। चुटकी लेते हुए मैंने कहा।

पास ही बैठे हुए हरीश न, जो कि अब तक हमारी बातों को गौर से सुनता रहा था, कहा 'जमाने की रफ्तार कुछ ऐसी ही है। पुरानी पीढी नई पीढी को इसी प्रकार कोसती है।"

"अमा। फरक वरक कुछ नही हुआ केवल अन्तर इतना ही है कि पहले हम सताये जाते थे और अब हम सताने वाले हो गय। इसीलिये हमारा नजरिया (दृष्टिक्रम) ही बदल गया है।' बडे दार्शनिक लहजे म डाक्टर ब्रजबिहारी शर्मा बोले।

ऐसा ही बातचीत के बीच खान-पान होता रहा और तभी डिनर की समाप्ति की घण्टी बजी और हम सब अपने अपने कमरो म थे।

अब इस एकातलाक मे नीले आसमान के लघु रूप मे मुझे फिर वही नीला लिफाफा दिखाई देने लगा और मैं उसकी इबारत को बार-बार पढने लगा। भावनायें कुछ ऐसी तीव्र थी कि मैंने अपने नित्य के अध्ययन काय को ताक पै रखा और पड लेकर दूरस्थ प्रियतमा को पत्र लिखने बैठा। बदनसीबी कुछ ऐसी रही कि पत्र पूरा नही हुआ और बिजली गुल हो गई। सोचता हूँ यह होस्टल का जीवन भी कितना अजीब है! कितना रैजीमैंटेशन! (बधा हुआ!) यहाँ अपनी इच्छा पगु है आपको उस साचे में अपने आप को ढालना ही होगा अन्यथा आप कही के न रहगे। मोहब्बत से भरे हुये पत्र लिखने वाले को कहा पता था कि होस्टल की बत्ती १२ बजे गुल हो जाया करती है। यह वहा का नियम है और मैं इसका अपवाद कसे हो सकता हूँ!

□□

जीवन अत्यन्त विचित्र एवं बहुमुखी है। कभी कभी अनायास ही ऐसी घटनायें घट जाती हैं कि हम सोचते ही रह जाते हैं और उनमें कोई तारतम्य स्थापित नहीं कर पाते। मैं फाइनल का विद्यार्थी था और हाॅस्पिटल में हाउस सर्जन की ट्रेनिंग ले रहा था कि एक अजीब घटना घटी।

एक प्रात जब मैं अपने वार्ड के दौरे पर था मुझे स्वच्छ वस्त्रों में लिपटी एक लम्बी दीर्घ नौजवान सी युवती अपनी ओर आती हुई दिखाई दी। उसके व्यक्तित्व में कुछ ऐसा सम्मोहन था कि उसे सहज में अनदेखा नहीं किया जा सकता। उसके मुख पर चिन्ता की रेखायें स्पष्ट थी और गंभीर चेहरा आग्रह और अधीरता का मिलाजुला रूप धारण किये था। निकट आने पर मैंने देखा कि वह गौर वर्ण है और उसकी आयु लगभग उन्नीस-बीस वर्ष की रही होगी।

"डाक्टर मेरी मम्मी को क्या आप तुरन्त नहीं देख सकते? वे बहुत बेचैन हैं। उनके पेट का आपरेशन तीन दिन पहले ही हुआ है।' घबराई हुई उस युवती ने मेरी ओर कुछ ऐसे अनुनय विनय की दृष्टि से देखा जैसे वह मुझसे किसी भी रूप में *नकारात्मक* उत्तर नहीं सुनना चाहती।

"चलिये, मैं अभी आता हूं। यह कह कर मैंने तीन-चार केस जल्दी-जल्दी निबटाये और उस युवती के निर्देशानुसार मैं काॅटेज वार्ड के २४ नम्बर के क्वाटर पर पहुंचा।

देखता हूं कि मरीजा बेचैन है और बतलाया गया कि उन्हें अभी अभी उल्टी हो चुकी है। मैंने उनकी नब्ज को देखा और हल्के हाथ से पेट को टटोला। टांके अभी कच्चे थे और उल्टी के कारण उनमें खिंचाव हो आया था, इसी कारण रोगिणी बेचैन थी।

मैंने उस युवती को आश्वासन दिया कि चिंता की कोई बात नहीं है। इन्हें अधिक हिलने डुलने न दिया जाय। युवती के मुख पर अंकित चिंता की रेखायें मिट चुकी थीं और अब उसके मुख का प्रत्येक अणु परमाणु मेरे प्रति आभार प्रकट कर रहा हो। अब तक उस युवती के डैडी भी आ चुके थे और उनसे जो कुछ ज्ञात हुआ उसका सार यही है कि मरीजा काफी अरसे से 'अपेन्डिसाइटिस से पीड़ित हैं कलकत्ता से कुछ ही दिन पूर्व यहां आये हैं और जामसर की जिप्सम

खान में मुखर्जी महाशय की मनेजर के रूप मे नई नई नियुक्ति हुई है। उन्होंने जयपुर के मेडिकल कालेज की तारीफ सुन रखी थी, इसलिय वे बीकानेर के हास्पिटल मे न जाकर सीधे यहीं आ गये थे। जो युवती मुझे बुलाने आई थी, उसका नाम वत्सला मुखर्जी बताया गया और उसने कलकत्ता विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी म बी० एस सी० (जीव विज्ञान) पास किया है।

बातचीत के दौरान यह भी मालूम हुआ कि उनका इरादा लडकी को मेडिकल कालेज मे दाखिल कराने का है। बीकानेर का मेडिकल कालेज अभी शैशवावस्था म है, अत वे लडकी के भविष्य की दृष्टि से यही दाखिला चाहते हैं। मुखर्जी मोशाय यह भी चाहते थे कि इस काय मे मैं उनकी मदद करू। उनकी कोठी अस्पताल के पास ही था, अत यदा-कदा जाना भी होने लगा।

एक सध्या, आकाश मे जब सुरमई बादल छाये हुए थे और यदा-कदा बिजली भी चमक जाती थी, तो न जाने क्यो मुझे एक अजीब उदासी ने घेर लिया। जिन्दगी के भूले-विसरे चित्र याद आ रहे थे, उनमें वेदना थी उल्लास था एव चाचल्य का अपूव सामावेश था। कुछ था, जो मुझे पकड रहा था। क्या था वह ? पुराने चित्र कुछ धूमिल हो रहे थे और नवीन चित्र उभर रह थे। अचानक ही मैं अपने आपसे पूछ बठा कि कसा अजीब दिमाग है, इसान का! इस जटिल समाज मे रहकर हम अनचाहे ही बहुत सी बातो से प्रभावित होते हैं और कभी कभी तो यह प्रभाव जादू की तरह सर पर चढ़कर बोलने लगता है। कुछ ऐसा ही परिवतन मैं अपने अन्दर भी पा रहा था।

अपन मन का विश्लेषण अधिक करू इससे पूव ही मुखर्जी मोशाय का सदेश आया कि यदि कष्ट न हो तो मैं सध्या की चाय उन्हीं क साथ पीऊ। कुछ आवश्यक बातें भी करनी है। मैं सोचने लगा कि मानवीय भाग्य को नियति कितने परोक्ष ढग से सवारती और बिगाड़ती है और घटनायें अनायास ही घटे चलती हैं!

तयार होकर ज्योंही मुखर्जी मोशाय के बगले पर पहुँचा, तो मुख्य द्वार पर ही मिली एक भव्य एव निरुपम आकृति! वत्सला मुखर्जी विनम्रता की साक्षात् प्रतिमा बन मुझे हाथ जोड रही थी। मैने उसके अभिवादन का उत्तर दिया और मुखर्जी मोशाय के बारे मे दर्याफ्त किया, जिसके उत्तर मे वत्सला मुझे अपन डाइग रूम मे ले गई और आराम से बिठाकर कहने लगी 'डैडी को अभी बुलाती हूँ।' इससे पूव कि वे कमरे को पार करें मैने उनकी मम्मी के बारे मे भी जिज्ञासा प्रकट की जिसके उत्तर मे उसने तनिक रुक कर कहा 'अब वे ठीक हैं और कि वे आपसे मिलकर, प्रसन्न होगी।'

कुछ ही पल में श्री धर्मेन्द्र मुखर्जी मेरे सम्मुख थे और उनके पीछे-पीछे श्रीमती मुखर्जी और वत्सला भी थी।

मैंने उठकर उनका आदर अभिवादन किया और कहा कि आज कैसे उन्होंने याद किया।

'डाक्टर नीहार, आज मैंने आपको इसलिए तकलीफ दी कि वत्सला के 'एडमिशन' के सिलसिले में आपसे कुछ जानकारी करनी थी। मिसेज मुखर्जी आपकी बड़ी तारीफ कर रही थीं। उन्होंने अनेक बार आपको चाय पर बुलाने के लिये कहा, पर मैं बड़ा भुलक्कड़ हूँ। आज ही आदमी को आपके पास भेज सका।'

मेहरबानी है मुखर्जी साहब, कहिये मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?

मुखर्जी बोलें, इससे पूर्व ही श्रीमती मुखर्जी ने बड़े स्नेह और आत्मीयता के साथ कहना आरम्भ किया डाक्टर, तुम्हारी उम्र भले ही कम हो पर तुम अपने काम में बड़े कुशल हो। तुम्हारी देखभाल यदि मुझे समय पर न मिल पाती तो मैं इतनी जल्दी ठीक न हो पाती। जुग जुग जीओ बेटा!' और देखता हूँ कि उनका वात्सल्यपूर्ण हाथ मेरे माथे पर था।

इस समय वत्सला मूक गम्भीर एवं मर्यादापूर्ण मुद्रा में बड़ी भली लग रही थी। उसकी उपस्थिति को मैं महसूस किये बिना न रह सका। इसीलिये मैंने उत्तर में केवल यही कहा माताजी, यह बात तो गलत है। आपको ठीक करने का श्रेय आपकी पुत्री को ही है।

मैंने देखा कि मेरे कहने से उस सौम्य मुख पर कुछ आड़ी तिरछी रेखायें अंकित हो गई थीं जैसे कि सोये हुए तालाब में ढेला फेंक दिया गया हो और उसकी तरंगें इधर से उधर चल गई हों!

हाँ तो डाक्टर नीहार वत्सला के बारे में आप क्या सोचते हैं? उसे मेडिकल कालेज में दाखिल कराया जाय या एम. एस-सी. करने दिया जाय? वैसे मैं और मिसेज मुखर्जी अक्सर बीमार रहते हैं और इसलिये हमें तो घर में ही डाक्टर की सख्त जरूरत है। कहिये आपकी क्या राय है?' मुखर्जी महाशय ने अन्तर्निरीक्षण करते हुए कहा।

मैंने देखा कि वत्सला अपने को ही चर्चा का केन्द्र बना समझ उठकर चली गई थी शायद वह चाय के लिये कहने गई थी क्योंकि जब वह लौटी तो एक श्वेत वस्त्रधारी सेवक के हाथ में चाय की ट्रे थी और उसके स्वयं के हाथ में मिठाई और नमकीन की कुछ प्लेटें थीं। करीने से एक गोल मेज पर उसने सारा सामान रख दिया और गर्म-गर्म चाय को प्यालों में ढालने लगी। उसका

यह कार्य इतना सुरुचिपूर्ण था कि मैं उसकी स्वागतशीलता, स्फूर्ति एव कार्य-पटुता से बडा ही प्रभावित हुआ। लम्बी लम्बी अँगुलियाँ, उसकी कलात्मक अभिरुचि की द्योतक थीं और उसके इकहरे चेहरे में बगाल की शस्यश्यामला भूमि के सतरगे चित्र थे। उसके व्यक्तित्व मे रेखांकन योग्य थे उसके व्रीडा-मिश्रित जलदकांतियुक्त नतनयन ! उन नयनो के आमन्त्रण को, उनके उल्लास को मैं अनुभव तो कर सकता हूँ, पर व्यक्त करना, मेरे सामथ्य से परे है।

मुझे लगा कि मुखर्जी महोदय की बात का उत्तर देना है, तभी मन ने जैसे एक झटका दिया, पर उसके प्रभाव को उपस्थित व्यक्तियों स छिपाने के हेतु चाय को बडी बेसब्री से पीने लगा और दूसरे ही क्षण प्याले को नीचे रखकर गभीरतापूवक कहने लगा मुखर्जी साहब, मेरा तो दृढ विचार यही है कि जिसे एम बी बी एस या एम एस-सी करना है, उसी को निणय की छूट दी जाय। हम यदि अपनी भावना को उस पर आरोपित करते हैं, तो ऐसा करना ठीक न होगा।'

'नहीं डाक्टर, वत्सला अबोध बालिका है और इस बारे मे वह कसे फसला कर सकती है। कहा मातृजनोचित भाव से मिसेज मुखर्जी ने।

माताजी, जब आपकी सुपुत्री डाक्टर हो जायेंगी, तब भी आप इन्हे अबोध समझती रहेंगी और ऐसी स्थिति में बतलाइये, आप उनसे कसे इलाज करवायेंगी ?' मैंने कुछ विनोद के भाव से कहा।

मेरी इस समयोचित टिप्पणी से वत्सला कुछ सकुचित-सी हो गई थी और भीत मृगी के समान वह अपने अबोध नयनो से जसे मेरे वक्तव्य का प्रतिकार कर रही हो !

'अरे भाई मा-बेटी की बात जाने दो, फैसला तो हम मर्दों को ही करना है कि बिटिया के लिये कौन-सा रास्ता ठीक रहेगा।' किंचित् गम्भीरता के साथ मुखर्जी महोदय बोले।

'डडी, मैं तो एम बी बी एस करना चाहती हूँ ताकि आपका और मम्मी का और आप जसे ही अनेक पीड़ित लोगो का कुछ भला कर सकू, क्यों डाक्टर है न ठीक बात !'—एक तीव्र कटाक्ष के साथ कहा वत्सला न, और निणय हो चुका था।

मेरे न न करते, उन लोगो ने बडे स्नेह व आग्रह के साथ चमचम, रसमलाई और राजभोग खिलाया। मुह इतना मीठा हो गया था कि उसके प्रभाव को

७

रात्रि को जब मैं अपने कमरे की ओर लौटा रहा था तो प्रतीक्षा करते मिले महेश कौल, व्रजबिहारी शर्मा और हरीश श्रीवास्तव। मुझे देखते ही उनके व्यंग्यबाण सध गये और वे एकाएक मेरे ऊपर बरस पड़े।

'कहाँ गये थे हुजरत ? आजकल तो जनाब के पख लग गये हैं।' कहा महेश कौल ने और व्रजबिहारी तथा हरीश ठहाका मार कर हँस पड़े।

'अरे मियाँ, तुम भी क्या सोचते हो। वह है न मिसेज मुखर्जी, उन्हीं को देखने गया था।'

'अरे यार तुम्हारी तकदीर तो बुलन्द है। तुम्हारी प्रेक्टिस तो अभी से चल पड़ी जब बाकायदा डाक्टर हो जाओगे, तो आसमान से बातें करोगे!' इस बार व्रजबिहारी ने कसकर व्यंग्य किया और मेरे कंधे पर हाथ दे मारा यार तुम्हारी आँखों म तो सुरूर नाच रहा है। क्या बात है, कुछ पीने-वीने का प्रोग्राम भी था क्या ? चपल व्यग्य के साथ हरीश ने कहा जैसे वह भी अपने साथियों से पीछे नही रहना चाहता था।

अम्या, यह सब कुछ भी नहीं था। तुम बेपर की क्यों हांकते हो ?' मैंने तनिक आक्रोश के साथ कहा और हरीश की पीठ पर धौल जमा दिया।

धौल लगा दिया किसी यांत्रिक प्रेरणा के वशीभूत, पर स्वयं ही सकुचित होकर कट-सा गया, क्योंकि चोर की दाढ़ी में तिनका था और वह रंगे हाथ पकड़ा गया था, फिर तनिक आश्वस्त होते हुए बोला 'दोस्तो, बेबुनियाद की बात करना छोड़ो। आओ तुम्हें चाय पिलाता हूँ और साथ मे एक बड़ी मजेदार चीज भी।'

भाई लोगों की उत्सुकता बढ़ी और उनके होठ चाय के लिये तड़प उठे। व्रजबिहारी तो अपने होठ पर जीभ फेरते हुए बड़ी नाटकीय मुद्रा मे पूछने लगा, 'यार वह मजेदार चीज क्या है। पहले उसका नाम बता!'

इस प्रकार मैंने व्यग्यवाहिनी सेना को कूटनीति से परास्त किया और उन्हें मजेदार चीज की रिश्वत दे, अपनी मुसीबत को टाल दिया।

अक्टूबर माह का अन्त था और वातावरण म गुलाबी सर्दी, मेंहदी लगे हाथ दिखाकर ललचा रही थी। लोग बाग दशहरे की छुट्टियों मे घर जाने का

कार्यक्रम बना रहे थे। इस बार क्लास में, मैं कुछ पिछड़ गया था, क्योंकि मेरा दिमाग पढ़ने की पटरी से कुछ नीचे उतर गया था। सोच रहा था कि दो सप्ताह की इन छुट्टियों में घर जाकर कमी को दूर करूंगा, पर मुझे क्या मालूम था कि वहां न जाने कैसी घटनायें कैसी विचित्र परिस्थितियां, मेरी प्रतीक्षा कर रही हैं !

मम्मी का खत आया था कि उनकी सेहत अच्छी नहीं रहती है और कि यदि संभव हो, तो मैं दो-तीन दिन पहले ही आ जाऊं। डौरोथी से समाचार मिला था कि उसकी मम्मी का तबादला जोधपुर हो गया है पर वे वहां न जायेंगी। पूना के सेंट जेवियस हास्पिटल में उन्हें एक अच्छा चान्स मिल रहा है, और वे वहीं जाने का निश्चय कर चुकी हैं। ये सब घटनायें इतने आकस्मिक रूप में घटीं कि मैं हक्का-बक्का-सा होकर अपना होश गवा बैठा।

'क्यों री नियति ! तेरी काली किताब में मेरे लिये क्या लिखा है ?' तभी हरीश के कमरे से एक दर्द भरी आवाज आई ... चल उड़ जा रे पंछी ... अब ये देश हुआ बेगाना ... ! ... तो क्या मेरा देश भी बेगाना होने जा रहा है ?

सोलह घण्टे के लम्बे सफर के बाद मैं अपनी गृहनगरी में था। यद्यपि मुझे अपनी प्रिय नगरी छोड़े अधिक समय नहीं हुआ था फिर भी न जाने क्यों मुझे सब कुछ नया-नया और बदला बदला सा नजर आ रहा था।

मम्मी को सादर अभिवादन करके मैं उनसे उनकी सेहत के बारे में पूछ ही रहा था कि आ गई डौरोथी ! उसे न जाने कैसे मेरे यहां पहुँचने की खबर लग गई थी यद्यपि मैंने अपने पत्र में उसका उल्लेख नहीं किया था।

उसके भीगे नयन मूक होकर भी वाचाल थे। उसका मूक संदेश अत्यन्त व्यथा-पूर्ण था, जैसे कह रही हो कि अब वह तो दूर चली ... अब क्या होगा हमारे उन स्वप्नों का जिन्हें हमने बड़ी मेहनत और चाव के साथ सजोया था।

मैं भी न जाने क्यों चुप था। मम्मी ने पूछा डौरोथी से, 'सिस्टर फ्रेंकलिन जोधपुर नहीं जा रही हैं ?'

'नहीं आंटी वे तो पूना जा रही हैं।'

'अरे यह मैं क्या सुन रही हूँ ? ऐसा क्यों।'

'वहां उन्हें प्रमोशन (पदोन्नति) मिला है और पूना में मेरे मामा भी रहते हैं।

'अच्छा-अच्छा यह तो बड़ी खुशखबरी है। खिलाओ मिठाई इसी बात पर ... '

अब डोरोथी कसे बतलाये कि बुजुर्गों की जो खुदासवगी है, वह उसकी मौत का पगाम है, अपने प्यारे सपनो से दूर जाने का सरजाम है। उफ ! तक्दीर कितनी वेदद है ! तभी अपने चेहरे की छाया को मिटाकर, उसने प्रसग बदलते हुए कहा "नीली आज कहा चली गई ? दिखाई नही दे रही !"

इस प्रश्न के उत्तर मे आवाज आई रसोईघर से, "डोरोथी ! अभी आ रही हूँ।"

"ओहो, आप यहा पर हैं ! अकेले-अकेले क्या खा रही हैं ?" और तब गभीरता, वेदना और गमी का ।वातावरण, चपलता एव हास्य मे परिणत हो गया। सबने मिलकर नाश्ता किया और एक दूसरे के कुशल क्षेम को पूछा।

आज जब मैं डोरोथी से मिलकर गया, तो कुछ उलझन, परेशानी और अनिर्णय, मेरे चेहरे पर स्पष्टत आभासित हो रहे थे।

'डोरोथी बचपन के घरौंदे जन्मदिन की चांदनी सी इठलाती रात्रि विदाई के भीगे नयन श्वेतपरिधान मे लिपटी वत्सला मुखर्जी उस सध्या की टी पार्टी, उसमें वत्सला का सभ्रमपूर्ण सौम्य व्यक्तित्व मुखर्जी का सलाह-मशविरा यार दोस्तों की मसखरी और मेरी मम्मी यह सब क्या है ? क्या जीवन एक चलचित्र है या छलचित्र जिन्दगी कुछ नहीं, दद की तस्वीर है हास्य, रुदन, अट्टहास, सयोग, कसे विचित्र ताने-बानो से बना है यह जीवन का पट ! आत्मालाप के रूप मे मैंने अपने आप से कहा।

मुझे याद आ रहा है वह पद कबीर का जिसमें उन्होंने जिन्दगी की चादर को झीनी-बीनी बताया है और कि उन्होंने उस चादर को वस-का वसा ही रख दिया, उस पर कोई मल व सलवट का चिन्ह नहीं है, पर मुझे लगा कि मेरी जिन्दगी की चादर पर सलवट भी पड गये हैं और दो एक स्थाना पर मल के दाग भी हैं !

मुझे लगा कि जीवन एक विराट महासागर है जिसमें न जाने कितनी सरितायें अपने अस्तित्व को विलीन कर देती हैं ! सागर की साथकता इसी मे है कि वह क्षीण शरीर सरितायो को आश्रय देकर उन्ह परमत्व प्रदान करता है तो क्या मैं सागर का अहकार अपने ऊपर ओढ़ू जिसमे डोरोथी वत्सला और न जाने कितनी और सरितायें आकर मिल जायेंगी, पर नही मैं नितान्त अपदाथ हूँ। एक शून्य जडवत् बिन्दु जो सागर की विराटता को अपने कधो पर नही लाद सकता ! उफ, यह कसी विडम्बना है, मैं क्षार-क्षार क्यो नही हो जाता।

रूप, आकषण, प्रणय समपण, मोह और ममत्व, आखिर ये सब क्या हैं ! बचपन से ही डोरोथी की छाया एक सगिनी के रूप मे मेरा पीछा करती रही है, क्या मैं उसे झुठला सकता हू ? यह निर्विवाद है कि बचपन का स्नेह एव

मत्री प्रगाढ़ होती है, पर क्या मैं अपनी जिन्दगी की सुनी किताब को अन्य युवतियो के लिए निषिद्ध ठहरा दूं! बताना चाहूं तो मैं उस बुनाने नहीं गया था। नियति की न जाने कौन सी प्रेरणा से वह मेरी जीवन धारा में तृही के फूल की तरह चू पड़ी! अभी तो इस जीवन-धारा के अनेक तट देखने हैं घाट घाट का पानी पीना है तो इस जीवन धारा को मैं कैसे बांधू जिसे आना है वह आयेगा ही जिसे जाना है वह जायेगा ही, पर मैं किसी के प्रति विश्वासघात तो नहीं कर सकता! अपने मन का मैं क्या करूं वह तो थर्मामीटर के पारे के समान द्रवणशील है द्रवणशीलता उसका स्वभाव है गति है और प्रकृति है उसमें अनेक छवियें प्रतिबिम्बित होती हैं और रूप को भूला यह मन उन्हें ग्रहण करता है। क्या यह पाप है अनतिकता है या चारित्रिक दुर्बलता है? दूर कोई चेतना के तट पर कहता है नहीं यह सब कुछ नहीं है। प्रकृति के आग्रह को उसके स्वरूप को उसकी मर्यादा को मैंने केवल स्वीकार भर किया है न एक तिल ज्यादा और न एक तिल कम! स्वभाव के तराजू के पलड़े सममात्र भी तो नहीं झुके हैं फिर तुम मुझे क्या रोकते हो? मुझे बहने दो पर मन की एक दुर्बलता है और वह यह कि वह वर्तमान के प्रति आसक्त रहता है आंखों से जो परे हो उसे विस्मृत कर देता है!

पर इस पल मैं यही सोच रहा हूं कि सिस्टर फ्रैंकलिन का तबादला-नहीं नहीं नवनियुक्ति मेरे भावात्मक जीवन के लिये एक चुनौती है और मुझे उसे स्वीकार करना ही होगा। भविष्य में क्या है मैं नहीं जानता! अतीत के मुर्दे क्या उखाड़ूं जिसमें जीवन की अप्रतिहत गति है वह तो बेला के फूल की तरह आधी रात को भी खिलेगा और तब मैं कवि बना कहूंगा बेला फूले आधी रात! तो गौराथी तुम्हें विदा दूंगा पर भूल जाने के लिये नहीं तुम्हारी याद को और भी तरोताजा करने के लिये क्योंकि वियोग में ही तो हम किसी का मूल्य आंक पाते हैं और उसकी स्मृति सच्चे अर्थों में साकार होती है जीती है और अंगड़ाई लेती है और तब किसी लता के समान सघन वृक्ष से लिपट जाती है!

□ □ □

आज रात्रि के दस बजे एक ऐसी घटना घटी है जो मेरे सम्पूर्ण अस्तित्व को झकझोर देगी जैसे आंधी और तूफान हो और मैं एक दुर्बल वृक्ष की नाइं उसके थपेड़ों को नहीं सह पा रहा होऊं। आज दस बजे की घण्टी के साथ मेरे नगर के स्टेशन से एक गाड़ी फक फक करती विदा होगी और उसमें बैठी होगी सिस्टर फ्रैंकलिन नये उत्तरदायित्व का आभास लिये उन्हीं की बगल में होगी, सहमी चिरया सी गौराथी भावनाओं में डूबी हुई और अपने

ग्राप मे खोई हुई, पास ही बठा होगा उसका भाई लॉरेन्स। डोरोथी को रोकने वाला मैं कौन होता हू ! वह जायेगी, उसे जाना चाहिय ग्रौर मैं उसे रोक नहीं सकता, केवल दुखी हो सकता हू ग्रौर वह तो मैं हू ही।

इसी उधेडबुन म पहुचा स्टेशन, जहा शत शत विद्युत प्रदीप आलोकित थे, वातावरण मे सर्दी का एहसास निरन्तर बढ रहा था, मुसाफिरो की ग्रच्छी खासी भीड इधर उधर बिखरी पडी थी, कोई लेटा हुग्रा था, तो कोई गा रहा था, तो कोई मिट्टी के सकोरे म चाय ही पी रहा था। ए एच व्हीलर के बुक स्टाल पर कुछ मनचले नौजवान 'फिल्म फेयर' ग्रौर 'स्क्रीन' के पन्ने पलट रहे थे, वयस्क महिलायें 'माया', 'मनोहर कहानिया', 'सारिका' ग्रौर 'नई कहानिया', ग्रपनी-ग्रपनी रुचि के अनुसार ले रही थी। पर इन सबसे मेरा कोई सरोकार नही था, मेरी निगाहे किसी को खोज रही थी तभी सफेद झक्क कपडो मे सजी लिपटी कुछ नर्से मुझे एक स्थान पर दिखाई पडी, उनसे तनिक हटकर क्लेरा जटकिन के पास डोरोथी खडी थी। सिस्टर फ्रकलिन ग्रपनी साथिनो के बीच खो गई थी, क्योंकि प्रत्येक नर्स ने उन्हें ग्रपने ग्रपने तरीके से फूल-मालाग्रो से ढक दिया था। मैंने देखा कि लॉरेन्स एक ग्रोर तनिक हट कर बठा है ग्रौर कि फूल मालाग्रो का एक बडा भारी ढेर उसकी बगल मे ही इकट्ठा होता जा रहा है। एक दोने म मैं भी फूलमाला लाया था ग्रौर कुछ पीले गुलाब के फूल। फूलमाला सिस्टर फ्रकलिन के लिए, पीले गुलाब के फूल डोरोथी के लिये ये उसे विशेष प्रिय थे। मुझे भी पीले गुलाब की महक बडी भाती है, उसम जस ग्रनेक विरोधी गधो ग्रौर स्वादो का सम्मिश्रण है, ग्रापको यकीन न हो तो एक पीले गुलाब को ग्रपनी नासिका के निकट ले जाइये, ग्राप ग्रनुभव करेंगे कि उसम एक विचित्र गध है, कुछ मीठा, कुछ खट्टा, कैसा सलोना है उसका स्वाद ! डोरोथी को सचमुच पीले गुलाब की ग्रात्मा ही मिली थी, सो मेरी भावना का प्रतिनिधित्व करते हुए वे चन्द पीले गुलाब खुले हुए दोने म ही, मैंने क्लेरा जटकिन के सम्मुख ही उसे ग्रर्पित किये।

"ग्ररे भाई, हमे भी तो कुछ प्रेजेन्ट करो" सरस विनोद के भाव से बोली डाक्टर क्लेरा ग्रौर मैंने उनकी ग्राशा के प्रतिकूल ग्रपनी दूसरी जेब म से मोगरे के कुछ ताजे फूल भेंट कर दिये। य वास्तव मे मैं अपने लिय लाया था, पर क्लेरा का मन भी तो मेरी ही तरह दुखी था। उनके स्नेह का ग्राधार हास्य, विनोद एव चाचल्य का रूप सम्भार, ग्राज उनसे विदा ले रहा था।

ट्रेन के ग्राने मे ग्रभी कुछ समय शेष था। डाक्टर क्लेरा बडी भावुक हैं वे हम दोनो को पास ही के निरामिष उपाहारगृह म ले गइ। उन्होने तुरन्त

"मजबूर हूँ।"

"चाहे किसी के प्राण क्यो न निकल जायें।"

"नही स्वीटी, ऐसा नही होगा।"

"वायदा करो"

"करता हूँ।"

अब ट्रेन सीटी दे रही थी, उसे इस बात की चिन्ता नही थी कि दो दिलो का वार्तालाप अभी अधूरा है। ऊपर शरद्-पूर्णिमा का चाद आकाश मे मुस्करा रहा था। उसकी शीतल किरण डौरोथी के मुख पर नृत्य कर रही थी वे करती रही और मैं निर्निमेष उसे देखता रहा, जब तक कि दृष्टि ने मेरा साथ दिया। दोनो ओर से अगणित रूमाल हिल रहे थे ऐसा लग रहा था कि ये रूमाल स्टेशन रूपी आकाश मे नक्षत्रवत् हैं और डौरोथी का रूमाल ऊपर आकाश के चद्रमा से होड कर रहा हो। मुझे याद हो आया सिनेमा का वह सीन जिसमे एक साथ ही दो चादों के उदय होने का प्रसग है इक रात म दो-दो चाद खिले। इक घूघट म इक बदली मे, इक रात बन्ली का य चाद तो सबका है,

घूघट का ये चाद तो अपना है इक रात ।

घूघट वाले चाद की जगह मैं रूमाल वाले चाद को अपना समझता हूँ और वह ट्रेन की तीव्र गति के साथ आगे बढता जा रहा है, आगे बढता जा रहा है। जी म आता है कि उसे रोक लू पर क्या रोक सकता हूँ? घर घर करती ट्रेन मेरे दिमाग की पटरी पर आगे चलती जा रही थी और मैं लडखडा रहा था, तभी पीछे से डाक्टर क्लेरा ने जसे सोत से जगा दिया

'अरे नीहार कहा चले जा रहे हो? आओ मेरे साथ, पीछे मुडकर देखा तो डाक्टर क्लेरा डूबने के तिनके के समान खडी थी और सच कहता हूँ कि उनके अवलम्ब ने मुझे उबार लिया, अन्यथा मैं तो सोच रहा था कि मैं ट्रेन के साथ ही क्यों न भाग जाऊ।

प्लेटफार्म से बाहर आने पर क्लेरा की गाडी मे बैठकर मैं घर आया और चुपचाप जाकर अपने बिस्तरे पर निढाल हो गया। ऊपर आकाश मे शरद्-पूर्णिमा का चाँद औरो के लिये भले ही मुस्करा रहा हो, पर मेरे लिये तो रो रहा था, उसकी किरणो की डोर से बधी हुई चादनी मेरी खिडकी को पार करती हुई, मेरे बिस्तरे तक आ गई लगा कि जसे वह स्वय डौरोथी हो और वह मेरे पाव पकड कर कह रही है "मुझे भूलोगे तो नही?" और टपटप उसके आसू मेरे परों पर गिरने लगे। उस रात मैं सोते हुये जागा और अगले दिन जागते हुये सोया। क्या यही विरह मिलन की रगीन कहानी है! □□

घर पर दशहरे की छुट्टियाँ बिताकर लौटा तो डाक्टर चटर्जी ने एक दिन मिलते ही ताड़नापूर्ण उपालम्भ दिया—तुम अपनी स्टडीज़ के साथ जस्टिस नहीं कर रहे हो। तुमको छुट्टियों में जो कसर पूरी करनी थी वह भी नहीं हो पाई न !

सर, मैं मजबूर था। अम्मा ने साथ नहीं लिया, तबियत न जाने कैसी रहती है।

अच्छा, तुम मेरे बंगले पर आना, मैं तुम्हारी परीक्षा करूँगा।

डाक्टर चटर्जी का मैं एक प्रतिभाशाली छात्र था। वे अपने विद्यार्थी के इस अधःपतन को कैसे सह सकते थे! आज मानता हूँ कि उनकी समयोचित चेतावनी काम कर गई और मैंने दिन रात एक करके अपनी कमी को पूरा कर लिया। चटर्जी अब मुझसे प्रसन्न थे। कहने लगे—रोग लेकर मरीज़ मत बनो, उसके लिए अभी बहुत ज़िन्दगी बाकी है।

डाक्टर चटर्जी न जाने कैसे मेरी मानसिक परिस्थिति से परिचित हो गये थे और उन्होंने मेरे मर्ज की डायग्नासिस (निदान) सही ही की थी। यदि उनका चेतावनी भरा इन्जेक्शन समय पर न लगा होता, तो मैं डूब गया होता। सेहत जरूर बिगड़ गई थी पर अब मैं कक्षा में किसी से पीछे न था। डाक्टर चटर्जी का स्नेहपूर्ण सान्निध्य एवं मार्गदर्शन मेरे विद्यार्थी-जीवन का एक सुदृढ़ सम्बल था। वे मुझे भटकने नहीं दे सकते थे। उन्होंने नित्य संध्या को मेरा उनके बंगले पर जाना, अनिवार्य कर दिया, ताकि मैं अपनी शंकाओं और दिक्कतों का निवारण कर सकूँ और अध्ययन के मार्ग पर तीव्र गति से बढ़ सकूँ।

डाक्टर चटर्जी के चरित्र को लेकर शहर में बड़ी अफवाहें हैं। वे चिरकुमार हैं, यद्यपि अर्धशताब्दी को पार कर चुके हैं। वो पी एम ओ होने के कारण उनकी अस्पताल में बड़ी धाक है और उनका रौब इतना पुरअसर है कि बड़े-बड़े अंग्रेज डाक्टर मद्रन और अन्य मातहत लोग उनकी इच्छा एवं आज्ञा के विपरीत मजाल है जो पत्ता तक हिला सकें। वे मेडिकल कालेज के प्रिंसिपल थे अतः विद्यार्थी वर्ग पर भी उनका लौह नियंत्रण था। अपने कार्य और ज्ञान

म वे अग्रगम थे। एक कुशल सर्जन के रूप म उनकी ख्याति दूर दूर तक फैली हुई थी। सर्जरी के वे जादूगर थे और शल्य चिकित्सा के आधुनिक रूपो एव स्थितियों से, अमेरिका के दो साल के प्रवास मे, वे भली भाति परिचित हो गये थे। उन्होंने ऐसे-ऐसे ऑपरेशन किये थे कि लोग दातो तले अगुली दबाते थे।

किसी व्यक्ति का एक पैर टेढा था और वह सूख गया था, अगुलियाँ भी टेढी थी, पर डाक्टर चटर्जी ने विधाता के विधान मे हस्तक्षेप किया और वह व्यक्ति बैसाखी छोडकर भला चगा हो गया। एक तरुण अध्यापक का हाथ टेढा मढा था, अगुलिया बडी अजीब थी। वह अध्यापक नाक-नक्श मे सुदर था, किन्तु अपने हाथ का क्या करे ! डाक्टर चटर्जी ने उसकी सहायता की और वह कई ऑपरेशनो के बाद स्वस्थ हाथ वाला व्यक्ति बन गया। एक आठ दस वष के बच्चे की ऊपर से गिर जाने पर हड्डी चकनाचूर हो गई थी। डाक्टर चटर्जी ने उसके भाई के शरीर से अतिरिक्त हड्डी लेकर उसका उपचार किया और वह पहले ही की तरह हिरन सा चौकडी भरने लगा।

ऐसे या ही एक बडी मजेदार घटना डाक्टर चटर्जी की सर्जरी को लेकर है। महरी इलाके का एक नौजवान जमीदार उनके पास अपनी नाक कटा कर आया था। किसी निजले रकीब ने अपनी मोहब्बत को महफूज करने के लिये उसे यही तोफा इनायत किया था। बेचारा डाक्टर चटर्जी के आगे गिड गिडाने लगा "डाक्टर साब, साढी तो नक कट गई, तुस्सी मन्द करो।"
"अरे जमीदार मैं नक्टा का क्या इलाज कर सकता हूँ !" भल्लाकर कहा डाक्टर चटर्जी ने।

पर उनके दिल मे रहम था और उस जमीदार के शरीर से ही चमडी मास और हड्डी लेकर ऐसी सुदर नाक लगाई कि रकीब की महबूबा इस सोहने जमींदार को देखकर लटटू हो गई ! यह डाक्टर चटर्जी की उल्लेखनीय विजय थी। नित्य नये केस इसी तरह के आया करते थे।

ऐसे योग्य गुरु का शिष्य मैं, सर्जरी की नायाब मिसालो और उसके उसूलो से अनायास ही परिचित होने लगा और मेरी पढाई पर परवान चढने लगा और धडल्ले से मैं मजिलो पर मजिलें तय करते हुये एम बी बी एम के अतिम वष को उल्लेखनीय सफलता के साथ पार कर गया। उस साल विश्वविद्यालय मे इस परीक्षा म मेरा प्रथम स्थान था, पर इसका श्रेय मुझे नही मिलना चाहिए डाक्टर चटर्जी का स्नेहपूर्ण निर्देशन, डारोथी के प्रणय की धीमी-धीमी आच और वत्सला के परिचय की प्रगाढता, इस सफलता के मूल में थी।
नौकरी के लिये मुझे कहीं नही भटकना था। डाक्टर चटर्जी ने मेरे परीक्षा-

फल निकलने से पूर्व ही, मुझे अपने ही हास्पिटल म अपने सहकारी के रूप मे रहने का आश्वासन दे दिया था। स्वास्थ्य विभाग के डायरेक्टर उनकी बात को टाल नही सकते थे फिर किसी ऐसे वसे की भी सिफारिश वे नही कर रहे थे।

विश्वविद्यालय के प्रथम श्रेणी के विद्यार्थी को उसका प्राप्तव्य ही दे रहे थे।

आज डाक्टर चटर्जी ने अपने बगले पर मुझे चाय के लिये आमंत्रित किया था। पहुचा तो एम बी बी एस की एक छात्रा और डा० माधुरी दुबे भी वहा उपस्थित थी। डाक्टर चटर्जी ने उनम से एक का परिचय कराते हुये कहा

"मिलिये डाक्टर कृष्णा चावला स य वसे ता डाक्टर है पर मरे लिय य तपेदिक की मरीज़ा हैं। रोज शाम को इजेक्शन लगवाने आती हैं।

दूसरी थी डाक्टर माधुरी दुब। ये अस्पताल के महिला विभाग की इचाज थी, ऐसा डाक्टर साहब ने बतलाया। इन दाना को ही लेकर डाक्टर चटर्जी का प्रणय त्रिकोण बनता था। मुझे अजीब सा लगा कि डाक्टर चटर्जी कसे दो दो महिलाओ से एक साथ प्रेम करत हैं पर बतलान वालो ने बतलाया कि डाक्टर माधुरी दुबे अनुभवी एव परिपक्व हैं। उनके प्रणय म सम्भवत तृप्ति अधिक है जलन कम। कुमारी कृष्णा चावला तपेदिक की मरीज़ डाक्टर चटर्जी के कारण ही तो नही हैं? नई मुर्गी फासने के लिय डाक्टर चावला को तपेदिक का वहम कर दिया हो हल्की तपेदिक और व ही उसका इलाज़ करने लगे पर हुआ इसका उल्टा ही। डाक्टर मरीज था तन की वासनाओ का और कुमारी चावला का कौमाय उनकी वासना क कीटाणुओ से तपेदिक का मरीज़ बन बठा। यो रूप के दीपक पर डाक्टर परवाने बन बठ थे जल रहे थे और जला रहे थे। इसम तृप्ति उतनी अधिक नही थी पर जलन अधिक थी। भर भर के जाम पीते हैं और कठ तल्ख हुआ जाता है। ज्यो ज्यो पीत है, जवानी का जाम, त्यो-त्यो प्यास बढती जाती है!

ऐसा ही कुछ प्रवाद था नगर म डाक्टर चटर्जी क चरित्र का लेकर पर मुझे इससे क्या! व योग्य गुरु थे और मैं उनका योग्य शिष्य। तेल को देखो तेल की धार को देखो उसमे पडने वाली मक्खियो को क्यो देखते हो? क्या यह दुनिया काजल की कोठरी नही है? कौन बच पाया है इसकी स्याह कालिख से? यह जरूर है कि डाक्टर चटर्जी म गुण और अवगुण दोनो ही प्रचुर मात्रा मे थे और ये भी चरम सीमा को पहुचे हुये। पर म उनके स्नेह को पाता गया और बढता गया।

मैंने पाया कि डाक्टर चटर्जी जितने रंगीन हैं, उतने ही कर्त्तव्य के प्रति कटिबद्ध भी । आपरेशन थियेटर मे उनका मनोयोग दर्शनीय होता है। उनकी चटुल एव त्वरित अगुलियां ऐसी फटाफट चलती है कि देखकर हैरत होती है। सर्जीकल इस्ट्रूमेन्टस (शल्य चिकित्सा के औजार) को वे इस तरह नचाया करते है, जसे कोई बाजीगर गेंदी गोला छोड रहा हो। इसी सिलसिले मे एक दिन का किस्सा बताये बिना नही रह सकता।

एक मेजर आपरेशन का केस था। औजारो को स्टेरीलाइज (कीटाणु रहित) करके रख दिया गया था प्रकाश की व्यवस्था ठीक प्रकार से कर दी गई थी, रोगी आपरेशन टेबिल पर लिटा दिया गया था, उसके हाथ पर बाध दिये गय थे, आखो पर रुई लगाकर पट्टी बाध दी गई थी। डाक्टर माधुरी दुबे, डाक्टर काटजू, डाक्टर जैन डाक्टर शुक्ला और मैं, डाक्टर चटर्जी का इतजार कर रहे थे। आनन फानन म आ गये डाक्टर चटर्जी। उनके साथ रोगी का कोई सम्बन्धी भी था। वह आपरेशन के समय थियेटर मे ही रहने को उत्सुक था। उसे डराते हुए बोले डाक्टर चटर्जी

सेठजी, ऑपरेशन देखने के लिये सवा हाथ का कलेजा चाहिये आपका कलेजा तो सवा इच का भी नही है। कसे देखेंगे आप?

मैंने देखा कि सेठजी के होश फाख्ता थे। वे तुरत ही मुडकर गये और बिना कुछ कह आपरेशन थियेटर से बाहर चले गये। तभी मुझे देख कर तपाक से बोल डाक्टर चटर्जी 'देखा नीहार, साप भी मर गया और लाठी भी न टूटी। सेठजी रफू चक्कर हो गये ना।"

यह कहा तो मुझे गया था पर देखता हूँ कि रोगी का दिल बठन लगा। उसकी नब्ज को देखने के लिये मुझे ही आदेश मिला था। डाक्टर जन ने ब्लडप्रेशर (रक्तचाप) और डाक्टर शुक्ला न दिल की धडकन को देखा। तब डाक्टर माधुरी दुबे ने आपरेशन के स्थान को सुन्न करने के लिय सुई लगाई, क्लोरोफाम सुघाया गया, डायबिटीज यानी मधुमेह का पुराना रोगी था। मधुमेह की चरमावस्था म उसे कारबकल (पृष्ठव्रण) हो गया था। उसक कारबन्कल का यह दूसरा आपरेशन था। डाक्टर चटर्जी ने बिजली की सी स्फूर्ति से तज चाकू निकाला और रोगी की पीठ पर एक वृत्त मे क्रास कर दिया। काफी मात्रा मे मास का गलित एव विकृत अश निकल आया। यद्यपि छोटे मोटे आपरेशन मैंने भी किये थे, लेकिन इस आपरेशन को देखकर उबकाई आने लगी। डाक्टर जन ने फौरन ही [कैंची से पकड कर गाज रखी और डाक्टर दुबे ने पलक मारते ही ड्रेसिंग कर दिया।

हम लोग सर्जीकल गाउन म व" अजीब स लग रह थ माथ पर टोपी मा॰च ऊपर और नीच एक लम्बा चोगा और परा म बायरम स्नीपर हाथा म रबड क दस्तान इस वेशभूषा म हम सा ात यमदूत थे यद्यपि काय जीवनदूत का कर रह थ।

तभी कध पर हाथ मारत हुए डाक्टर चटर्जी न अपन पीछ आन का सकेत किया। हम दाना जब उनक कमर म पहच तो बड़ा सेठ साहब पहल स हा थ। उन्होंने हाथ जोडकर मरीज का कुशल क्षेम पूछा और बड अनुनय विनय क साथ सौ रुपय का एक हरा नोट डाक्टर चटर्जी क आग बढाया

डाक्टर साहब थ म्हारा माई-बाप हो म्हारे जीवन री पतवार थार ही हाथ है। म्ह आपरे वासते काई कर सका हा आ तो हाथ-खरची है।"

डाक्टर चटर्जी न कुछ ऐसी तीखी दृष्टि स देखा कि वह आतंकित हो गया

नही यह कुछ नहीं चलगा। रखो अपने पास!

हरा नोट जो कि सेठ क हाथ स गिर चुका था पुन उठा लिया गया और उठाने वाल की तो घिग्घी ही बध गई।

थे माई-बाप हो म्ह काई करबा जोगा हा यह कह कर सेठ तो चला गया तब बोले डाक्टर मुझ से

ओ ल्वडी चप नीहार, हैव यू सीन द रोमास ग्राफ सजरी? हाउ डू यू एनजाय इट (नीहार के बच्च तुमने देखा शल्य चिकित्सा का रोमाचक रूप! कसा लगा तुम्हें यह सब?)

सर इट इज रिपल्सीव रादर स्कानफुल बट दी रोमास ग्राफ ग्रीन नोट्स इररेजिस्टेबल।'

(महोदय यह तो वीभत्स है और किंचित् घृणित भी किन्तु हरे नोट का रोमास एसा है जो सर पर चढ कर बोलता है।)

बट यू सी आइ हैव नो हेड विच कन बी आवरपावड बाई दी मिरेकल ग्राफ मनी, दी ग्रीन नोट विल गो टू हैल (परन्तु तुम देखते हो कि मरा सर ऐसा नहीं है जिस पर जादू चक्कर चाल। दोजख म जाय वह हरा नोट!)

इस प्रकार डाक्टर चटर्जी आपरेशन के नित्य नय सबक देन लग और मरा हाथ भी खुल गया उनकी आना बन्द हुआ मैं भी अन्य सजनो की तरह आपरेशनो को खिलवाड समझन लगा। आप विश्वास मान या न मानें मैं तो

यही कहूगा कि जो मजा खिलाडी को खेल मे, जुआरी को जुए म, शराबी को शराब मे, और नौजवान की सुन्दरता के नाज-नखरे सहने म आता है, वसा ही कुछ रोमास मुझे आपरेशन थियेटर म अनुभव होने लगा, पर इस सबका श्रेय डाक्टर चटर्जी को था। मैं उनके सामने नतमस्तक हूँ और उनका लोहा मानता हूँ। आखिर वे हैं न शल्य चिकित्सा के जादूगर और मुझे तो लगता है कि उनका जादू मेरे सर पर चढकर बोल रहा है!

□□

अभी डाक्टर चटर्जी के तत्वावधान में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त करते हुए एक मास ही बीता था कि एक दिन डाक्टर की डाक से मुझे एक महत्वपूर्ण पत्र मिला। इस पत्र में मेरे एम० आर० सी० एस० के आवेदनपत्र के सिलसिले में सूचना दी गई थी कि मैं नए सत्र से उक्त पाठ्यक्रम में सम्मिलित हो सकता हूँ और कि ब्रिटिश सरकार को मेरे निःशुल्क शिक्षण की व्यवस्था करने में प्रसन्नता ही होगी क्योंकि मैं अपने विश्वविद्यालय का सर्वोत्तम छात्र था। दर असल गत वर्ष ही डाक्टर चटर्जी ने एम० आर० सी० एस० के मेरे आवेदन पत्र पर बहुत ही अनुकूल टिप्पणी लिखा दी थी उसी का यह एक स्वाभाविक परिणाम था।

नये देश का आकर्षण उच्च शिक्षा की लालसा और विश्व के एक श्रेष्ठ प्रजातन्त्र का नागरिक बनने को मैं जिस रूप में उत्सुक था उसी के कारण मैंने आनन फानन में निश्चय कर लिया कि मैं अगले मास ही ब्रिटेन के लिये विमान द्वारा चल पड़ूँगा। ब्रिटिश सरकार ने अत्यन्त कृपापूर्वक मेरे पासपत्र का प्रबन्ध कर दिया था और मैं अब कुछ ऐसी मानसिक स्थिति में था कि जिनसे घनिष्ठता एवं स्नेह हो गया था उनसे दो तीन वर्ष के लिये अलग सात समुद्रपार के अनजाने अपरिचित वातावरण का सदस्य हो जाऊ।

जब मैंने कमला को यह सूचना दी तो उसके चेहरे पर मिश्रित भावनायें परिलक्षित हुई। सम्भवतः हर्ष इस बात का था कि मैं उच्च अध्ययन के लिये विदेश जा रहा हूँ और दुःख इस बात का था कि अब वियोग के कितने दिन उसे जीवन के लिये अपना जबड़ा भींच रहने हैं। एक क्षण को तो वह स्तब्ध-सी रह गई और तब उसने औपचारिकता के नाते मुझसे कहा 'डाक्टर मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें।' फिर विस्मय और आशंका से विस्फारित लोचन मटका कर वह बोली 'कहीं मुझे भूल तो न जाओगे? सुनती हूँ, अंग्रेज युवतियाँ विदेशी युवकों को फाँसने में बड़ी दक्ष हैं। उनसे बचकर रहियेगा डाक्टर!'

'मेरे दिल में इतनी जगह ही कहाँ है कि कोई विदेशी युवती अपने लिये स्थान बना सके। आप एम ओंनरड़ी आशुपान्ट मिस वत्सला मुखर्जी।" (मिस वत्सला मुखर्जी मैं तो पहले ही बंध चुका हूँ।)

कौन है वह सौभाग्यशालिनी युवती, जो आपको बाधने मे समर्थ हुई है ?" पूछा विस्मय एव किंचित् उल्लास के भाव से मिस मुखर्जी ने।

"यह तो दिल का एक राज़ है, शायद उलझन भी पर छोडियेगा इसे भविष्य के लिये।"

वत्सला ने मेरे गहन भावपूर्ण नेत्रो मे कुछ झाकने की कोशिश की, पर मैंने कच्ची गोलिया नही खेली थी। मैंने उस कहावत को झूठा कर दिखाया जिसमे कहा गया है जिन खोजा, तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।" मेरे नेत्रो के गहरे पानी मे बैठकर भी वत्सला दिल के राज़ को न पा सकी और इसी लाचारी मे बचारी विदा हो गई क्योकि सामने ही सर्जिकल वार्ड का राउन्ड लेकर डाक्टर चटर्जी आ रहे थे।

"हार्टी ग्रीटिंग्स टू यू नीहार! व्हेन आर यू गोइंग टू लन्डन? (नीहार, तुम्हे हार्दिक बधाइया तुम लन्दन कब जा रहे हो?)

'यह तो सब आपकी ही कृपा है।" मैंने कृतज्ञता का भाव जतलाते हुए डाक्टर चटर्जी का अभिवादन किया।

डाक्टर चटर्जी से विदा होकर मैं आगे बढा, तो अनेक परिचितो एव मित्रो ने हार्दिक बधाइया दी, पर सभी दो तीन वर्ष के मेरे अलगाव से दुःखी थे। घर पर आकर जब मैंने यह सवाद अपनी मम्मी को पत्र द्वारा प्रेषित किया, तभी मेरे मानस पट पर उछलती कूदती, एक उन्नीसवर्षीया युवती अवतरित हुई, जैसे पूछ रही हो सजना, काहे भूल गये दिन प्यार के, खडी रही मैं बिंदिया सजा के, हाथो मे मेंहदी रचा के !

सुबह ही डौरोथी को मैंने तार द्वारा अपने नवीन निश्चय एव कार्यक्रम से अवगत कराया, लिखा, गोइंग टू लदन फार एफ आर सी एस, होप योर मिटिंग बाम्बे। (एफ आर सी एस के लिये लदन जा रहा हूँ। बम्बई हवाई अड्डे पर तुमसे मिलने का इच्छुक हूँ।)

☐ ☐ ☐

उदयपुर मे अपने घर आया, तो मम्मी के बुरे हाल थे। वे मेरे लन्दन प्रवास को लेकर बडी चिंतित थी दूर अनजाने विदेश मे मैं कैसे रहूँगा सात समुन्दर पार की ज़िन्दगी न जाने कैसी हो वहा मेरा पेट कैसे भरेगा आदि आदि आशकाए उन्हे चैन न लेने दे रही थीं। मैंने उन्हे बताया कि जैसा जयपुर, वैसा लन्दन, क्योकि दोनो ही जगह मैं उनकी आखो से ओझल रहता हूँ पर वे इससे सहमत न थी, क्योकि जयपुर जब चाहे तब आया जा सकता है और लन्दन तो कल्पना की पहुँच से भी बाहर है।

किन्तु नीलिमा प्रसन्न थी क्योंकि उसका भैया विदेश से बहुत बड़ा डाक्टर बनकर आयेगा। उसके मेरे लिए बहुत सी चीजें तैयार की थीं। कई रंगों और डिजाइनों में उसने स्वेटर तैयार किये थे। मोजे और दस्ताने भी उसने बनाये थे ताकि मैं सर्दी की ठंड से अपना आप को बचा सकूं। कई तरह के अचार और मुरब्बे उसने अपने भैया के लिए डाले थे जिन्हें मैं लन्दन में रहकर यही सब तो खाता रहूंगा। उसने मेरे लिए अनेक प्रकार की मिठाइयां और नमकीन भी बड़े मनोयोग से बनाये थे। बहिन का अपने एकमात्र भाई के प्रति स्नेह उमड़ा पड़ रहा था।

नीलिमा अब एम० ए० फाइनल की छात्रा थी। उसने प्रीवियस यानी पूर्वार्द्ध में ६६ प्रतिशत अंक प्राप्त किये थे। वह साहित्य की अनन्य उपासिका थी। प्रतिदिन उसके हाथ में कोई-न-कोई किताब रहती थी। वह कविता के मर्म को समझने लगी थी। उसने मेरे विदेश प्रवास को लेकर न जाने कितनी कल्पनाएं कर डाली थीं। उसकी बड़ी आकांक्षा थी कि वह भी मेरे साथ विदेश चले किन्तु यह सम्भव न था। इसलिए वह अपनी बनाई हुई चीजों को इंगलैंड भेजकर प्रकारान्तर से कुछ सन्तोष अनुभव कर रही थी। उसने सब चीजों को मेरे सामान के साथ रखते हुए कहा भैया तुम मुझे तो अपने साथ नहीं ले जा रहे किन्तु मेरी बनाई हुई चीजें तुम्हें सदा मेरा स्मरण कराती रहेंगी।

हां, तुम्हारी ये निगोड़ा चीजें मेरा पीछा वहां भी न छोड़ेंगी। स्वेटर के सुन्दर डिजाइन पर अपनी दृष्टि घुमाते हुए मैंने व्यंग्यपूर्वक कहा।

मैं तो अब तक निगोड़ी थी ही अब मेरी चीजें भी निगोड़ी हो गई ? अच्छा छोड़ जाओ इन सबको यहीं क्या मेरी मेहनत का यही पुरस्कार है! कहने के साथ नीनी की आकृति में भी कुछ काठिन्य का भाव आ गया था।

नीनी तुम तो छुई मुई का फूल हो, व्यंग्य की उँगलियां लगते ही तितर बितर हो जाती हो। ऐसे कैसे काम चलेगा ?' मैंने जैसे स्थगन प्रस्ताव प्रस्तुत कर दिया हो।

भैया जाते जाते भी बहिन को परेशान कर रहे हो।

हां फिर दो साल तक मुझे परेशान करने को कौन मिलेगा!'

इतने में देखता क्या हूँ कि मम्मी एक अटेंडेंट यानी परिचारक के साथ ढेरों गर्म कपड़े और अन्य मेरी आवश्यकता की वस्तुएं लेकर आ उपस्थित हुई। उनके हाथों में भी कुछ थैले लगे हैं। 'नीहार पसन्द कर ले ये कपड़े इन्हें मैंने डाक्टर क्लेरा की मदद से तुम्हारे लिये चुना है।'

दखा तो वई प्रकार की ऊनी विदेशी सर्जें थी और यह मुझे कबूल करना ही पडा कि कपडा नफीस था, और यूरोपीय सुरुचि को प्रतिबिम्बित कर रहा था। डाक्टर कनेरा भला कस गलती कर सकती थी व मेरी रुचि यानी स्वभाव से भली भाति परिचित थी, मुझे तो लगा कि यदि मैं स्वय कपडा पसन्द करने जाता, तो भी इतना सुन्दर चयन नही कर सकता था। बाद म ज्ञात हुआ कि इनम से दो सूट लन्य का कपडा डाक्टर कनेरा के द्वारा भेंट किया गया था और दो सूट मम्मी ने मेरे लिये बनवाये थे उपर नीली न स्वेटरा, मौजा और दस्ताना की कतार लगा दी थी।

"मम्मी मालूम होता है इगलड म बडी सर्दी पडती है, उसकी ठड, सात समुद्र पार करके तुम लोगा के दिल म समा गई है!"

"हाँ रे नीहार, मुझे मालूम था कि तू बडा लापरवाह है। तुझे खाने-पीने और पहनने की सुध भला कहा रहती है!"

"नहीं, मम्मी मैं तो हमेशा भूखा-प्यासा और वस्त्रहीन ही रहता हूँ। 'मैंने कह तो दिया व्यग्य मे, किन्तु उसकी चाट स्वय का ही लगी। मम्मी, बहन और मौसी के स्नेह की त्रिवेणी म मैं डूबन उतराने लगा। कितना सौभाग्य शाली मैं हूँ कि मुझ पर स्नेह की निरतर वर्षा होती है और मैं हूँ कि सीधे मुह बात भी नही करता! मेरे व्यग्य उपालम्भ मे क्या कटुता ही रहती है, क्या उसम प्रच्छन्न स्नेह नही छलकता? सम्भवत स्नेहातिरेक की कुछ ऐसी ही प्रतिक्रिया मानव के हृदय म होती ह जसे यह सब तो उसका प्राप्य है अधिकार है और अनायास ही सुलभ है। इन सबके स्नेह की धीमी धीमी आच मानवीय व्यक्तित्व को किस रूप म सवारती है यह मैं जानता था पर आज मैं इस स्नेहमयी आच से दूर बहुत दूर चला जा रहा हूँ एक ऐसे अनजाने प्रदेश म जहा न कोई अपना है और सब पराये पराये ही लगते है।

पर दूसरे ही पल मैं सोचता हूँ, मनुष्य का हृदय सवत्र एक सा है जाति वर्ण, धम और राष्ट्र की सीमायें उस मानवीय हृदय का ध्वस्त नही कर सकती, यही ता विदेशी के लिये एक प्रबल सम्बल है जिसके सहारे वह अपने परिचित समूह म से मित्र मा बहन, चाचा मामा आदि न जाने कितने सम्बन्ध निकाल लेता है।

मैं सोच रहा हू आसन्न भविष्य म मेरे लिये क्या है, एक ओर परिचय एव ममत्व की परिधि है दूसरी ओर अपरिचय एव उपेक्षा की आशका है पर नहीं यदि मुझम मानवत्व शेष है तो मेरी उष्ण भावनायें कोई न कोई आधार एव माध्यम स्वत ही ढूढ लेंगी। इन्हीं विचारो म डूबा हुआ था कि

अगली डाक से मिला डौरोथी का पत्र । उसने लिखा था कि उसका दिल इस खबर से *बाँसों* उछल रहा है उसके मन का मीत जब बड़ा भारी डाक्टर बनकर लौटेगा तो वह पलक पावड़े बिछाकर उसका स्वागत करेगी । वह क्षण जितना दूर है उतना मादक भी पर इस बीच का दीर्घ अन्तराल म विरह का महोदधि उच्छ्वास ले रहा है ।

मैं सोचता हूँ कि यह विरह क्यों आता है । क्या इसलिये कि हम अनुराग के सूत्र और भी गहरा गाड़ सकें और उसके मूल्य को उसके अभाव म जान समझ सकें ।

डौरोथी ने यह भी लिखा था कि वह तीन दिन पहले ही बम्बई पहुँच रही है, साथ म उसकी मम्मी भी होगी और कि मैं भी तीन दिन पूर्व ही वहाँ पहुँच जाऊँ ताकि दाम्पत्य जीवन का निर विरह स पूर्व कुछ आनन्द लिया जा सके ।

इसका मतलब था कि मुझे जल्द ही बम्बई के लिए प्रस्थान करना होगा । नीली और मम्मी को जब मैंने यह बताया तो वे कुछ नाराज-सी हुई किन्तु दूसरे ही पल मम्मी ने आश्वस्त होते हुए कहा अच्छा ठीक है मैं भी तीन दिन पूर्व ही छुट्टी ले लेती हूँ और तुम्हारे साथ चलकर बम्बई से तुम्हें सी आफ भी कर देंगे और इस नाते मिस्टर फ्रैंकलिन से भी मिलना हो जायगा ।

नीली भी डौरोथी स मिलने की उत्सुकता म बड़ी चंचल हो रही थी । उसने *एक विचित्र परितृप्ति के साथ कहा*

'हाँ भैया यह खूब रही आम के आम और गुठली के दाम ।' उसके हाथ म प्रेमचन्द का प्रसिद्ध उपन्यास गोदान था उसकी ओर मैंने लक्ष्य करते हुए कहा मुहावरेदानी का ताहफा तुम्हें भी प्रेमचन्द ने दे दिया है !

वह अपनी पुस्तक के साथ भाग खड़ी हुई, जैसे किसी शत्रु सेना ने उस पर अचानक ही हमला बोल दिया हो । चौकड़ी भरती हुई उस नीली को मैं देखता रहा । हिरनी-सी मेरी यह बहन चन्द दिनों के बाद मुझ स विलग हो जायगी !

□ □ □

सन्ध्या को जब डाक्टर क्लेरा के यहाँ स लौटा, तो बहुत प्रसन्न था । उन्होंने आज बड़े स्नेहपूर्वक मुझे खिलाया पिलाया था और बातों ही बातों म वे योरोप के रहन सहन शिष्टाचार आदि की कुछ ऐसी बातें बता चुकी थी कि मुझे लग रहा था कि इंगलैंड मेरे लिये अनजाना प्रदेश नहीं है उसकी कुंजी मेरे हाथ लग गई है । उन्होंने सावधानी के विचार से कहा था कि योरोप के

मडिकल कॉलेजो मे बडा रगीन वातावरण रहता है और जिस यूनिवर्सिटी मे, मैं जा रहा था, वह तो अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से बडी महत्त्वपूर्ण एव रोमाचक है। एसी स्थिति मे कही मैं डौरोथी को भुला न बठू, यह उनकी आग्रहपूर्ण चेतावनी थी। मुझे लगा कि उन पर भी भारतीय सस्कृति का प्रभाव मुखर होकर बोल रहा है अन्यथा मुक्त जीवन की विलासिनी नारी ऐसे विधि निषेध भला कसे बर्दाश्त कर सकती है!

उनके वात्सल्यपूर्ण व्यक्तित्व की रेखाओ मे अवगाहन कर ही रहा था कि सध्या की डाक से मिला वत्सला का पत्र। उसने लिखा था कि उसका अध्ययन ठीक प्रकार से चल रहा है पर वह अपने चारो ओर कोई कमी महसूस करती है। वह अपने आप से पूछती है कौन है जो उससे दूर चला गया, और दूर, अति दूर होता चला जा रहा है? यह प्रक्रिया कुछ ऐसी निरन्तरता से हो रही है कि उसका दम घुटा घुटा-सा रहता है। आखिर यह सब क्या है? यह प्रश्न पूछा गया था मुझ से ही, अब वनलाइय मैं इसका क्या जवाब दू? मुझे लगा कि मेरे चारो ओर कोई मधुर मोहक व्यक्तित्व घिरता आ रहा है और अपने आलिगन पाश की उष्णता से मेरे हृदय म उल्लास के साथ-साथ कुछ टीस सी पैदा कर रहा है। वह मधुर मोहक व्यक्तित्व जसे कह रहा हो—"दर्द दिया है तुमने, तो दवा भी दो!"

उफ! वत्सला नहीं नही डौरोथी पर वह भी नहीं। सात समुद्र पार की कोई प्रवासिनी तरुणी, क्या मेरी प्रतीक्षा नही कर रही होगी? यह सब क्या है? नारी के वचजाल से उन्मुक्त सुरभि की लहरें अनन्त नागिना के समान जसे मुझ नाचीज पर मडरा रही हो और मैं हू कि उनसे जितना बचना चाहता हू उतना और उलझ जाता हू। क्या यह मानवीय हृदय की दुबलता है खर यह जो कुछ भी हो, है एक ऐसी प्रवृत्ति जो सवयुगीन एव साव देशिक है। मानव जीवन मे नकार और सकार की दो धारायें समानान्तर रूप से प्रवाहित होती हैं किसी को वह स्वीकारता है, तो किसी को दुत्कारता है। यह क्या अजीब गोरखधधा है? मैं इससे निबटना चाहता हू, पर निबट नही पाता। कहता हू वत्सला तुम भी आओ, डौरोथी, तुम्हें भी सादर आमन्त्रित करता हू और अभी तो यह हृदय अत्यन्त विशाल है, इसम न जाने नियति ने किस किस के लिये स्थान बना रखे हैं! तुम सभी आओ, अपना प्राप्य लो, किन्तु नीहार को इतना मत लडखडा देना कि वह पथभ्रष्ट होकर कतव्यच्युत हो जाय। उसे एक बडा डाक्टर बनना है, जिसकी कीर्ति दिग्दिगन्तव्यापी हो। असख्य युवतियाँ, उसके महान् व्यक्तित्व के निर्माण की ऐसी सतरगी आभायें हैं,

ना विभिन्न ऋतुओं के माध्यम से उसके व्यक्तित्व को सजाती सवारती है।

नीली ने आकर टोका— भैया ऐसे ही उठ रहोगे या कुछ तैयारी भी करना है। मुझे बताओ कौन-कौन से कपड़े किस किस सूट केस में रखने हैं।"

कर्तव्य का आह्वान इतना प्रखर था कि मैं उसे टाल न सका और निर्देश की सुविधा के विहान से बाक्स रूम में चला गया।

□ □ □

जब मैं मम्मी और नीलिमा के साथ प्रात बम्बई पहुंचा तो स्टेशन पर ही मिल गई डोरोथी और उसकी मम्मी मिसेज फ्रेंकलिन। वे लोग कल रात ही यहाँ आ गए थे।

मैंने देखा कि डोरोथी ने अपने जूड़े में ताजा गुलाब का फूल लगा रखा है और चेहरा भी फूल कुसुम के समान खिल रहा था। वह बड़ी मोहक प्रतीत हो रही थी यह कल्पना क्या उसकी अनुपस्थिति ने मेरे मन में रच दी थी अथवा यह एक वास्तविकता थी मैंने आंखें भर भरकर देखा और पाया कि साठे साठ सपनों ने उसके व्यक्तित्व को मधुरिमा में डुबा दिया है। मिस्टर फ्रेंकलिन भी अधिक स्वस्थ दीख रहा थीं जैसे कि पूना की जलवायु उनके परिवार के लिए अधिक अनुकूल सिद्ध हुआ हो।

तपाक से मिली नीलिमा डोरोथी से और मम्मी मिसेज फ्रेंकलिन से इनके नये वातावरण के बारे में अनेक प्रश्न कर रही थीं कि मैं कटे हुए पतंग की तरह अब गिरा अब गिरा होने को ही था कि उबार लिया डोरोथी ने। पूछने लगी डाक्टर आखिर तुम परदेश जा ही रहे हो? मैं तो सोच रही थी कि तुमने अपना इरादा बदल दिया है।'

' तो तुम इरादा बदलवाने के लिए यहाँ आई हो। कह दिया मैंने एक तीक्ष्ण एवं ममघाती व्यंग्य के साथ और उसका असर भी कुछ वैसा ही हुआ नहीं, नहीं ऐसी बात तो नहीं!

'फिर क्या ये आशीर्वचन निरुद्देश्य हैं कहीं ऐसा तो नहीं है कि यह तुम्हारी अन्तर्भावना का प्रतिफलन है?'

'अच्छा यही सही पर क्या इससे तुम रुक जाओगे।

मैंने देखा वे आयताकार लोचन सजल हो आये हैं और भावनाओं के मेघ उनमें उमड़ घुमड़ रहे हैं। मैं डोरोथी को इस प्रकार व्याकुल नहीं होने देना चाहता था अतः मैंने परिस्थिति को किंचित् संभालते हुए कहा तुम्हारे तीन दिन पूर्व यहाँ आने के प्रस्ताव को इसलिए तो नहीं स्वीकार किया गया था कि मैं

निरन्तर अश्रुवर्षा देखता रहूं। अपने दिल को छोटा न करो, अभी तो मैं नही जा रहा हू, जब जाऊ, तो थोडा रो लेना।"

"क्यो रोयेगी, मेरी सखी ? भैया, तुम बडे वैसे हो, सिवाय दिल दुखाने के और भी कुछ जानते हो ?" ढाल की तरह बीच मे आते हुए कहा नीलिमा ने।

तभी हम सिस्टर फ्रैंकलिन की आवाज सुनाई दी "अरे, बातें तो फिर हो जायेंगी। टैक्सी बाहर खडी है, जल्दी करो। मैंने अपने कज़न के यहाँ चर्चगेट पर ठहरने का इन्तज़ाम किया है।

हम उनकी आवाज का अनुसरण करते हुए स्टेशन से बाहर आये, तो देखा सब सामान रख गया है और मम्मी तथा फ्रैंकलिन हमारा सचमुच इंतज़ार कर रही हैं।

□□

तीन दिन हसी-खुशी, सर सपाटे और खरीद फरोख्त मे बीत गये। ऐसा लगा कि तीन दिन नहीं, बल्कि तीन घण्टे ही में चर्चगेट के फ्लट मे रहा हूं। फ्रैंकलिन कं कजन व सहृदय एव मितभाषी निकले अपने काम से काम घड़ी की सुई की तरह उनका जीवन है। हर चीज सुव्यवस्थित एव पूर्व नियोजित कहीं कोई त्रुटि नही कर्तव्य भ्र न नहीं सब यन्त्रवत् चल रहा था। सक्षेप मे, वे बम्बइया जीवन के प्रतीक थे।

मैंने अनुभव किया कि बम्बई का तीन दिन का प्रवास बड़ा लाभकारी रहा है। योरोप के जीवन का यह पूर्वाभास अपने आप म बडा शिक्षाप्रद था। आज सुबह हम चौपाटी पर गये थे, दूर-दूर तक विस्तृत जलराशि सिकता प्रदेश मे बिखरे हुए असख्य प्राणी सब अपनी धुन मे मस्त कोई नारियल का पानी पी रहा था काई चम्पी करवा रहा था कोई खुली धूप म तन सेक रहा था।

समुद्र ठाठें मार रहा था किनारे की चट्टान पर आकर पानी का रेला जसे अपना सिर पटक रहा हो। डारोथी ध्यानमग्न हो इस दृश्य को देख रही थी निर्निमेष एव निर्बाध। सहसा बोल पड़ी इस समुद्र की तरह ही मेरा मन हाहाकार कर रहा है मेरी भावना की वीचिया किसी निमम प्रस्तर-खण्ड पर आघात करती हैं और फिर विलीन हो जाती हैं।

यह आत्मालाप है क्या डौरोथी? जिसे तुम निमम प्रस्तर-खण्ड समझ रही हो, वह तो नवनीत-खण्ड है तनिक उष्णता मिली कि द्रवित हुआ।"

निममता का आरोप और अधिक स्नेह प्राप्त करने के लिए ही तो किया जाता है।

'अच्छा तो यह बात है।' मैंने व्यग्यपूर्ण उच्छ्वास में कहा और डौरोथी की कोमल अगुलियो को धीमे से दबा दिया।

हम दोनों कल्पना जगत में भाग रहे थे सोच रहे थे कि वियोग के दिन कसे कटेंगे। सात समुद्र पार के जीवन को लेकर डौरोथी के मन मे अनेक आशकाए थीं वह जसे भविष्य को आत्मसात् कर रही थी। सहसा चिहुक उठी डाक्टर विदेश में मेरी भी याद आयेगी?

नहीं बिल्कुल नही तुम भी कोई याद रखने लायक चीज हो? यह कहते

हुए मैंने उसके पर की उंगलिया दबा दी और जोर से ठहाका मार कर हसने लगा।

वह सहसा चीख पडी जसे आकस्मात् के किसी अज्ञात सप ने उसे डस लिया हो। मैंने उसे आश्वस्त करते हुए कहा "डोरोथी, दिल काहे को छोटा करती हो? यदि मैं अपने आपको भूल सकता हू, तो तुम्हें भी भूल सकता हू, अन्यथा नही।

'अच्छा पत्र लिखोगे, सप्ताह मे एक बार?"

'सप्ताह मे एक बार नही प्रतिदिन, जब भी मन चाहे।"

तब उसने अपनी स्मृति के प्रतीकस्वरूप एक कढ़ा हुआ रूमाल मुझे भेंट किया, जिस पर एक कोने मे लिखा था, फारगेट मी नाट।" और तब हम दोनो ने अपनी अपनी अगूठिया एक दूसरे से बदल लीं। समुद्र की असख्य लहरें हमारे प्रणय की साक्षी थी और उन्हीं की तरह दोनो दिलो मे भावनाओं का तूफान उमड घुमड रहा था। तभी एक पानी का रेला आया, और हमे थोडा थोडा भिगो गया, जसे वह दो प्रेमी हृदयो का आशीर्वाद दे रहा हो!

मन न जाने कसा हो रहा था कि हम वहा अधिक न टिक सके और अपने फ्लट पर लौट आये। कजन के साथ मम्मी नीलिमा और सिस्टर फ कलिन बाजार गई हुई हैं ऐसा गृहसेवक राम ने बताया। हम दोनों कमरे में आकर सोफे पर बठ गये, डोरोथी का सिर मेरी गोद मे था और वह बिसूर बिसूर कर रो रही थी। मैं उसे बहुत समझा रहा था, पर आसू थे कि उमड़े ही चले आ रहे थे। सहसा मैंने उसे भुजपाश मे जकड़ लिया और उसके अश्रुसिक्त कपोलों को रूमाल से पौंछकर उन पर अगणित चुम्बन जड़ दिये।

'य चुम्बन साक्षी हैं हमारे प्रणय के इन्हीं की मीठी मीठी स्मृति, तुम्ह वियोग की घडिया काटने म मदद करगी और इन्हीं के सहारे तुम अपनी जीवन-नया का वियोग के तूफान मे से खे सकोगी। अच्छा, अब जरा हँसो अयथा मैं यहा से भाग जाऊगा।' मैंने चुनौती देते हुए कहा।

डोरोथी ने अपना मुँह पोछ लिया था और वह मुस्कराने की चेष्टा कर रही थी। यद्यपि उसक मुख पर जो मुस्कान थी, उसमे भी वदना का अनन्त जल-निधि हिलोरें ले रहा था। यह कसा विचित्र मिश्रण था, आसमान खुल गया था और बादल बरस चुके थे। अब वह कुछ हल्की हो गई थी। तभी सब लोग बाजार स लौट आये और नीनी बड चाव से उसे खरीदी हुई चीजें दिखाने लगी। वह उसक लिए कानो के बुन्दे लाई थी हाथो म पहिनने की चूडियाँ और खाने को ढेर सारी मिठाइयाँ। दोनो सखिया अपने चुहल मे व्यस्त थीं कि मैं कमरे से बाहर हो गया।

मित्र बने जिन्दादिल थे और अब भी हैं। उन्हें पाकर मुझे लगा कि जन्मभूमि का कोई अत्यन्त प्रिय अंग मुझे मिल गया है। अब विदेश का परिचय एवं एकान्त कष्टकर प्रतीत नहीं होगा यह सोचकर मैं कुछ आश्वस्त हुआ। उन्होंने क्लब में मिलने का आग्रह किया और मैं भी नये देश के रीति रिवाजों से परिचित होने के लिये उनकी दावत को स्वीकार कर चुका था।

□ □ □

अगले प्रातः मैं कॉलेज के लिये तैयार हो ही रहा था कि मुझे एक साथ अनेक पत्र मिले वत्सला डौरोथी मम्मी डा० चटर्जी व क्लेरा जटकिन के। इन सबने मेरे नये जीवन के लिये शुभकामनायें प्रकट की थीं और अपना यह विश्वास दुहराया था कि मेरा इंग्लैंड प्रवास सुखमय एवं फलप्रद हो। वत्सला ने लिखा था कि उसकी पढ़ाई ठीक चल रही है पर वह डाक्टर नीहार की अनुपस्थिति को बड़ी तीव्रता से महसूस करती है। डौरोथी ने अपने न भुला देने के वायदे को दुहराया था और प्रेममयी अनुभूतियों का आसव उसके पत्र में अक्षर अक्षर से टपक रहा था। मम्मी ने अनेक चिन्तायें व्यक्त की थी और अपने लाड़ले के स्वास्थ्य की कामना की थी। नीनी का उलाहना भी उसमें था। डाक्टर क्लेरा और डाक्टर चटर्जी के पत्रों में बुजुर्गों के आशीर्वाद एवं कार्य निर्देशन की कुछ अनुभव से भरी बातें थीं। इन सब पत्रों को यथास्थान रखकर मैं कॉलेज की ओर चल पड़ा।

कॉलेज में डाक्टर स्टर्नविल मेरे निर्देशक थे। वे डाक्टर चटर्जी के भी निर्देशक रहे थे इस नाते वे मेरे दादा गुरु थे। बड़ा भव्य व्यक्तित्व था उनका। आयु यद्यपि ६० के आस पास रही होगी, किन्तु फिर भी उनके अंग अंग से स्फूर्ति द्रवित होती थी, वे बड़े ही सज्जन कृपालु एवं मिष्टभाषी थे। उन्होंने मुझे न केवल अपने अध्ययन एवं शोध-कार्य के प्रति ही सचेष्ट किया बल्कि वे मेरे बुजुर्ग मित्र दार्शनिक एवं पथ निर्देशक भी थे। उनका अधिकांश समय प्रयोगशाला में ही बीतता। कभी कुछ लिख रहे हैं कभी डिक्टेट करवा रहे हैं कभी किसी प्रयोग में तल्लीन हैं। यहां तक कि चाय के समय भी वे एक साथ कई काम किया करते। अपने विद्यार्थियों का मार्ग दर्शन उनकी पेचीदा समस्याओं का समाधान और अध्ययन की गुत्थियों को सुलझाना उनके बायें हाथ का खेल था। वे बड़े कुशल शल्य चिकित्सक एवं चिकित्सा-विज्ञान के निष्णात पंडित थे। डाक्टर चटर्जी में जिन गुणों एवं कुशलताओं का मैंने दर्शन किया था उनका आदिस्रोत यही विलक्षण पुरुष था।

उन जैसे गुरु के मिलने पर मैं ऐसा अनुभव करता हूं जैसे मैं विदेश में नहीं

हू, बल्कि अपने ही मुल्क के किसी मैडिकल कालेज मे विद्याध्ययन कर रहा हूँ। वे अत्यन्त अध्यवसायी एव स्नेहशील प्राणी थे। वे तनिक भी मेरे प्रमाद या अकमण्यता को बर्दाश्त नहीं कर सकते थे, कस कर काम लेते थे।

उनके तत्वावधान में मेरा मन और शरीर एक अद्भुत साचे मे ढल गये और मैं भी शन शन काम का आदमी बनने लगा। प्रणय की गुजारी रगीनिया विस्मृत होने लगी और मैं अध्ययन के पथ पर सरपट दौडने लगा। यह जरूर था कि मधुर स्मृतिया अब भी मेरे चरणो में गति का सचार करती था पर वे काय अवरोधक न थी, क्योकि डाक्टर स्टनविले के कडे अनुशासन की तलवार मेरे सिर पर लटक रही थी। कुछ दिनो मे मेरे मन और शरीर के अनावश्यक अश कट-छट गये और मैं अब जैसे स्फूर्तिपूर्ण एव क्रियाशील प्राणी था।

एक दिन जब डाक्टर अपने अनेक शोध-विद्यार्थियो के साथ चाय पी रहे थे, तभी उन्हे न जाने क्या सूझा कि मेरे सिवाय सभी को चलता किया और फिर अन्तरगुम मे आकर कहने लगे

"डाक्टर यू फील एट होम हीयर?'

(क्या तुम्हारा यहा मन नहीं लग रहा?)

'ना नो नट इज नाट दी केस सर। अन्डर योर काइड सुपरविजन इट इज इम्पासिबल।'

(महोदय ऐसी कोई बात नही है। आपकी स्नहपूर्ण उपस्थिति मे भला यह कसे सभव है!)

दट्स आल,,राइट, बट देयर इज वन थिंग मोर, आई कॉरडियली इनवाइट यू फार डिनर टुनाइट।

(हां यह तो ठीक है पर एक बात की अभी कसर है तुम आज रात को मेरे यहा खाने पर आओ!)

वरी काइड ऑफ यू सर। आई ग्लडली एक्सप्ट द इन्वीटेशन। इट इज राद्र ए फारच्यून फॉर मी।'

(बडी कृपा है आपकी। आपका निमत्रण स्वीकार कर, मुझे प्रसन्नता ही होगी। यह तो अहोभाग्य है मेरा!)

☐ ☐ ☐

डाक्टर स्टनविले के बगले की कल्पना करते हुये और उनके परिवार के सबध मे अटकलें लगाते हुये मैं जब अचानक ही उनके बगले की कॉल-बल को दबा

रहा था कि प्रकट हुई एक तरुणी, जिसका स्वर्णिम वेश-कलाप उसके व्यक्तित्व को एक विचित्र मधुरिमा प्रदान कर रहा था। गुलाबी गौरवर्ण, विस्मय-भरे नमित लोचन, जैसे साकार प्रश्न बन रहे हो!

कोयल-सी वह कूक उठी

'हूम डू यू वाट, मे आई रिक्वेस्ट यु सर?"

(आप किससे मिलना चाहते हैं? क्या मैं जान सकती हूँ?)

विनय की साक्षात् प्रतिमा बनी वह युवती सप्रश्न मेरी ओर देख रही थी कि मैं बोला 'आई वाट टू सी डाक्टर स्टनविले, माई रेवर ड प्रोफेसर!"

(मैं अपने सम्मानीय गुरु डाक्टर स्टनविले से मिलना चाहता हूँ!)

उसके अगुलि-निर्देश पर मैं ड्राइगरूम कहे जाने वाले कमरे की ओर उन्मुख हुआ और उस तरुणी के सकेत पर एक सोफे पर आसीन हो गया।

डाक्टर साहब की बठक उनके व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब थी। उस वृहद् कक्ष में अनेक भित्तिचित्र अकित थे कई वनानिक डाक्टर और कवि व दार्शनिक जसे मूक रहकर भी यह कह रहे हो कि इस कक्ष का स्वामी हमारा कृपा-पात्र है और हम सबका अतेवासी भी। सुरुचिपूर्वक, मध्यस्थ गोल मेज पर गुलदस्ते रखे हुये थे जिनके निगन्ध पुष्प अपनी विलक्षण सुदरता से किसी भी आगन्तुक का ध्यान आकृष्ट करने म स क्षम थे। चिकित्सा-विज्ञान की नवीन पत्रिकायें भी करीने से इस मेज पर लगी हुई थी। फर्श पर बिछा हुआ कालीन इस बात का प्रतीक था कि हिन्दुस्तानी चीजो से भी डाक्टर स्टनविले का लगाव है। सोफासट के अगल-बगल म सुरुचिपूर्वक दीपाधार अवस्थित थे जिनसे प्रकाश की किरणें छन छन कर कुछ इस रूप म पड रही थी कि वहा उपस्थित व्यक्ति को किसी प्रकार की चौंध न लगे और प्रकाश की भी प्राप्ति हो जाय। तभी आकस्मिक रूप से मेरा ध्यान कीटस के एक कलात्मक चित्र पर जा उलझा जसे इस महान् कवि की सूक्ष्म अनुभूतिशीलता एव ऐन्द्रियता उसके मुख पर स्पष्टत प्रतिबिम्बित हो रही हो तो डाक्टर साहित्य में भी रुचि रखते हैं और वह भी विशेष रूप से यगर रोमान्टिक्स म, कनिष्ठ स्वच्छन्दतावादी कवि शेल, कीट्स बायरन आदि म।

मैं इन्ही विचारो म खोया हुआ था कि प्रकट हुए डा० स्टनविले, सुरुचिपूर्ण स्लीपिंग गाउन म। भव्य व्यक्तित्व, गरिमापूर्ण वेशभूषा। मैंने सम्भ्रमपूर्वक उन्हें भारतीय पद्धति से नमस्कार किया पर वे हाथ मिलाये बिना न रह सके। मालूम होता था कि घर पर वे प्रत्येक व्यक्ति से समता के आधार पर ही मिलते हैं।

"आह, यू हव कम। आई एम रीयली डिलाइटिड टू सी यू एट माई होम।"
(अरे तुम आगये। मैं तुम्हें अपने घर पाकर बड़ा प्रसन्न हूँ।)

"वरी काइन्ड ऑफ यू सर। आई फील एलीवेटिड टू सी यू एट यार होम"
(महोदय, बड़ी कृपा है आपकी। मैं आपसे घर पर मिलकर बासों उछल रहा हू!)

'आल राईट, टेक यार सीट।" (ठीक है, अपना आसन ग्रहण करो।)

तब डाक्टर बैठकर बड़े दिलचस्प-किस्से बताने लगे। उनका भारतीय विद्यार्थियो से दीर्घकालीन सम्पर्क रहा है। उनका विचार है कि भारतीय विद्यार्थियो मे जैसी विनम्रता सहज उपलब्ध है वैसी पाश्चात्य वातावरण मे प्राय दुर्लभ है।

मैंने उन्हें इसका कारण समझाते हुये भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि मे "श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्" के महत्त्व का प्रतिपादन किया। तब वे मेरे राष्ट्र के प्रति श्रद्धानत हो गये और उन्हें दुख था कि उनकी जाति ने ऐसे मुल्क पर सैंकड़ो वर्ष तक अमानवीय हुकूमत की है। उन्होंने बताया कि उनकी कई पीढ़िया इस कलंक का प्रक्षालन नहीं कर पायेंगी।

इस पर मैंने उन्हें बताया कि भारतीय, अंग्रेज जाति व अंग्रेजी संस्कृति के प्रति विवेकपूर्ण दृष्टिकोण लेकर चलते हैं। उनके साम्राज्यवादी रूप के प्रति भारतीयो के हृदय मे घृणापूर्ण विक्षोभ है पर वे अंग्रेजी साहित्य एवं संस्कृति की गौरवपूर्ण परम्परा को गले लगाते हैं।

"सम आफ आवर लीडर्स आर सो मच डेडिकेटेड टू दी इंग्लिश लग्वेज एट वे आर नाट रडी टू से गुड बाइ टु दिस प्रास्परस लग्वेज एण्ड कल्चर। नाऊ इन दयर ओपीनीयन इंगलिश लग्वेज इज ए विंडो फार वेस्टर्न कल्चर।"

(हमारे कुछ नेता, अंग्रेजी भाषा व संस्कृति के प्रति इतने समर्पित व मोहाविष्ट हैं कि वे अब भी इसे विदा करने के लिये प्रस्तुत नही। उनकी सम्मति मे अंग्रेजी भाषा, पाश्चात्य संस्कृति पर दृष्टिपात करने के लिये एक वातायन है।)

"यस, यस, आई हैव रैड मिस्टर नेहरूज बुक्स एण्ड आई एम फुल्ली एक्वेंटेड विथ हिज व्यूज। आई नो इंटीमेटली मि राजगोपालाचारीज व्यूज ऑन इंगलिश लग्वेज। आइ कैन आलसो से दैट मच एडवोकेटस आर रेयर इन दिस कंट्री आल्सो!"

(हा-हा मैंने पंडित नेहरू की कुछ पुस्तकें पढ़ी हैं और उनके विचारो से पूर्णत अवगत हू। मैं राजगोपालाचार्य के अंग्रेजी भाषा संबंधी विचारो से घनिष्ठ रूप से परिचित रहा हू। मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि इस मुल्क मे भी उनसे बढ़कर अंग्रेजी के वकील विरले ही मिलेंगे!)

मैं डाक्टर स्टनविन के तर्कपूर्ण मत एवं व्यंग्य का आनन्द ले ही रहा था कि उसी तरुणी ने आकर सूचना दी कि भोजन तैयार है और हम तुरन्त ही भोजन-कक्ष में पहुँच जाना चाहिये।

भोजन-कक्ष में पहुँचने पर डाक्टर ने श्रीमती स्टनविन और अपनी पुत्री से परिचय कराया। बातों ही बातों में मालूम हुआ कि यह तरुणी मेरी स्टैनविले है और आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र की स्नातिका है और हमारे दार्शनिक राष्ट्रपति के उद्बोधनपूर्ण व्याख्यानों से अत्यन्त ही प्रभावित हैं। श्रीमती स्टनविन सुसंस्कृत एवं सम्भ्रान्त परिवार की महिला हैं। वे अंग्रेज गृहिणी की साक्षात् प्रतिमा हैं। डाक्टर का सबसे बड़ा लड़का मैनचेस्टर की एक बड़ी भारी फर्म में मुख्य प्रबन्धक है। भोजन के दौरान मिस मेरी भारतीय दर्शन एवं संस्कृति के सम्बन्ध में अनेक जिज्ञासायें प्रकट करती रहीं। सबसे आश्चर्य की बात तो यह थी कि डाक्टर स्टनविन ने मेरे लिये निरामिष भोजन की व्यवस्था की थी। वे स्वयं भी काफी वर्षों से इसी प्रकार का भोजन करते आ रहे हैं। इस सम्बन्ध में जार्ज बर्नार्ड शा के भोजन सम्बन्धी विचारों के कायल हैं।

मेज पर कई प्रकार के फल, सलाद, सूप और पारिज इत्यादि रखे हुए थे। कई प्रकार के मुरब्बे और चटनियाँ भी थीं। उन्होंने विशेष रूप से मेरे लिये बंगाली मिठाई का भी प्रबन्ध किया था। इंग्लैण्ड में खीरमोहन रसमलाई और चमचम खाकर मन अत्यन्त उल्लसित हुआ और मैंने संकल्प किया कि कभी विशुद्ध भारतीय भोजन पर डाक्टर साहब और उनके परिवार को बुलाऊंगा।

सचमुच डाक्टर बड़े दिलचस्प प्राणी हैं। वे खाते कम थे पर खिलाते अधिक थे। साथ-साथ हंसी-मजाक भी करते जाते थे। उनका पारिवारिक जीवन मुझे बड़ा सम्पन्न प्रतीत हुआ। पुत्री विनम्रता एवं अनुशासन की पुतली थी। किन्तु उसमें तरुण जीवन के उल्लास और चापल्य का नाममात्र भी अभाव न था।

जब मैं भोजन से निवृत्त होने की तैयारी करने लगा तो डाक्टर स्टनविन बोले 'नीहार परहैप्स यू आर नाट रलिशिंग दीज़ थिंग्ज़। यू आर टाकिंग मच एण्ड ईटिंग लेस। यू मस्ट नो दैट यू आर ए पार्ट एण्ड पार्सल आफ डी-विवसी एण्ड थवरेज कमेटी। यू मस्ट एबाइड बाई देयर रूल्स।'

(नीहार शायद तुम भोजन का आनन्द नहीं ले रहे हो। बात अधिक करते हो खाते कम हो। तुम्हें मालूम होना चाहिये कि तुम डी-विवसी और थवरे के मुख्य व अभिन्न सदस्य हो। तुम्हें उनके नियमों का पालन करना चाहिये।)

'ना सर, दट इज नाट दी कस। ग्राई एम रादर परप्लैक्सड, वाट टू ईट, एण्ड वाट टू लीव !"

(नही, ऐसी काई बात नही, मैं तो इस दुविधा मे हूँ कि क्या खाऊ और क्या छाडू !)

'यू इंडियन्स आर वरी मच ग्रटैंच्ड टू दी ऐटीकेटस् !"

(तुम हिंदुस्तानी लोग शिष्टाचार के नियमो मे बहुत बध रहते हो !)

"ग्राल राइट डाक्टर, आई शल नगट इंडियन एटीक्ट एंड फाला यार फूट प्रिन्टस।"

(ग्रच्छा ता डाक्टर मैं भारतीय शिष्टाचार का परित्याग करू ग्रौर आपके पद चिह्नो का ग्रनुसरण।)

"नो ना यू मस्ट नाट इमिटेट माई फादर। ही इज एन ग्रोल्ड मन। यू मस्ट फोला मी।" मिस मेरी ने हस्तक्षप करत हुए कहा।

(नही नही, मेरे पिता का ग्रनुसरण मत करा व एक वृद्ध पुरुष है। इस मामले म मेरा ग्रनुसरण अपक्षित है।)

'बट मिस मरी यू लिव ग्रॉन एयर। इफ ग्राइ माइट फाला यू, ग्राई शल डाइ ग्राफ हगर !"

(लेकिन मिस मरी ग्राप ता हवा सूघ कर रहती हैं ग्रगर मैं ग्रापका ग्रनुसरण करू गा, ता मर पट मे चूहे दौडन लगग !)

तभी दखता हू कि श्रीमती स्टनविल न बड ही कामल दृष्टिनिक्षप क साथ मरे ग्रागे बगाली मिठाई की प्लट बढा दी है, ग्रौर मैं सोचता हू कि यह परिवार भारतीय ढग से खिलाना भी जानता है। 'खुद परसो ग्रौर खुद खाग्रो' के मुल्क म यह कसा व्यवहार मै देख रहा हूँ ! सुनता ग्राया था कि ग्रग्रज लोग बड गुमसुम ग्रौर गापनशील (रिजवड) होत हैं किन्तु यहाँ जिस परिवार म, मैं एक मधुर रात्रि-भाजन क लिये ग्राया हूँ, वह तो सवथा इसके विपरीत है। क्या यह भारतीया के सतत् सम्पक का परिणाम है या यह परिवार ग्रग्रजो मे एक अपवाद है ! खर, जो कुछ हा, मैं डाक्टर स्टनविले के परिवार का अन्तरग सदस्य हो गया था ग्रौर ग्रनुभव कर रहा था कि मनुष्य का हृदय सवत्र एक सा है। कही कोई बन्धन नही ग्रौर न निर्जीव परम्पराग्रा का ही कोइ दूषित प्रभाव यहाँ दिखाई दता है। सभवत हम विदशिया के सम्बन्ध म कुछ ग्रधिक आलाचनाशील हो गय हैं। वे भी तो हमारी ही तरह इसान हैं, यह तथ्य हम क्या भूल जात हैं।

□□

१२

एक संध्या जब मैं अन्यमनस्क-सा अपने कमरे में चहलकदमी कर रहा था, तो अचानक ही हास्टल के सेवक ने मुझे सूचना दी कि कोई साहब मुझे फोन पर याद कर रहे हैं।

फोन पर मि० गुप्ता बोल रहे थे और उन्होंने आज रात्रि को मुझे ईराज (क्लब) में याद किया था। कहा था कि मैं आठ बजे तैयार रहूँ और वे मुझे यहाँ से ले लेंगे।

मुझे भी कुछ दिन पूर्व की उनकी बातें याद हो आयीं और सोचने लगा कि चलो आज रात को कुछ नूतन ही सही। जिन्दादिली ही तो जिन्दगी का नाम है। सो जिन्दगी से सराबोर ईराज में कदम रखते ही मेरे कान, आँख और नाक तन गये क्या-क्या देखूँ किस-किस को सूँघूँ। अजीब माहौल था। व्हिस्की, ब्लैक एण्ड व्हाइट, शैम्पेन इत्यादि अनेकानेक पेय पदार्थों की गन्ध कुछ अनुपम प्रमाद भरी हो रही थी। नरों और नारियों के जोड़े मेजों के चारों ओर बैठे हुए जाम-संग पी रहे थे, कहीं आमलेट उड़ रही थी तो कहीं सैण्डविचेज की धूम थी। डान्स पर डान्स दिये जा रहे थे। तरुणियों का कल-कलाप इस वातावरण में लघु मधुघटों का आभास दे रहा था। उनका लिबास, रक्तिम वर्ण और रक्तिम अधर जैसे वासना की रैनपन का विज्ञापन कर रहे थे। इन चंचल नयनों में एक आमन्त्रण था, एक कुतूहल, एक सिहरन थी। बड़ी कठिनाई से हम हाल के एक कोने में स्थान प्राप्त कर सके। हम दोनों अपनी कुर्सियों पर बैठे ही थे कि एक युवती-कण्ठ कोकिल स्वर में कूज उठा। यह अवश्य कोई भारतीय नारी थी, जिसके बनाव शृंगार से स्पष्ट प्रकट हो रहा था कि वह बंगाल की ही है।

तभी मि० गुप्ता सिगरेट का कश खींचते हुए कहने लगे 'नीहार, देखते हो ईराज की जिन्दगी, यह सब तुम्हें कैसा लग रहा है?'

'बड़ा अजीब ढंग सम्मोहन है यह दृश्य! प्रतीत होता है कि पाश्चात्य सभ्यता भावनाओं की अनुचरी है।'

'हाँ मोरल टैबूज (नैतिक वर्जनाएँ) के रुख से आने पर तो ऐसा ही मालूम पड़ता है पर ये लोग जिन्दगी का मजा लेना जानते हैं।' मि० गुप्ता ने किंचित् व्यंग्य के साथ टिप्पणी की।

मैं इस समय बोल कम रहा था और वहां के वातावरण की, उसकी सम्पूर्ण रंगीनी को, विचित्रता को और निरालेपन को आत्मसात् कर रहा था। मेरे पास की ही टेबुल पर दो तरुण, उसी बंगाली युवती से कहकहा लगाकर बात कर रहे थे। वेशभूषा और बोलचाल से एक तरुण स्पष्टत फ्रेंच मालूम होता था और दूसरा जर्मन। फ्रेंच युवक उद्दाम वासना का पुंज प्रतीत हो रहा था, उसकी दृष्टि मे एक जुगुप्सा थी और अपहरण एवं बलात्कार की शत-सहस्र प्रवृत्तियां उसकी क्रूर दृष्टि मे से झांक रही थी। मैं सोचने लगा कि यह युवती अजीब चंगुल मे जैसे फंस गई है उसकी मुख मुद्रा से जैसे प्रतीत हो रहा था कि वह इन लोगो से किनाराकशी करना चाहती है पर ये हैं कि उसे छोडना ही नही चाहते। वे आग्रहपूर्वक खिलाने-पिलाने पर तुले हुये थे और युवती ह्विस्की की एक घूट से ज्यादा नही ले रही थी, पर उन दोनो ने पूरा पग चढा लिया था और वे कुछ उन्मत्त-से प्रतीत हो रहे थे। मलंग-सा उनका शरीर युवती को एक केबिन की ओर ढकेल रहा था और उसका साथी भी जैसे उसकी मदद कर रहा हो, पर युवती थी कि टस-से-मस नही हो रही थी।

तभी गुप्ता ने मेरे कंधे पर हाथ रखते हुये सावधान किया 'नीहार यह दुनियां है हक्के-बक्के क्या हो रहे हो? मैं अभी मैनेजर को रिपोर्ट करके इस युवती को इन लफंगों से बचाता हूं। और तभी वे 'इन्क्वायरी काउन्टर' पर आ गये।

इससे पूर्व की वे लौटें, मैं अपने पर काबू न रख सका क्योंकि उन दुष्ट युवकों की बदतमीज़ी बढ़ती जा रही थी जैसे वे उस युवती को लूटने के लिये आमादा हो। मैंने हठात् हस्तक्षेप करते हुए कहा

"आ रूडी रास्कल, व्हाइ आर यू टीज़िंग दिस इंग लेडी। आई कैन सैट यू राइट विदइन ए मोमेंट।

(ओ धूर्त तुम इस युवती को क्यो परेशान कर रहे हो, मैं एक क्षण में तुम्हें ठिकाने लगा दूंगा।)

"ओ ब्लडी स्कूल, हू आर यू टू इन्टरप्ट? लर्न सम ऐटीकेट।'

(ओ बदतमीज़ कौन होते हो तुम हस्तक्षेप करने वाले? कुछ तमीज़ सीखो।)

इससे पूर्व कि मैं उस बदतमीज़ को कुछ जवाब देता, जर्मन का घूसा मेरी कनपटी पर लग चुका था और मैं भी अपने होश हवास खोकर संग्राम मे कूद पड़ा था। मैंने उनकी खूब मरम्मत की। अकेला ही दोनो से उलझ रहा था।

बस-कस कर मैंने जो घूसा मारा तो मनुनिया हुआ बन गई। मेरी ऐनक का फ्रेम टूट गया था और बायीं भौंह में कुछ खून भी आने लगा था कि युवती सहसा चीख पड़ी जैसे इस अनर्थ को टालने के लिए वह कोई उपाय खोज रही हो। तभी गुप्ता और मनजर एक सार्जेंट को लिए घटनास्थल पर दौड़ आये। उन्होंने उन अभद्र युवकों को गिरफ्त में ले लिया तथा मुझे प्राथमिक सहायता के लिए करीब के उपचार-कक्ष में भेज दिया गया। थोड़ी देर के लिए मुझे कुछ मूर्च्छा आ गई थी। आंखें खुलीं तो देखा युवती बदहवास-सी अत्यन्त ही विक्षुब्ध स्थिति में मेरे माथे पर पट्टी बांध रही थी। वह सहसा बोल पड़ी, "आज ईश्वर ने आपने मुझे बचा लिया, पर इसके लिए आपको बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी है।" वाक्य के समाप्त होते-होते मैंने देखा कि उसके अन्तर्मन में भावना में कृतज्ञता एवं हर्ष की भावनाएं उमड़ उठी थीं।

'नहीं, यह तो मेरा फर्ज था। अपने मुल्क की युवती का अपमान मैं कैसे सह सकता था, पर यह तो बतलाइये ये कौन थे।'

युवती ने जो कुछ बताया उसका सार यह था कि उसका नाम सुधारा सान्याल है और वह ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में अंग्रेजी साहित्य का उच्च अध्ययन करने के लिए आई है। ये लोग उसी की कक्षा के छात्र थे और बनाड शा के डान जुआन से कम नहीं थे। वे मनचाहे मेहमान की तरह इस युवती के पीछे लग गए थे और उसे तंग करके अपने अनुचित इरादों को पूरा करना चाहते थे। प्रारम्भ में वह उनके इरादे से अनभिज्ञ थी, इसलिए उनके बहकावे में आ गई। वह सोच रही थी कि इन विद्यार्थियों की रिपोर्ट वाइसचान्सलर से की जाए और इन्हें विश्वविद्यालय से रस्टीकेट" (निष्कासित) कराया जाय।

उसने आग्रहपूर्वक मुझे गवाह होने के लिए आमन्त्रित किया। मैंने उसे आश्वस्त करते हुए समझाया, 'आप इस घटना को नाहक तूल दे रही हैं। ऐसी घटनायें इस मुल्क में साधारण हैं। यदि ऐसी घटनाओं को तूल दिया जायगा तो व्यर्थ ही भारतीयों के प्रति एक अप्रिय भावना पनप सकती है।

हां आप ठीक ही कहते हैं पर इस जुर्म का कुछ इलाज तो होना चाहिए।"
'उसके लिए तो गिरफ्त और सार्जेन्ट की गिरफ्त ही काफी है।

तब उसने बड़े मनोयोगपूर्वक मेरी भौंह पर मरहम लगाया और कहने लगी कि यदि मेरे पास ऐनक का नम्बर हो तो उसे बनवाने में उसे प्रसन्नता होगी।
आप नाहक कष्ट करती हैं यह सब हो जायगा। इस चिन्ता के लिए धन्यवाद!

तभी गुप्ताजी लम्बे डग भरते हुए आ गये।

"अरे नीहार, यह क्या कर बैठे? आये थे क्लब में चौबे बनने, रह गये दुब्बे ही!"

युवती ने उनके व्यंग्य को लक्ष्य किया और अत्यन्त कृतज्ञता के साथ हमसे विदा मांगी। उसने पुन: शीघ्र ही मिलने की इच्छा प्रकट की। गुप्ता ने उसके जाने का इन्तजाम कर दिया और वह चली गई।

"डाक्टर तुम तो पूरे शक्करखोरे हो, जैसे गुड़ पर चींटियां मंडराती हैं वैसे ही तुम्हारे चुम्बकीय चेहरे पर युवतियाँ खिंची चली आती हैं। अभी इंगलैंड में भी यही धंधा करोगे, डाक्टर स्टैनविले को जानते हो?

"तल को देखो, तेल की धार को देखो, नाहक उछल क्यों रहे हो? मैंने तो तुम्हारी ही मदद की है। मेरे विचार में तो उस युवती से तुम्हारा भी कुछ अप्रत्यक्ष सम्बन्ध था, सो बतलाओ तुम्हारी परिचिता को बचाना कोई काम नहीं?"

"अपना निजत्व काबू में रखो। अपनी भावना को दूसरों पर मत लादो, नहीं तो मुझे उल्टा चोर कोतवाल को डांटे वाली कहावत याद करनी होगी।'

अब मैं स्वस्थ हो चला था, अत: मिस्टर गुप्ता मुझे टैक्सी में हॉस्टल छोड़ गये।

□ □ □

अगले दिन जब कॉलेज पहुँचा, तो चर्चा का विषय मैं पूर्णत: बन चुका था। मेरा ऐनकविहीन चेहरा और भौंह पर आई हुई चोट कल की घटना के प्रत्यक्ष साक्षी थे। लोग तरह-तरह के प्रश्न पूछ रहे थे। जी मैं आता था कि पीठ पर एक वक्तव्य लिख कर टांग लूं, ताकि हर नये व्यक्ति को उत्तर बारम्बार न देना पड़े। पर यह क्या संभव था! पूछने वाले आखिर अपनी हमदर्दी जो जाहिर कर रहे थे, कहीं-कहीं किंचित् व्यंग्य एवं उपालंभ का भी निवारण करना पड़ा।

"क्या साहब, यहां आप पढ़ने आये हैं या दादागीरी करने? हम तो सोचते थे आप शराफत के पुतले हैं, पर निकले पूरे तीसमार खां!" यह टिप्पणी थी तथाकथित एक हिन्दुस्तानी मित्र की। इसी से मिलती-जुलती बातें कई अन्य व्यक्तियों ने भी कीं। कुछ ने सहानुभूति और संवेदना के स्वर में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये "अरे नीहार तुम किस चक्कर में फंस गये! यहाँ तो आये दिन ऐसी वारदातें होती रहती हैं, यह हिन्दुस्तान नहीं है। कौन किस के

मामले म पडना है। मगर तुम हस्तक्षेप न करते तो भी कोई गाम फर्क न पड़ता।

अब इन सज्जन को मैं कैसे बतलाऊ कि जिस युवती की रक्षा के लिए मैंने हस्तक्षेप किया था, वह मेरी ही मातृभूमि की संतान थी। इस काम में मेरा खून गरम हो गया था, तो यह भारतीय शिष्टाचार के अन्तर्गत ही था। क्या हमारे यहाँ दुष्टों का दमन करने के लिए सज्जन व्यक्ति सात्विक क्रोध का उपयोग नहीं करते?

प्रयोगशाला में जब डाक्टर स्टनविन और मिस मेरी से मुलाकात हुई, तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न था। वे सहसा हतप्रभ हो उठे और प्रवित वाणी में कहने लगे

"ओह नीहार वाट हैज अाउ टू यू! व्हेयर आर यार स्पेक्स?" (अरे नीहार, यह क्या हुआ! तुम्हारी ऐनक कहाँ है?)

इससे पूर्व कि मैं उनके प्रश्न का उत्तर देता, मैंने लक्ष्य किया कि मेरी स्टनविन के नेत्र संवेदना से कुछ-कुछ भर आए हैं जैसे कुछ न पूछ कर भी उनके नेत्रों के अश्रुबिन्दु एक प्रश्नवाचक चिन्ह का आकार ग्रहण कर उत्तर का आह्वान कर रहे हों।

तब मैंने उन्हें विगत रात्रि की सारी घटना संक्षिप्त रूप में कह सुनाई और उनसे अपने कार्य के औचित्य के सम्बन्ध में भी जिज्ञासा प्रकट की जिसके उत्तरस्वरूप उन्होंने इस प्रकार अपने उद्गारों को व्यक्त किया

"ओह ब्रेव डाक्टर यार एक्ट इज प्रेजवर्दी। यू नीड द सिम्पैथी आफ आल पायस परसन्स।" (अरे बहादुर डाक्टर, तुम्हारा काय प्रशंसनीय है तुम सभी सज्जन व्यक्तियों की संवेदना के अधिकारी हो।)

मेरे मन में न जाने क्या एक हिचकिचाहट थी और मैं सोच रहा था कि डाक्टर परिवार पर इस घटना का न जाने क्या प्रभाव पड़ेगा पर उनकी प्रतिक्रिया सर्वथा मानवीय एवं भारतीय विचारधारा के अनुरूप थी। मैंने उनसे यह भी जानना चाहा कि इस घटना को अन्य व्यक्ति किस रूप में ग्रहण करेंगे। उन्होंने जो कुछ उत्तर दिया, उसका सार यही था कि सब व्यक्तियों की प्रतिक्रियाएं प्रायः एक दूसरे से भिन्न हुआ करती हैं और सभी व्यक्ति अपने मानसिक संस्कारों के अनुरूप एक ही घटना पर भिन्न भिन्न रूप से प्रतिक्रिया करते हैं। बस मुझे इस घटना को गम्भीरतापूर्वक नहीं लेना चाहिए, क्योंकि योरोप के बड़े नगरों में ऐसी घटनायें प्रायः नित्य होती रहती हैं।

मैं सोच रहा हूँ कि आखिर यह सब क्या है ? क्या हम निम्नता को इतने हल्के रूप में ही, ग्रहण करते रहेंगे ? वर्तमान सभ्यता में युवक और युवतियाँ एक गहरे उन्माद से परिपूर्ण हो किस ओर बहे चले जा रहे हैं ? हमारे चरण जिस ओर गतिशील हैं, उसमें मुझे विवेक का लेशमात्र भी प्रतीत नहीं होता। ऐसा लगता है कि उद्दाम वासना के मद में हम बह चले जा रहे हैं। पाशविक प्रवृत्तियाँ अपनी जिह्वा को पूर्णतः खोलकर लपलपा रही हैं। संयम, विवेक एवं नैतिकता के सभी मूल्य आज धूल चाट रहे हैं। क्या यूरोप के औद्योगीकरण एवं आधुनिकता का यही रूप हमारा आकांक्ष्य है ? भौतिक सुविधायें हमने अवश्य जुटा ली हैं, पर मानसिक दृष्टि से हम दिनोदिन विपन्न होते जा रहे हैं। स्वार्थ एवं धनलिप्सा ने हमारी आँखें मूँद दी हैं, और हम कोल्हू के बैल की तरह एक ही चक्कर में निरन्तर घूम रहे हैं। क्या इससे मुक्ति का कोई उपाय नहीं ?

मैं सोच रहा हूँ उन फ्रेंच एवं जर्मन युवकों के बारे में जिन्होंने विगत रात्रि को अभद्रता की चरम सीमा उपस्थित की थी। उनके कार्यों के मूल में आखिर कौनसी प्रवृत्ति झलक रही थी ? क्या किसी युवती के हृदय को जीतने का यही मार्ग है ? ऐसा करके क्या उन्होंने उस युवती के हृदय में केवल जुगुप्सा को ही नहीं जगाया ? ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे उस कक्ष में वासना के अनन्त विषधर फुत्कार करते हुये इधर-से-उधर दौड़ रहे हों। केवल डसना ही उनका काम है और वर्तमान सभ्यता इन आस्तीन के सापों को दूध पिला कर पालती है।

तभी मुझे याद आया विवेकानन्द का वह सदेश, जिसमें उन्होंने पश्चिम की समृद्धि, यान्त्रिकता और आधुनिकता को पूर्व की सौम्यता, चिंतनशीलता एवं निस्पृहता से समन्वित करने का उपदेश दिया था। यही वह मार्ग है जिस पर चलकर विश्वमानव मानो अपनी यात्रा को मंगलमय रूप में सम्पन्न कर सकेगा। पर स्वार्थों, मृग मरीचिकाओं और सुवर्ण प्रतिमाओं से दबी हुई इस कटाक्षपूर्ण सभ्यता का क्या इस ओर मुड़ पाना संभव है ? आवेश, प्रतिस्पर्द्धा एवं स्वार्थपरायणता के इस युग में कौन किसकी सुनता है ? सभी अपने को नेता समझते हैं किन्तु 'नीत' कोई नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि अपने समृद्ध यान्त्रिक साधनों से सज्जित होकर हम अनैतिकता, अराजकता के युग में प्रवेश कर रहे हैं। क्या इन घावों, छालों, और विषभरे मवादयुक्त क्षतों पर कोई मरहम न लगायेगा ! मैं सोचते-सोचते थक जाता हूँ और मूक होकर संपूर्ण घटनाओं का विहंगावलोकन करता हूँ। □□

१३

वत्सला का पत्र आया है। उसने लिखा है कि उसके पिता अब अवकाश ग्रहण कर रहे हैं। अतः लौटने पर जयपुर में मिलना न हो सकेगा। अब वे लोग कलकत्ता जा रहे हैं। इसलिए मैं लन्दन से लौटूँ तो कलकत्ता जरूर आऊँ ऐसा उसका आग्रह था। उसकी मम्मी और पापा भी मुझे बहुत याद करते हैं। वे उस दिन की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं जबकि मैं स्वदेश का एक बड़ा डाक्टर बनकर लौटूँगा!

वत्सला ने अपने पत्र के अन्त में लिखा है कि वह भी अब अन्तिम वर्ष में आगई है और लौटने पर एक छात्रा के रूप में नहीं बल्कि एक लेडी डाक्टर के रूप में उसे मिलेगी। क्या इस नये जीवन के उपलक्ष्य में मैं उसके प्रति शुभकामनाएँ प्रकट करने के निमित्त कलकत्ता नहीं पहुँचूँगा? यह प्रश्न था जो मेरे हृदय को कचोट रहा है!

वत्सला का व्यक्तित्व अद्भुत अवयवों से परिपूर्ण है। संगीत के प्रति उसकी निष्ठा सम्भवतः उस की जन्मभूमि की एक गौरवमयी परंपरा है। बंगाल की शस्य-श्यामला वसुंधरा में ऐसा कुछ जरूर है जो उसके पुत्र और पुत्रियों को अनायास ही संगीत, साहित्य एवं अन्य कलाओं में सतत् रूप से दीक्षित करता रहता है। जिस भूमि ने चण्डीदास, बंकिम, रवि और शरत् को उत्पन्न किया है वह भूमि और उसकी परंपरायें वत्सला को यदि संगीत निष्ठा का वरदान दे सकी हैं तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है!

आप विश्वास मानिये कि लंदन में इतनी दूर बैठा हुआ अपने एकान्त क्षणों में मैं वत्सला के सुमधुर स्वर को निरन्तर रूप से सुनता रहता हूँ। ऐसा लगता है कि उस की मधुर स्वरलहरी मेरे चरणों में अद्भुत गति का संचार कर रही है पर उफ डौरोथी तुम्हारी स्मृति भी तो मेरे मन के शून्य प्रदेश में मुखरित हो रही है! तुम्हारा उल्लासमय आनन, बम्बई का मधुर प्रवास और शाखवाल का मधुर साहचर्य क्या कभी भुलाये जा सकते हैं?

यों तो कई युवतियों के सम्पर्क में आने का मुझे सुअवसर मिला है, पर उन सब की स्मृतियों के सागर में दो उत्ताल तरंगें उठती हैं और एक दूसरे से टकरा जाती हैं! एक लहर का नाम वत्सला है और दूसरी का नाम डौरोथी! मैं

अपने आपसे पूछता हूँ कि भविष्य में किसका सानिध्य, मेरे जीवन का उल्लास एवं कमनीयता से परिपूर्ण करेगा !

बचपन की स्मृतियाँ बड़ी गहरी एवं अविस्मरणीय होती हैं पर युवाकाल का रोमांस क्या उसमें कम महत्वपूर्ण है ? फिर भी यह तो स्वीकार करना ही होगा कि वत्सला में कुछ है जो डौरोथी में नहीं और डौरोथी में जो है वह वत्सला में नहीं ! इस भेद को मेरे मन ने आत्मसात् कर लिया है, पर स्पष्टतः मैं इन दोनों के बीच कोई विभाजक रेखा नहीं खींच पाता। क्या यह मेरे मन की दुर्बलता है ? नहीं नहीं, यह दुर्बलता तो नहीं कही जा सकती पर यह क्या है जो मन को मूर्च्छित कर जाती है उसे स्मृतियों के एक मधु-मधुरिम लोक में पहुँचा जाती है !

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बचपन का साहचर्य बड़ा प्रगाढ़ होता है उसकी चंचलता, जीवनमयता एवं प्रगल्भता, चेतना पर ऐसी गहरी परतें जमा देती है कि कोई भी शक्ति उसे छिन्न-भिन्न नहीं कर सकती, पर तभी यौवन आता है, चुपके चुपके कुछ कान में कह जाता है, और कभी-कभी तो पीछे से आँखें मीच लेता है ! युवावस्था का प्रणयावेग कुछ ऐसा उन्मत्तकारी होता है कि वह अपने वात्याचक्र में विवेक को भी ले उड़ता है ! कभी-कभी हम बचपन और युवावस्था की घटनाओं में कोई तारतम्य नहीं स्थापित कर पाते, तो क्या मेरा भी व्यक्तित्व इन दो विरोधी प्रवृत्तियों के कारण आड़ी-तिरछी रेखाओं में विभाजित हो गया है !

मन का सूक्ष्म विश्लेषण करने के उपरान्त मैं कोई अन्तिम निष्कर्ष नहीं निकाल पाया हूँ और अपनी उलझन को थोड़ी देर के लिये टालकर, शल्य चिकित्सा विज्ञान की किताबों में लगाना चाहता हूँ। पर क्या लगा पाता हूँ, बायें ओर के पृष्ठ पर डौरोथी की बाल्यावस्था का चित्र उभर आता है और दायें पृष्ठ पर वत्सला अपने प्रमुदित यौवन को लेकर गुलाब की पंखुरियों के समान अपने सौरभ से मन को उन्मत्त कर देती है ?

तो क्या मेरा इंगलैंड आना व्यर्थ हो जायगा ? एफ आर सी एस की जटिल एवं गहन पढ़ाई क्या मेरे पर आरोपित है ? स्वदेश में डा० चटर्जी और विदेश में डाक्टर स्टेनविन अपने व्यक्तित्व का आरोपण मुझ पर कर रहे हैं ? नहीं-नहीं, वे तो मेरे ही व्यक्तित्व की प्रसुप्त शक्तियों का उन्मोचन कर रहे हैं, पर ये डौरोथी और वत्सला दौड़ी-दौड़ी आती हैं और मेरी महत्वाकांक्षा के घरौंदों को ठोकर मार कर गिरा देती हैं ! मेरा विवेक अँगड़ाई लेता है और संकल्प करता है कि मेरे घरौंदे मिट्टी के नहीं बनेंगे उन्हें मैं संगमरमर जैसा

ह, "वन एव निमत बनाऊगा और "स मक्ल्प क मगमरमरी राज्महल म किसी क रूप की ज्वाला प्रज्वलित न लागी पर उस दाहक नहीं लान दिया जायगा वह जीवन प्रदायिनी होगी ! कर्तव्य क इस मच पर कौन बठ सकता है ? क्या डोरायी ? क्या वत्सला ? अथवा नवपरिचिता मरी स्नेहिल या मध परिचिता सुधीरा सायान ?

दूर कोई इकतारा बजाता है और कहता है कि कामिनी और कचन की माया अपरम्पार है, जो उसकी थाह पा लता है, वह विवक के महासागर म श्वेत कमल सा खिल उठता है और जो इन्हीं म डूब जाता है, वह कहीं का नहीं रहता !

महत्वाकाक्षा की छली कुछ एसा जादू करती ह कि मैं इन सबको भुलाकर अपने अध्ययन म लीन हो जाता हू, और तब अपने आपस कहता हूँ डा० नीहार, तुम्हारा निमाण रगरलियो क लिय नहीं हुआ है। कोई अदृश्य शक्ति तुमसे कुछ और माग रही है ! राष्ट्र क प्रति जो तुम्हारा दायित्व है, उस तुम समझो और उसी क माध्यम से विश्व समाज क क्षत विक्षत शरीर पर कुछ एसा मरहम लगाओ कि वह स्वस्थ काया लकर उठ सक। वयक्तिकता और सामूहिकता का कुछ एसा समन्वय करो कि व्यष्टि और समष्टि दोनो क प्रति तुम्हारे कर्तव्यो का समाधान हो जाय। व्यष्टि और समष्टि म कोई अन्तर्विरोध नहीं, य परस्पर एक दूसरे पर आश्रित हैं। व्यक्ति का स्वाथ ही इस परस्पर सबध को भग करता है और व्यक्ति की सकीर्ण परिधि म मानवता चक्कर काटने लगती है ! यदि उससे छुटकारा मिल सक, तो हम सामूहिकता की परिधि म भी विचरण कर सकते हैं और ऊपर से विरोधी दिखाई दन वाली इन प्रवृत्तियो क बीच समन्वय का सूत्र ढूढ सकते हैं।

□ □ □

पुस्तक लेकर बठा ही था कि आ गय मि० गुप्ता। व शरारतपूर्ण हसी से मुखरित हो रह थ। उनके नैत्रो की चचलता इस बात का आभास द रही थी कि व किसी नवीन सकल्प को लकर यहा आय हैं।

'क्यो डाक्टर नीहार ! तुमतो किताबी कीड़ बन गय हो। इगलड आये हो तो कुछ यहा का जीवन देखो यह क्या कि हर समय किताबो से ही दिमाग लडाते रहो ! चलो उठो मरल्सपाटे क लिये चलते हैं।' यह कहकर मिस्टर गुप्ता मरा हाथ पकड कर खींचने लगे, जसे जबरन व मुझे घुमाने ले जायेंगे।

'मिस्टर गुप्ता आप बड़ नान सीरियस हैं। हर समय आपको सरल्सपाटे का

सुन्ती रहता है। जिन काम के निय में यहा आया हू उसके औचित्य को प्राप्त करना क्या कोई बुरी बात होगी ? अच्छा खर तुम्हारा प्रस्ताव मजूर है। चन्द मिनट ठहरो, ना चाय बनाकर और पीकर तरोताजा हो जायें।"

"हा, यह बात है कुछ समझ म आने की, धीरे धीरे तुम रास्ते पर आ रहे हो। लेकिन हिन्दुस्तानी बल की तरह, तुम अपनी लीक पर धीमे भी पड जाते हो। तभी मेरा नुकीला व्यग्यवाण तुम्हे मर्माहत कर देता है और तुम आगे कदम रखने के लिये मजबूर हो जाते हो।"

"नही मिस्टर गुप्ता, ऐसी कोई बात नहीं। आपके हर प्रोग्राम मे, मैं दिलचस्पी के साथ शरीक हुआ हू, पर यह तो बतलाइये कि आज कहीं ऐनक तुडवाने और घूसाबाजी करने का कार्यक्रम तो नहीं है ?"

"अमा, तुम हो बड तीसमारखा। इस वीक एड मे (सप्ताहात) म इगलिश चनल पार कर जरा पेरिस की रगीनिया दखली जायें, तो कसा रह !

"क्या खूब, प्रस्ताव तो काबिलेतारीफ है। पर यह तो बतलाओ कि जब भी गम है कि नहा। अपनी स्कॉलरशिप का रुपया तो अभी आया नही, इसलिये हाथ कुछ तग है।

"अरे मिया, यह गुप्ता किस मज की दवा है! रईस बाप का रईस बेटा हूँ, आखिर किस दिन काम आऊगा, लो चलो और दिल खोलकर खर्च करो।"

अगन दिन हम रेलयात्रा और जलयात्रा के उपरान्त फ्रान्स की रगीन राजधानी पेरिस में पहुच गये। देखना है नवत्र यौवन की रगीनिया की रेल-पेल है, यहा की हर चीज रगीन है। पुरुष स्त्रियो से भी कही अधिक हसीन हैं और कुछ युवतियो को ना देखकर यह कहना करना पडा कि हमारी पूवधारणा गलत है। कोमलता एव नजाकत की इस भूमि मे अजीब दृश्य थे, अजीब घटनायें थी। नर-नारी का मिलन, मुक्त हास्य विनोद एव चहल-पहल इस स्वाभाविक रूप मे यहा दिखाई दते हैं कि पुरुषो एव स्त्रियो के बीच हम कोई स्पष्ट विभाजन नहीं कर पाते।

जितने क्लब नाटकघर और फोटोग्राफर, मैंने यहा देखे, उतने और कही नहीं। कई बार तो अनजान रूप में ही फोटो ल लिये जाते हैं और फिर एक दो दिन बाद एक आमन्त्रणकारी पत्र मिलता है कि यदि आप सजीव एव स्वाभाविक चित्र चाहते हैं तो फला पते पर फला समय मिल।

सध्या के झुटपुटे म मैं और गुप्ता पेरिस क एक राजपथ स गुजर हो रहे थ, तो सामने से आती हुई एक प्रगल्भ युवती आमन्त्रण के स्वर म अनायास ही चिहुक उठी :

आह फारतन बुड यू लाइक टू पास यार इवनिंग विथ मी ? एक्स यू नाट माइन्ड, आई शल एकम्पनी यू टू नी नियरस्ट कलब एण्ड वियदन यार रीच।"

(अरे विदेशिया, क्या तुम सन्ध्या का तुम मेरे साथ बिताना पसन्द करोगे ? किसी भी निकटस्थ कलब में चला जा सकता है और मेरा साथ अधिक व्यय-साध्य भी नहीं होगा।)

नारी का ऐसा प्रगल्भ रूप मैंने पहले कभी न देखा था। मुझे लगा कि इसमें नारीत्व का शील एवं सौजन्य लेशमात्र भी नहीं और वह व्यावसायिकता की चरमसीमा पर चढ़कर मनचले युवकों को आमन्त्रण देती फिरती है। मिस्टर गुप्ता ने बतलाया कि ये बातें यहाँ आम हैं। किसी भी अपरिचित युवक के साथ ये युवतियाँ अपनी रंगीन सन्ध्यायें एवं रात्रियाँ बड़े ही सहज भाव के साथ बितानी हैं। उनकी दृष्टि में आधुनिकता एवं नवीनता का यह एक अनिवार्य रूप है। वे पुरुषों के साथ मुक्त रूप में क्लबों में नाचती हैं डटकर पीती हैं और आधी आधी रात तक मदहोश होकर आलिंगनपाश में आबद्ध रहती हैं। जो हमारे यहां हेय है जुगुप्सित है, वही इनका प्राप्य एवं काम्य है। यह सभ्यता किस ओर दौड़ जा रही है ? पग-पग में फैशन का बन्धन वाला पश्चिम वासना एवं उन्माद के पंक में इस तरह डूबा हुआ है कि उसके रूप के प्रदीप के चारों ओर पतंग आते हैं मंडराते हैं और न्यौछावर हो जाते हैं। यही उनके जीवन की चरम उपलब्धि है। नवीनता सुन्दरता विचित्रता एवं फैशन की रंगरलियाँ से भरा रंग परिस बड़ा प्रभाव जमा पर ऐसा प्रतीत होता है कि पुरातन सभ्यता का यह एक दृढ़ आधार है और इसी की चट्टान पर कभी पश्चिम के मदभरे स्वप्न चकनाचूर हो जायेंगे। वहां नैतिकता नाम की कोई चीज ही नहीं, जैसे इस जमाने में यह कोई खोटा सिक्का हो जो परिस की दुकानों पर कभी नहीं चल सकता कभी नहीं चल सकता।

❑ ❑ ❑

एक सन्ध्या को जब मैं बर्लिन से लौट रहा था तो सुधीरा सान्याल के साथ एक प्रौढ़ सज्जन को देखकर आश्चर्यचकित हो गया। वे अधेड़ उम्र के थे और वेशभूषा से डाक्टर जैसे प्रतीत हो रहे थे। उन्हें देखकर उत्सुकता हो ही रही थी कि मिस सान्याल ने उनका परिचय करवाते हुए मुझसे कहा

ये मेरे पापा हैं यहीं लन्दन में रहकर प्रेक्टिस करते हैं और मेरी ओर मुखातिब होकर कहने लगी आप हैं डाक्टर नीहार जिन्होंने उस रात उन शोहदों से मेरी रक्षा की थी !

हैलो डाक्टर ! आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। इस मुल्क में अपने देश

के आदमी से परिचित होकर बड़ी आत्मीयता अनुभव होती है। सुधीरा ने आप के बारे में बहुत कुछ बताया है और मैं उसे सुनकर अत्यन्त ही हर्षित हुआ हूँ। अब मेरा यही आग्रह है कि आप हमारे साथ, आज ही डिनर पर चलें और हमारे परिवार से परिचित होने की कृपा करें।" डाक्टर ने किंचित् गम्भीरता के साथ कहा।

"डाक्टर नीहार, मम्मी आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्न होंगी। आप जरूर चलें और अभी चलें।" मिस सान्याल ने भी अनुनय-मिश्रित वाणी में कहा।

मैं अजीब गिरफ्त में था। आज सन्ध्या को यद्यपि कोई कार्यक्रम नहीं था, फिर भी इस प्रकार आकस्मिक रूप से कहीं जाना बड़ा अजीब लग रहा था। डाक्टर सान्याल के आग्रह और उनकी सुपुत्री के अनुनय विनय के कारण, मैं मना न कर सका और उनके साथ कार में, उनके घर के लिये चल पड़ा। डाक्टर कार ड्राइव कर रहे थे और मैं तथा मिस सान्याल, पीछे बैठे हुये हल्की फुल्की बातें कर रहे थे।

प्रसंगवश मैंने उन युवकों के सम्बन्ध में जानना चाहा जिन्होंने उस रात क्लब में हंगामा मचा दिया था। मुझे जानने को मिला कि उन्हें २५ पौंड की जमानत पर छोड़ दिया गया है। यदि उनका आचरण न सुधरा, तो यह धनराशि जब्त हो जायगी। उनका व्यवहार, उसके प्रति कुछ तटस्थ और संयमित है पर यह ज्वालामुखी कभी भी भड़क सकता है। यह विवशतापूर्ण मूकता कभी भी वाचाल हो सकती है।

मैंने मिस सान्याल को सलाह दी कि व सतर्क रहें और कदम फूंक-फूंक कर रखें। उनसे जानने को मिला कि उनके पापा ने यूनिवर्सिटी के अधिकारियों को इस संबंध में सावधान कर दिया है और अब कोई ऐसी गहरी चिन्ता की बात नहीं।

बातों ही बातों में हम डाक्टर सान्याल के फ्लैट पर पहुँच गये। मिसेज सान्याल हमारे स्वागत में सामने ही खड़ी थीं। उन्होंने अत्यन्त स्नेहपूर्वक मुझे रास्ता दिखाया और अपने ड्राइंग रूम में ले चलीं।

मालूम हुआ कि सान्याल परिवार, जिला बर्दवान का है और एक लंबे अर्से से लन्दन में रहकर सफलतापूर्वक जीविकोपार्जन कर रहा है। उनका बड़ा लड़का कलकत्ता के मेडिकल कॉलेज में शल्यचिकित्सा का प्रोफेसर है और छोटा लड़का उन्हीं के पास रहकर केमिकल इंजीनियरिंग की शिक्षा प्राप्त कर रहा है। इस समय वह घर पर न था। इस अजनबी मुल्क में सान्याल-परिवार

से परिचित होकर मुझे बड़ा प्रसन्नता हुई। मुझे वत्सला के परिवार और इनके परिवार में बड़ी साम्यता परिलक्षित हुई। यों औसत मध्यवर्गीय परिवारों में अधिक असमानता नहीं होती। मालूम हुआ कि सुधीरा अंग्रेजी साहित्य की छात्रा तो है ही किन्तु उसकी रवीन्द्र-संगीत में गहरी अभिरुचि है। इसके अतिरिक्त वह अंग्रेजी और बंगला में सुन्दर गीत भी लिखती है। मैंने आग्रह पूर्वक उससे कई गीत सुने और रवीन्द्र की कविताओं के कुछ अंश भी उसने सस्वर पाठ किये।

इंग्लैंड की वह रमणीक सांस्कृतिक संध्या निस्संदेह मेरे आह्लाद का कारण बनी और मैंने भी गीतांजलि के कुछ अंश, मिस सान्याल के आग्रह करने पर सुनाये।

आज इतने दिन बाद बंगाली भोजन प्राप्त करके, मन और आत्मा दोनों ही असाधारण रूप से तृप्त हुये। मिसेज सान्याल बंगाली मिठाई बनाने में बड़ी निपुण थीं। उन्होंने अत्यन्त स्नेहपूर्वक मेरे लिये रसमलाई चमचम और राजभोग बनाया था। चावल और माछ का भी प्रबन्ध था। विशुद्ध बंगाली ढंग से बने हुये चावल खाकर मेरे आनन्द का कोई ठिकाना न रहा। अनेक पेय पदार्थों के उपरान्त हमने सलाद का भी आनन्द लिया और तब विशेष रूप से बनाया गया रजतपत्र में आवृत ताम्बूल मुझे भेंट किया गया।

मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मातृभूमि के किसी प्रिय भूखण्ड में मैं विचरण कर रहा होऊं और इंग्लैंड में बंगाल का यह लघुरूप कितना विचित्र एवं आह्लादकारी था!

"डाक्टर नाझार कहिए यहां आकर कैसा लग रहा है?" अत्यन्त स्नेहपूर्वक श्रीमती सान्याल ने पूछा।

"बस मत पूछिये मुझे अपने घर की और मम्मी की याद आ रही है। मेरी छोटी बहन नालिमा भी आप ही की तरह पाककला में निपुण है और उसकी बनाई हुई मिठाइयां आपके माध्यम से मुझे आज मिल गई हैं।" मैंने आनन्द विभोर होते हुये कहा।

"मैं आपकी मम्मी का स्थान तो ग्रहण नहीं कर सकती किन्तु आपकी आंटी तो हो ही सकती हूं बशर्ते आपको मंजूर हो।" मिसेज सान्याल ने मेरे नेत्रों में झांकते हुये हल्का विनोद किया।

"आंटी आपने तो मेरे मन की ही बात छीन ली है। मैं आज अत्यन्त प्रसन्न हूँ और उम्मीद करता हूं कि पन्द्रह-बीस दिन से तो, ऐसी मिठाइयां जरूर खाने को मिलेंगी।

'क्या नही, क्या नही । तुम यदि यहा आते रहे तो मुझे तुम्हारे लिये मिठाइया बनाने म बडी प्रसन्नता होगी ।'

हम बात कर ही रहे थे कि मिस सान्याल मुझे अपनी 'स्टडी' मे ले गई। सचमुच, वह अध्ययन-कक्ष अत्यन्त ही सुरुचिपूर्ण एव कलात्मक था । अनेक साहित्यकारो एव कलाकारो के भित्ति चित्र वहा अकित थे और कई आलमारियो में करीने से किताबें लगी हुई थीं । मिस सान्याल न केवल अग्रेजी साहित्य म, अपितु विश्व साहित्य की अधुनातन प्रवृत्तियो मे भी गहरी दिलचस्पी रखती थीं । उन्होंने जिज्ञासा प्रकट की कि मेरी रुचि क्या है ?

"या तो मैं चिकित्सा विज्ञान का छात्र हूँ किन्तु आरम्भ से ही मेरे मन मे साहित्य और सगीत के स्वर गू जते रहे हैं । मेरी एक मित्र हैं, वत्सला मुखर्जी ! उनके सम्पर्क ने तो इन प्रवृत्तियो को और भी अधिक प्रखर कर दिया है ।'

'वत्सला मुखर्जी कौन हैं और वे क्या करती हैं ?' मिस सान्याल न सहज भाव मे पूछा ।

मैंने उन्हे सक्षिप्त रूप मे बतलाया कि वे चिकित्सा विज्ञान की छात्रा हैं और शीघ्र ही अपनी पढाई समाप्त करके लेडी डॉक्टर हुआ चाहती हैं । आपस मिलने के पूर्व, मै यही सोच रहा था कि सगीत एव कला मे उनसे बढकर रुचि रखने वाली कोई भी युवती न होगी पर आपके अतरग परिचय ने मेरी आखें खोल दी हैं ।"

ओह डाक्टर नीहार आप नाहक मुझे उछाल रहे हैं ! मैं तो काव्य एव सगीत की एक साधारण छात्रा हू ।"

हीरा मुखसे कब कहे, लाख हमारो मोल ! आप तो वस्तुत मूल्यवान हीरे की कणी हैं ।'

"नही डाक्टर आप गलत कह रहे हैं । यदि आप मेरी चचेरी बहन कनिका सान्याल को सुनें, तो आपको विदित होगा कि मैं तो अभी सगीतसागर के किनारो पर इकट्ठे हुये ककरो तक ही पहुच पाई हू ।'

'यह आपकी विनम्रता है मिस सान्याल । मैं कल्पना नहीं कर पा रहा हू कि सगीत के फन मे आपसे भी कोई माहिर हो सकता है ! फिर भी उचित अवसर आने पर कनिका सान्याल को भी सुनू गा । वस्तुत जीवन, साहित्य और कला मेरी गहरी अभिरुचि के पात्र हैं ।'
'तो इसी बात पर हो जाये आपका एक गीत ।"

"नहीं, पहले आपका होगा। मैं तो लेडीज फर्स्ट (महिलाओं को प्राथमिकता) के सिद्धान्त म विश्वास करता हूँ।"

हा यह ता बडी अच्छी चीज है। लीजिय मैं आपका एक गीत सुना रही हू पर आप बिन बरसे बादल नहीं हो सकेंगे। आपको भी कुछ सुनाना होगा।"

रात मजूर हो गई थी और सितार पर मिजराब की सहायता से चटुल उगलिया निरन्तर नृत्य कर रही थी। कानो म मिश्री घुल रही थी और इच्छा नहीं हो रही थी कि इस सगीतमय वातावरण को छोडू, किन्तु प्रथम परिचय की सीमा अज्ञात रूप से चरणो को ठेल रही थी और मैं विवश था सान्याल परिवार से विदा होने के लिये।

मेरे लौटने के समय डाक्टर सान्याल और श्रीमती सान्याल आग्रहपूर्वक कह रहे थे कि अगले पाक्षिक अवकाश पर मैं पुन उनके यहा उपस्थित होऊँ।

सुधीरा सान्याल के मूक नयन अज्ञात अक्षरो की परिधि म विदा तो दे रहे थे किन्तु उनम आमन्त्रण का आग्रह भी था जिसे समझने म मुझे तनिक भी दिक्कत न हुई।

उन्हें अगले पाक्षिक अवकाश पर अवश्य ही आने का आश्वासन देकर, मैं एक टक्सी मे चल गया और अल्प समय म ही अपने हास्टल के प्रागण म आ पहुचा।

□□

शनिवार की सध्या को प्रवाश गुप्ता एक नये प्रस्ताव को लेकर उपस्थित हुए, बोले, 'अब नीहार के बच्चे, इग्लड म आकर क्या तुम लन्दन के पिजरे मे ही बद रहोगे ! कल को रविवार, ऑक्सफोड यूनिवर्सिटी की कृत्रिम नहर पर, तुम्हारी राह देख रहा है !" जहा थोडी सी गर्मी पड़ने लगी कि यूरोप के लोग तरणताला और कृत्रिम नहरो के किनारे पहुँच जाते हैं और वहा खुलकर तैरते हैं आमोद प्रमोद करते हैं और जिन्दगी का लुत्फ लेते ह।

विचार तो नेक है पर तुम हर रविवार को सर सपाटे का दिन ही क्या समझते हो ?" मैंने किंचित् गभीर होते हुए कहा।

' रहे तुम हिदुस्तानी ही मुल्क की आदत भला कसे छूट सकती है ! अरे यार सन्डे छह दिन तक पापड बलने पर आता है इसलिय उसका उपयोग, कुछ इस प्रकार होना चाहिय कि अगले हफ्ते का काम अखरे नही।"

हा भाई इग्लड का एटीकेट' (सभ्यता) तुम्ही से सीखना होगा। मदारी जसे नचायेगा, वस ही नाचना होगा !"

सो, उस रात गुप्ता मेरे साथ ही रहे और अगले दिन प्रात हम आक्सफाड के लिये चल पड। ऑक्सफोड वास्तव मे शिक्षानगरी है वहा छात्रो अध्यापको, पुस्तकालयो, प्रयोगशालाओं और क्रीडाभवनो के अतिरिक्त कुछ नहीं है। एसा लगता है कि यूरोप का यह शिक्षा-केन्द्र केवल सरस्वती का ही मन्दिर है। सरस्वती के पुत्र और पुत्रिया, उनका प्रगल्भ जीवन और ज्ञान पिपासा इस नगर म मूत हो उठे हैं।

आज तराकी प्रतियोगिता थी। प्रात से ही बडी भारी भीड नहर के किनारे एकत्रित थी। सब इस समय लाइट मूड (प्रफुल्ल चित्त) मे थे। युवक और युवतिया तराकी वेशभूषा म बड विचित्र, किन्तु दिलकश प्रतीत हो रहे थे ! मालूम होता है कि जलक्रीड़ा भी जीवन का एक आवश्यक अग है। एक स्वस्थ साचे मे ढला हुआ तरुण शरीर अपने गठन और उत्साहपूर्ण चपलता से क्रिया शील है।

युवको और युवतियो को 'वदिग कास्टयूम" म देखकर बडा हष अनुभव हुआ। गौर वर्ण के ये सुगठित शरीर और अगो के उभार को लिये हुए वे युवतियाँ,

इस समय मन्मथ और रति से प्रतीत हो रहे थे। आश्चर्य तो यह है कि यह शृंगार पर्व न था, अपितु जीवन पर्व था! घंटी के बजते ही तैरने वालों का एक दल नहर में कूद पड़ा और दर्शकों की उत्साह ध्वनि के बीच अपने मार्ग को तय करने लगा। अब हम केवल उनकी पीठ पर लगे नम्बर ही दिखाई दे रहे थे। लौटते हुए युवक और युवतियों के मुख सूर्य की रक्ताभ किरणों से बड़े दिव्य प्रतीत हो रहे थे। ऐसा लग रहा था कि अगणित किन्नर युवक व किन्नर बालायें जल में विद्युत् गति से तैर रहे हों!

प्रथम द्वितीय और तृतीय आने वाले छात्र एवं छात्रायें विजय मंच पर खड़े थे और उनके फोटो लिए जा रहे थे। इसके बाद वाटरपोलो का मैच था। सीटी बजते ही फुटबाल जो कि इस समय हैंडबाल बनी हुई थी जल में इधर से उधर थिरकने लगी। एक दल अपने ही साथी को फुटबाल देता है और आगे बढ़ जाता है, वहां पर उसे पुनः फुटबाल प्राप्त हो जाती है और वह झट से गोल कर देता है। अचानक उल्लास ध्वनि से आसमान गूंज उठता है और लोग अपने रूमालों को हवा में उछालने लगते हैं!

सचमुच मेरे जीवन का इतना ही आवश्यक अंग है जितना कि अध्ययन। इसमें हमारे शरीर के अंग प्रत्यंग को एक स्फूर्तिदायी अनुभव का आभास होता है और रक्त का कण कण शरीर के प्रत्येक भाग में पहुंचकर उसे नवकान्ति से मुखरित कर देता है।

इसके उपरान्त गोताखोरों की प्रतियोगिता थी। उसमें अनेक युवक जल में ऊपर से कूदते हैं और पलक मारते ही जल के गहन अन्तराल में अदृश्य हो जाते हैं और थोड़ी ही देर में काफी दूरी पर उनके सिर दिखाई देते हैं। मैं कल्पना कर रहा था कि इंगलिश चैनल पर होने वाली तैराकी प्रतियोगिता कितनी मनोरंजक होती होगी! जब से आरती साहा ने नया रिकार्ड स्थापित किया है तब से हम भारतीयों की दिलचस्पी तैराकी प्रतियोगिता में बढ़ गई है। अब कुछ ही आइटम्स शेष थे इसलिये मैंने गुप्ता से आग्रह किया कि लगे हाथ ऑक्सफोर्ड लाइब्रेरी को भी देख लिया जाय। मैं देखना चाहता था कि इंगलैंड के ये तरुण और तरुणियाँ जितने सक्रिय अपने खेलों में हैं, क्या उतने ही वे अध्ययन में भी दिलचस्पी लेते हैं!

मेरे आश्चर्य का कोई ठिकाना न था जब हम ऑक्सफोर्ड पुस्तकालय के द्वार पर पहुंचे। रजिस्टर में अपने नाम को अंकित कर और हाथ में लाई हुई चीजों को यथास्थान रखकर हम अध्ययन-कक्ष में प्रविष्ट हुए। इस कक्ष में छोटे छोटे अध्ययन खण्ड थे और उनमें सभी आधुनिक सुविधायें थीं। अनेक युवक और युवतियां,

कै मनोयोग से पुस्तकों का सार-संचय प्राप्त करने में तल्लीन थे। कई पुस्तकालय-सहायक इधर से उधर पुस्तकों को पहुंचा रहे थे और यहां ऐसा प्रतीत हो रहा था कि ऑक्सफोर्ड न खाता है, न पीता है न खेलता है, बल्कि हर समय पढ़ता ही रहता है। ज्ञान की यह अखण्ड साधना, मुझे सहसा ब्रिटिश म्यूजियम में ले गई और मैं कल्पना करने लगा कि किस तरह कार्ल मार्क्स अपने प्रसिद्ध ग्रंथ "कैपिटल" के नोटस लेते-लेते मूर्च्छित हो जाता था और म्यूजियम के कर्मचारी अत्यन्त अधीरतापूर्वक इस बात की प्रतीक्षा करते थे कि कब उस अद्भुत मनीषी का कार्य समाप्त हो और वे अपने कर्त्तव्य से मुक्त हो सकें।

□ □ □

आज डॉ० स्टनविल और मेरी स्टनविले को भोजन पर निमन्त्रित किया है। सुबह से ही मैं और प्रकाश गुप्ता उसी की तैयारी में लगे हैं। मेरी कल्पना यह रही है कि डॉक्टर को षट्रसयुक्त भारतीय व्यंजनों से परिचित कराया जाय। गुप्ता यद्यपि पाककला में निपुण है, पर फिर भी बिना किसी नारी के सहयोग के यह विचार मूर्त होता प्रतीत नहीं होता, अतः आग्रहपूर्वक सुधीरा सान्याल को भी बुला लिया है। डिनर के 'मीनू' में बंगाली मिठाइयां दहीबड़े, पूरी कचौरी, पापड़, अनेक सब्जियां और दालें, सलाद, खट्टा मीठा चरपरा, सभी परिकल्पित किया गया है। यहां इंग्लैंड में इन सब चीजों को जुटाना बड़ा कठिन हो रहा है। भला हो मिसेज सान्याल का कि उन्होंने हमारी आवश्यकता की सभी चीजें सुधीरा के साथ भेज दी हैं! मैं तो उन्हें भी कष्ट देना चाहता था पर बेचारी अचानक बीमार पड़ गई और मन की मन में ही रह गई! हां, उन्होंने अपनी हिन्दुस्तानी सेविका को हमारी मदद के लिए अवश्य भेज दिया है।

सो, इन सब उपकरणों और व्यक्तियों के सहयोग से यथासमय सब चीजें तैयार कर दी गई हैं और उन्हें मैं और सुधीरा, करीने से डाइनिंग टेबिल पर लगा ही रहे थे कि डॉ० स्टनविले, मेरी सहित आ पहुंचे भारतीय पद्धति से उनका अभिवादन कर मैंने उन दोनों को उचित आसन पर बैठाया। तब मैंने अपने मित्र और सहायकों को भी डॉ० स्टनविले से परिचित करायाँ। इन सब से मिल कर वे बड़े प्रसन्न थे और अनुभव कर रहे थे कि हिन्दुस्तान के किसी नगर में पहुंच गये हैं। मेरी स्टनविले सुधीरा से परिचित होकर फूली नहीं समा रही थी! दोनों बड़ी आत्मीयता से बातें कर रही थीं जैसे मुद्दत से एक दूसरे से परिचित हों।

सभी लोग वार्ता मे मशगूल थे कि मैंने डा० स्टनविने से डाइनिंग टेबिल का अनावरण करने की प्रार्थना की। अनावरण के पश्चात् ही डाक्टर के आश्चय का कोई ठिकाना न था! उन्हे ऐसी चीजो को खाना था जिनका वे अब तक केवल अपने भारतीय विद्यार्थियो स जिक्र ही सुनते रह थ। बगाली मिठाइयो स वे अवश्य परिचित थे, पर यह दही म डूबा हुआ क्या है ऐसी जिज्ञासा करके वे हठात् खुलकर हँस पडे। उनके मुख स सहसा मोदमयी वाणी फूट पडी हाऊ डिलाइटिंग हाऊ रिफ्रेशिंग इट इज! नीहार यू हैव डन ए मिराकल! (अरे यह कितना मानकारी कितना स्फूर्तिदायी है! नीहार तुमने तो चमत्कार उपस्थित कर दिया है!)

सर, इट इज ग्राल ड्यू टू सुधीरा एण्ड प्रकाश, आइ हैव डन नथिंग।' (महोदय, यह ता सुधीरा और प्रकाश का करिश्मा है मैंने ता कुछ भी नही किया है।)

बट द कन्सप्शन एण्ड प्लानिंग आर योरस।
(किन्तु इसकी परिकल्पना और आयोजना तो तुम्हारी है।)

मेरी ने टिप्पणी की और उसका समथन सुधीरा और प्रकाश की ओर से भी हुआ।

"वल, लीव दिस कन्ट्रोवर्सी एण्ड डू जस्टिस टू द डिशिज़।

(सर, छोडिये इस विवाद को और इन मधुर व्यजना के साथ न्याय कीजिये।) तब डाक्टर स्टनविने बडी उलझन म पड गये और आश्चय के साथ कहने लगे ओ माई डियर वायज आई डू नाट नो हाऊ टू बिगिन विथ दीज इंडियन डिशिज़!

(अरे भले आदमियो मैं यह नही जानता की कौनसी चीज स आरम्भ करूं!)

उत्तर म मैंने पूरी कचौडी और सब्जी की प्लेट उनके आगे बढा दी थी। वे बडे अजीब तरीके से खा रहे थ क्योकि इस प्रकार के भोजन के प्रति वे अनभ्यस्त थे। मेरी भी अपने पिता का अनुकरण करती हुई सकोचपूर्वक, पूरी कचौडी का स्वाद लेने लगी।

'वल डाक्टर आई एम एट ए लास टु अन्डरस्टैंड दट अपटु वाट एक्सटेंट, यू विल रलिश दीज थिंग्स।' (डाक्टर साहब मैं यह नही समझ पा रहा हू कि इन भारतीय व्यजनो को आप कहाँ तक पसन्द कर सकेंगे! मैंने किंचित् सकोच के साथ व्यक्त किया।

"डियर नीहार, इट इज नॉट द विवशचन आफ रलिशिंग ऑर नॉट रैलिशिंग, बट दिस मच आई कैन ऐश्योर यू दट दिस एक्सपीरियेंस इज वेरी रिच एण्ट डिलाइटफुल। आई कान्ट फॉरगेट दिस डिनर थ्रूआऊट माई लाईफ।" (प्रिय नीहार यह पसन्द करने या नापसन्द करने का प्रश्न नहीं है किन्तु इस बात का मैं तुम्हें आश्वासन दे सकता हूँ कि यह अनुभव बहुत ही सम्पन्न और मोदकारी है। मैं इस डिनर को जीवनपर्यन्त न भुला सकूँगा।" डॉक्टर खाते जा रहे थे और रस लेते हुये अपने उद्गार भी प्रकट करते जा रहे थे।

"वरी काइंड ऑफ यू सर आइ एम सेटिसफाइड विथ द अटमोस्ट एफर्टस आफ सुधीरा एण्ड प्रकाश।' (बडी कृपा है आपकी। महोदय, मुझे इस बात का संतोष है कि सुधीरा और प्रकाश के प्रयास सफल रहे हैं।)

'डा० नीहार, दिस बडडिंग इज वैरी मच रलिशिंग। वाट डू यू काल इट ?" (नीहार, यह दही से बना हुआ क्या पदार्थ है ? इसे तुम क्या कहते हो ?) मेरी स्टनविले ने दहीबड़े से भरी चम्मच अपने मुँह में रखते हुये पूछा।

'माई डियर मेरी, इट इज दहीवडा। (प्रिय मेरी, यह तो दहीवडा है।) अनायास ही सुधीरा सान्याल चिहुँक उठी।

हम नमकीन चीजों का आनन्द ले ही रहे थे कि प्रकाश ने बगाली मिठाई की प्लेट डाक्टर साहब के सम्मुख कर दी। उसमे से रसमलाई का एक टुकडा लेते हुये डॉक्टर ने कहा

"वल, आई एम एक्वेंटेड विथ दिस स्वीट डिश। आई थिंक इट इज रस मलाई।' (अरे इस मिठाई से तो मैं परिचित हूँ। मेरे विचार में यह रस मलाई है।)

तब तक प्रकाश ने पापड से भरी हुई प्लेट मेरी स्टेनविले के सम्मुख कर दी थी, जिस पर सुधीरा ने टोकते हुये कहा

"वल, मेरी, डाट टच दिस डिश, इट वुड कनक्लूड अवर डिनर!" (अरे मेरी, इन पापड़ो को मत छुओ, ये तो भोजन की समाप्ति के सूचक हैं!)

मैंने इस विवाद में हस्तक्षेप करते हुए कहा सुधीर, डाट बी सो रिजिड। इन लडन, वी आर नाट सपोज्ड टु आबजर्व दोज आर्थोडोक्स प्रिंसिपल्स।" (सुधीरा, इतनी नियमपरायण मत बनो। लदन में हम से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि हम भारतीय भोजन पद्धति की रूढ परम्परा का अक्षरश: परिपालन करें।)

डाक्टर ने पापड का एक टुकडा अपने मुँह में रख लिया था और कह रहे थे 'आह इट इज वरी मच टेस्टफुल एण्ड एपीटाईजिंग।" (अरे, यह तो बड़ा स्वादिष्ट है और भोजनोपरांत रुचिकारी भी है!)

ञ्ताने म मैंने उनके सम्मुख सलाद का प्याला प्रस्तुत किया। उसम से भी उन्होंने एक चम्मच ली और मरी की ओर सकेत करते हुये कहने लगे 'मरी यू विल श्योरली रलिश इट। इट इज फुल ग्राफ विटामिन्स।" (मरी इसे तुम अवश्य पसन्द करोगी। यह तो अत्यन्त पोषणकारी है।)

इसी प्रकार की बातचीत मे तन्मय होकर हम न जाने कितना खा गये। डाक्टर और मेरी की सराहनापूर्ण प्रशस्ति मेरे कानो म निरन्तर गूजती रही। मैं साच रहा था कि आज मैं कितना सौभाग्यशाली हूँ कि अपने गुरुजनो और मित्रो से घिरा हुआ इस उल्लासपूर्ण अनुभूति का सर्वाधिक उपभोक्ता रहा हू।

मरी और सुधीरा भोजनोपरात एक दूसरे से वार्तालाप म सलग्न थी ही कि मैंने उन पर व्यग्यपूर्ण दृष्टिनिक्षेप करते हुये कहा सुधीरा क्या ताबूल अपण नहीं करोगी?

अरे, यह तो मैं भूल ही गई थी।' कहते-कहते सुधीरा दूसरे कमरे म दौडी गई और रजतपत्र स आच्छादित और लवग स बिधे हुय पाना के थाल को उठा लाई। मैंने उससे थाल को छीन लिया और अपने आदरणीय गुरु को उनम से एक भेंट करते हुये कहा 'डाक्टर साहब इट इज तावूल लाईटली इटोक्सीकेटिंग एण्ड डाइजेस्टिंग एट दी समटाइम। (डाक्टर साहब, यह तावूल है। यह हल्के रूप म उत्तेजक भी हैं और साथ ही साथ पाचक भी।)

'वल माई यग फ्रेंडस, आई एम रीयली कविंस्ड दट इंडिया हैज ए रिच हैरीटेज आफ नाट ग्रानली ईटिंग एण्ड ड्रिंकिंग बट आलसो आफ एन्गेरिंग आट एण्ड लिटरेचर। (मर तरुण मित्रो मुझे इस बात का पूरा यकीन है कि भारत न केवल खान-पान की समृद्ध परम्पराओ से परिपूर्ण है बल्कि कला एव साहित्य की उपासना की दृष्टि स भी उसका महत्त्वपूर्ण स्थान है।)

डाक्टर साहब, मनी मनी थेंक्स फार योर काइन्ड सजेशन, आई एम रीयली डिलाइटेड टु रिक्वस्ट मिस सुधीरा सान्याल टू मव अस विथ ए पेनफुल साग।" (डाक्टर साहब आपके सकेत के प्रति हम अत्यत आभारी हैं मुझे कुमारी सुधीरा सान्याल से यह निवेदन करते हुये हर्ष हो रहा है कि व एक दर्दीले गीत से हमारा मनोरजन करें।)

वल नीहार व्हाई डू यू इनसिस्ट फार ए पेनफुल सोग। इट इज नाट इन टूयून विद दिस आस्पीशियस ग्रकेजन।' (अरे नीहार तुम वेदनापूर्ण गीत के लिये आग्रह क्या कर रहे हो? इस मागलिक अवसर से इसकी कोई सगति नहीं है।)

'मिस सुधीरा सान्याल, यू आर एट लिबर्टी टु सिंग ए सोंग ऑफ योर ऑन चायस, वेदर पेनफुल और डिलाईटफुल।" (कुमारी सुधीरा सान्याल, आप अपनी पसन्द का गाना सुनायें, भले ही वह विषादपूर्ण हो अथवा आह्लादक।) —मेरी ने हस्तक्षेप करते हुये कहा।

तब हम सब एक क्षण के लिये स्थिर, मूक और प्रतिक्रियाविहीन हो गय थे, जैसे हम सबको अनागत की मधुर प्रतीक्षा ने अपने सम्मोहन म आबद्ध कर लिया था। तभी जसे अमराई मे से एक कोकिल कूज उठी

"निसिदिन बरसत नन हमारे।
सदा रहत पावसऋतु हम पर, जबत श्याम सिधारे।
अजन थिर न रहत, अखियन मे कर-कपोल भये कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ उर बिच बहत पनारे।
आसू सलिल भये पग थाके, बह जात सित तारे।
सूरदास अब बूडत है ब्रज, काहे न लेत उबारे।"

गीत की समाप्ति पर मैंने डाक्टर और मेरी के लिये, उसकी अंग्रेजी व्याख्या प्रस्तुत की, जिसे सुनकर मेरी ने कटाक्ष करते हुये कहा

डाक्टर, योर कविवशन हैज बीन करिड ओवर। मे आई रिक्वेस्ट सुधीरा टु सिंग ए सोंग फ्रोम टगोरस गीताजलि? (आखिरकार तुम्हारी ही इच्छा पूर्ण हुई, किन्तु क्या मैं कुमारी सान्याल से रवीन्द्र की गीताजलि से किसी गीत को गाने का अनुरोध कर सकती हू?)

इस पर हमें गीताजलि का एक अत्यन्त मधुर एव रहस्यमय गीत सुनने को मिला।

इस प्रकार वह रात्रि बडी देर तक आहार विहार के उपरात सगीत के सुमधुर स्वरो से मुखरित होती रही। तीन घन्टे एसे बीत गय थे जसे व केवल तीन मिनट मे सिमट आय हो और तब हममे से हर व्यक्ति एक प्यास और अतृप्ति लेकर पुनर्मिलन की आकाक्षा के साथ रात के बारह बजे एक दूसरे से विदा होने लगा। डाक्टर स्टनविले ने अपनी कार में सुधीरा और उसकी सेविका को उनके फ्लेट पर छोड देने का सकेत किया, क्योंकि वह उनके मार्ग म ही था।

इन सब वार्ताओ, मधुर क्षणो और चुहुलबाजियो के बीच मैंने एक बात को गभीरतापूवक आत्मसात् किया कि मेरी स्टनविले सुधीरा से मेरे सम्बधों के बारे मे बडी जागरुक और जिज्ञासामय थी। सुधीरा भी इसी मात्रा म मेरी स्टन-

बिले से मेरी आत्मीयता के रहस्यसूत्र को पकड़ लेना चाहती थी। यह कसा अजीब त्रिकोण है, एक पुरुषकोण और दो नारीकोण हैं! वे न जाने किस मधुर रहस्य में लिपटे हुए एक-दूसरे के प्रति निवेदित होना चाहते हैं किन्तु राह में कोई काटा है जो उनके स्वप्न को पूर्ण नहीं होने देता! मैं सोचता हूँ कि सुधीरा मेरी को क्या इतने गौर से देख रही थी, मेरी की निगाहें भी उसके ऐसा करने पर नमितलोचन हो जाती थी। वहा प्रकाश गुप्ता भी तो था। कोई आकर्षण की विद्युत् धारा उसके प्रति क्या नहीं उन्मुख हुई? क्या इसलिए कि वह सावले रंग का है और नाटे कद का है? किन्तु उसके भावपूर्ण नेत्र एव स्फूर्तिशील चरण क्या किसी लता को उस पर आच्छादित होने के लिये आमंत्रित नहीं कर रहे? पर कोई भी सूत्र मेरी पकड़ में नहीं आ रहा है। मैं हैरान हू और सोचता हू कि मेरा लंबा चौड़ा डील डौल गौरवर्ण और भावुकतापूर्ण व्यवहार क्या किसी रमणी के हृदय को उसी तरह अपने आप में विद्ध नही कर लेता जिस प्रकार काटा जल में तैरने वाली अनेक मछलियों को पलक मारते ही अपने मोह-जाल में फँसा लेता है! यह आकर्षण विकर्षण क्या है? ओ अदृष्ट इस नीहार के जीवन-पथ में कितनी ऐसी रूप की ज्वालायें धधकाओगे? क्या तुम उसे काटों की वास्तविकता से परिचित नहीं होने दोगे? पर दूर कोई सिल्ली उड़ा रहा था कचन और कामिनी कितने उन्माद होते हैं! इनसे बचकर न छला जाकर ही व्यक्तित्व अपनी महानता की यात्रा के अंतिम लक्ष्य तक पहुंच पाता है। ये अवरोधक भी हैं और प्राणों में मीठी मीठी आच सुलगाकर गति प्रेरक भी हैं। यह दुर्गम मार्ग के पथिक पर निर्भर करता है कि वह किस रूप को ओढ़े और किसे अपने चरणों के नीचे बिछा ले!

□□

डौरोथी के नये समाचार मिले हैं। उसने पूना विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी मे एम ए की परीक्षा उत्तीर्ण की है और अब वह जीवन के विस्तृत प्रागण मे प्रवेश करना चाहती है। उसे जीवन-साथी भी चुनना है और सभवत अपनी शिक्षा की उपादेयता को सिद्ध करने के लिये कोई मनोनुकूल काम भी करना है। मैंने इन सूचनाओ का अभिनन्दन करते हुये, उसे पत्र लिखा था उसका भी उत्तर आज आगया है। उसकी बात कुछ इतनी वयक्तिक है कि उसे सार रूप म कहा जाना समीचीन न होगा, अत उसके पत्र को अविकल रूप मे उद्धत कर रहा हूँ

पूना,
दिनाक १० सितम्बर

मेरे मन के मीत,

तुम्हारी बधाई का पत्र आज प्राप्त हुआ पढकर कितनी प्रसन्नता हुई, यह बता पाना मेरे लिये कठिन है क्योकि तुम्हारे पत्र ने अनुभूति के क्षणो में मुझे डुबो दिया है। मैं देखती हू कि सात समुद्र पार का विराट अन्तराल अदृश्य होगया है और हम तुम दोनो आमने-सामने बठे हैं। तुम्हारी चपल दृष्टि मे उल्लास की व्यजना है। मैं उस दृष्टि को परस कर निहाल हो गई हू। तुम्हारी कोमल चितवन से बधाई स्नेह और आत्मीयता के शत शत निर्झर, सहसा ही फूट पड़ते हैं और मेरे मन प्राण उस आत्मीयता की धारा मे डूब डूब जाते हैं।

नीहार, आज सहसा जीवन के कुछ अत्यन्त प्रिय दृश्य मेरी आखो मे झूल रहे हैं। तुम्हें याद होगी, मेरे जन्म दिन की वह सुमधुर रात्रि जब हम दोनो कल्पना के लोक में उड चले थे और नीलिमा ने हमे वास्तविकता की भूमि पर उतारा था।

तुम्हें याद होगी वह उदासीन सध्या, जब सातान्ज हवाई अड्डे पर तुम्हारा विमान उड़ने को उत्सुक हो रहा था और मैं रूमाल तब तक उडाती रही थी, जब तक कि वायुयान के 'प्रोपेलर' की गूज मेरे काना म प्रतिध्वनित होती रही था। तुम्हें यह सुनकर आश्चर्य होगा कि वह गूज, अब भी मेरे काना में भनभना उठती है और मैं अधीर होकर शून्य आकाश मे तुम्हारे विमान को अदृश्य रूप में ही देखने लगती हू।

नीहार, यह सब क्या है? प्राण में आवेग की उर्मियाँ इतनी तीव्रता से क्यों उमड पडती हैं? इस आवेग के रेल के बीच तुम निठुर से लडे, मेरी खिल्ली उडाते हो, तभी तो तुम्हारे पत्र कई-कई सप्ताह बाद आते है। क्या तुमने अपनी डौरोथी को भुला दिया है और किसी विदेशी रमणी के वचजाल म तुम्हारी चचल उगलियाँ थिरक रही हैं? कल मैंने एसा ही दु स्वप्न देखा था। तभी से मेरा मन विकल है और मैं उडकर तुम तक आ जाना चाहती हू पर क्या यह सभव है? बतला, नीहार, अवश्य ही बतलाओ तुम्हे क्या हो गया है? मुझे क्या हो गया है? क्या चित्त इतना अधीर रहता है क्या तुम बता सकोगे?

नीहार तुम अपना बिल्कुल नया फोटो भेजो ताकि मैं उसे देखकर अपने चित्त को कुछ समझा सकू। तुम्हारे पुराने फोटो ने तो मुझसे आँखें फेर ली हैं। अत म तुम्हें एक समाचार सुनाती हू और वह यह कि मेरी नियुक्ति पूना के एक स्थानीय गर्ल्स कॉलेज मे हो गई है। बहुत-कुछ तुम्हे बतलाना चाहती हू परन्तु ये अक्षर, ये वाक्य साथ नही देते! भावो का जो आसव मैं प्रत्येक शब्द चषक मे भरना चाहती हू वह उफन उफन पडता है। सचमुच, आज मन बडा विक्षुब्ध है। वातावरण मे उमस है और घटायें उमड रही हैं ठीक उसी तरह जसे मेरा मन अवसन्न है और स्मृति की घटायें मेरे शून्य जीवन के आकाश म उमड घुमड रही हैं।

नीहार एक बात पूछती हू क्या तुम्हे भी मेरी याद आती है? यदि हा तो फिर तुम जल्दी-जल्दी पत्र क्यो नही लिखते? तुम अपने हर पत्र मे व्यस्तता की बात लिखते हो अपनी डौरोथी के लिय इस व्यस्तता को कुछ कम कर दो और मुझे पत्र के माध्यम से भाव रूप मे मिलने का शीघ्र अवसर दो।

तुम्हारी ही,
डौरोथी

इस बार उसके पत्र के उत्तर को विलबित करना मेरे वश की बात न थी। प्रश्न और जिज्ञासायें इतने प्रखर रूप मे उपस्थित थे, कि मैं उन्हें टाल न सकता था। मुझे याद नही आता कि अपने इस छोटे से जीवन म जितना इस पत्र से झकझोरा गया था उतना और किसी से नहीं। आश्चर्य की बात थी कि मैं तुरन्त उसका उत्तर लिखने बठ गया। यो तत्काल उत्तर देने का मेरा स्वभाव नहीं है। सुविधानुसार और तरग मे आने पर ही मैं उसका उत्तर देता हू पर इस बार डौरोथी के पत्र म क्या था कि मैं अपनी मानसिक प्रतिक्रियाओ को तत्क्षण ही प्रकट करने के लिये बठ गया

लन्दन,
१५ सितम्बर

डौरोथी,

इस बार तुम्हें सरल ही सबोधन कर रहा हू, इसे अन्यथा न लेना। विगत पत्रो में तुम्हें मधुमयी, मधुरिम स्वप्नो की चद्रिका, मेरी प्राण, विरह विधुरा, मेरी चिरया, स्वीटी डौराथी आदि शत शत सबोधनो से तुम्हे अलकृत कर कर चुका हूँ पर इस बार मेरे सबोधनो का कोष कुछ रिक्त-सा हो गया है। यो हम दोनों अपने पत्राचार मे नित-नये सबोधन आविष्कृत करते रहे हैं। यह तो तुम स्वीकार करोगी कि जब हृदय में भावनाओं का तूफान उठ रहा हो, तो तुम्हें मात्र डौरोथी ही कहना उचित प्रतीत हुआ क्योकि मेरी भावना की गहनता को केवल तुम्हारा नाम ही वहन कर सकता है!

तुम्हारे आरोप और दुःस्वप्न मैं स्वीकार करता हू। जी चाहता है कि तुम मेरे सामने आकर इससे भी अधिक तीखी बातें कहो। वस्तुत मैं इसी का पात्र हू। तुम से अब तक कुछ बातें छिपाता रहा हू पर आज उन्हें तुम पर प्रकट कर हृदय को कुछ हलका करना चाहता हू। यदि तुम मुझे अप्रसन्न न होने का आश्वासन दे सको तो मैं कुछ बातें तुम्हें बतलाना चाहता हू। तुम्हारे अतिरिक्त, तीन अन्य युवतिया भी मेरे मानसिक जीवन में अवतरित हुई हैं। जयपुर की वत्सला मुखर्जी, जो अब कलकत्ते म हैं इनमे सर्वप्रथम मेरे जीवन म अवतरित हुईं, इसके अतिरिक्त मेरे प्रवासी जीवन मे मेरी स्नविले और सुधीरा सान्याल भी न जाने कहा से आ धमकी हैं!

तुम विश्वास करो, चाहे न करो पर यह तुम्हें स्पष्टत बतलाना चाहता हूँ कि इन्हें अपने जीवन मे लाने के लिये मैं कतई उत्तरदायी नही हू। इन तीनो से ही आकस्मिक सयोग के रूप मे साक्षात्कार हुआ और न जाने क्यो इन तीनो के मन में, मेरे प्रति कोमल भावनाओं का उद्रेक होता चला गया। आरम्भ मे मैंने इन्हें अपने मानसिक जीवन से पृथक करने की भी चेष्टा की, किन्तु पार्थक्य की चेष्टा के साथ-साथ, इनका आकर्षण, मेरे प्रति बढ़ता गया।

सच मानो, डौरोथी मैंने बहुत चाहा कि मन के कपाट बद करलू और केवल तुम्हारा ही चित्र निहारा करू पर मन के द्वार पर ऐसे कोमल, चचल हाथ थिरके कि कपाट स्वत ही खुल गये और ये युवतिया नाचती एव गाती हुई मन मे अनायास ही प्रविष्ट हो गइं! डौरोथी तुम्हीं से पूछता हूँ कि इन सबसे क्या कहूँ, इनसे कसे पिंड छुड़ाऊ? मेरा अपराध केवल इतना है कि मैं उनकी भावनाओं का प्रतिकार न कर सका और किसी सीमा तक इनसे प्रभावित भी हुआ।

वत्सला सुसंस्कृत और मार्जित रुचि की तरुणी है, मेरी स्टनविने अत्यन्त ही गोपनीय एवं शिष्ट प्रकृति की युवती है और सुधीरा सायाल तो चचल थिरकती हुई अष्टादशवर्षीया एक ऐसी बाला है जो अपने माधुर्यपूर्ण सम्मोहन से विदेशी युवकों को भी उन्मत्त कर देती है !

तो मैं कहना यह चाहता हूं कि इन सबसे अनेक सम्पर्क बढ़ा, भावनाओं का विचार-विनिमय हुआ और मेरे प्रवासी जीवन में इनका सान्निध्य मुझे मधुर अनुभूतियों से परिपूर्ण कर गया किन्तु एक बात स्पष्टत स्वीकार करूं कि इन सबके माध्यम से मैंने तुम्हें ही ढूंढ़ा कुछ कुछ तुम्हें पाया भी कुछ भिन्नतामयी विलक्षणतायें भी मिलीं। ऐसी स्थिति में यदि समय पर पत्र न लिख सका, तो क्या मैं क्षम्य नहीं समझा जाऊंगा ? तुम इस सब वृतान्त को पढ़कर कहीं भ्रांत धारणाओं में न फंस जाना तुम्हारी स्मृति एवं मधुरिमा इन सबसे ऊपर है पर यदि मैं इन्हें मित्र के रूप में ग्रहण करूं तो तुम्हें आपत्ति तो न होगी ? मैं यह स्वीकार करता हूं कि एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकती पर आज के व्यक्ति का हृदय म्यान नहीं रहा है और न आज की युवती तलवार ही रही है ! युग बदला है सामाजिक संबंध भी परिवर्तित हुए हैं सांस्कृतिक दृष्टि से भी हम उदारता एवं सहिष्णुता के युग में प्रवेश कर रहे हैं इन सब संदर्भों से यदि मनुष्य का मन परिवर्तित हो जाय और युगानुकूल आचरण करने लगे तो ऐसा ही लगेगा कि जैसे सुबह का भूला, शाम को घर लौट आया है और लोग कहते हैं कि सुबह का भूला यदि शाम को घर लौट आये तो उसे भूला हुआ नहीं कहा जाता।

मगर जो कुछ भी है जैसा भी है तुम्हारे सामने हूं 'ठुकराओ चाहे प्यार करो।

तुम्हारा ही,
नीहार

इस पत्र को हवाई डाक में छोड़कर दूसरे ही पल से उसके उत्तर की कामना करने लगा। सोचने लगा कि मेरे पत्र को पढ़कर डौरोथी के मन पर क्या बीतेगी ! मैं सचमुच बड़ा नासमझ एवं अदूरदर्शी हूं अन्यथा, यह सब लिखने की क्या आवश्यकता थी ! मोहब्बत की अदालत में मुकदमा पेश हो गया था और अब यह न्यायाधीश पर निर्भर करता था कि वह मेरे पत्र को मेरे जीवन को तथा मेरी मानसिक प्रवृत्तियों को किस रूप में ग्रहण करता है।

सप्ताह बीतते-बीतते हवाई डाक से मेरे फ्लैट पर डौरोथी का पत्र ऐसे चू पड़ा जैसे जूही के वृन्त से उसका फूल चू पड़ता है। लिखा था

"ओ छलिया नीहार,

तुम सचमुच प्रणय के जादूगर हो। न जाने प्रेम के मच पर कितनी कठपुतलियों को तुम अपने रूप के आवेग के कच्चे डोरे मे बाधे नचाते रहते हो। सच कहना क्या तुम्हें इसमे वास्तविक सुख मिलता है? यह ठीक है कि ये युवतिया तुम्हारे आकर्षण से बिध गइ, परन्तु क्या कर्तव्य और आदर्श कुछ नहीं है! क्या सम्पूर्ण जीवन मृगतृष्णामय है? क्या मानवीय सम्बन्ध केवल तभी तक बने रहते हैं, जब तक आखें चार रहती हैं। क्या तुम भी मुह देखकर टीका करने वालो की श्रेणी म पहुँच गये हो?

नीहार, वास्तव म अपराध तुम्हारा नहीं है यह युग का अपराध है, जो आज के युग के युवक और युवतियों के सम्मुख निरन्तर आखेट का चारा डालता रहता है। फिर भी, मैं तुम्हारी स्पष्टोक्ति की कायल हूँ। तुमने अपनी परिचिताओं का जो बोध मुझे करवाया है उसके आधार पर मैं उन्हे देखने को उत्सुक हो उठी हूँ। क्या उन्हें देख सकूगी? यदि तुम्हारे पास उन सबके फोटो हों, तो मुझे अवश्य भेजना।

नीहार हमने कितने अरमानो के साथ भविष्यत् जीवन के चित्र बनाये थे! क्या वे मात्र घरौंदे ही साबित होग? अदृष्ट का कोई क्रूर चरण, क्या उन्हे उसी तरह छितरा देगा, जसा कि तुम बचपन मे मेरे घरौंदा को लेकर किया करते थे। पत्र के आरम्भ मे इस बार मैंने तुम्हे छलिया' सम्बोधन किया है, इससे बुरा तो नही मानोगे?

यह ठीक है कि इन युवतिया को चुनाने तुम नही गये थे वे स्वय ही तुम्हारे आकर्षण मे बधी तुम तक खिच आयी, इसके लिये मैं उन्हें भी दोषी नही ठहरा सकती। तुम्हारे व्यक्तित्व मे कुछ अपूव सम्मोहन है नीहार, मन स्वय, अनायास ही उसकी ओर दौड पडता है। इसीलिए मैं तुम्हे छलिया कहती हूँ, पर एक बात है और वह सवप्रधान बात है, सब स्वरो से वह स्वर निराला है, अन्तश्चेतना के तट पर जसे चुपके से कोई कान मे कह जाता है नीहार केवल तुम्हारा है। क्या यह एकाधिकार की भावना है?

नीहार मैंने कभी नहीं चाहा कि तुम्हे अपन व्यक्तित्व की परिधि म बन्दी बना लू तुम एक मुक्त जीव हो। तुम्हारी महत्त्वाकाक्षाए पख लगाकर उन्मुक्त आकाश मे उडी हैं तुमने दुनिया देखी है विराट और विविधतामयी। यदि तुम्हे किसी नारी रत्न से विशेष अनुरक्ति हो तो मैं तुम्हारे रास्ते से हट जाऊगी। मेरे मन मे तुम्हारे प्रति जो कोमल भाव हैं वे सदव बने रहगे। मैं

अपने नीहार के पथ की बाधा अथवा उसकी महत्त्वाकाक्षा का कटक सिद्ध नहीं हुआ चाहती। तुम मेरी ओर से स्वतन्त्र हो। अपने मन के किसी कोने मे यदि तुम मेरी खंडित मूर्ति को स्थान दे सकोगे, तो वही मेरे लिए पर्याप्त होगा।

तुमने एक म्यान मे दो तलवारें होने की बात का प्रतिकार किया है, मैं भी इसके अक्षरश परिपालन की समर्थक नहीं हूँ। युग बदला है और उसके साथ मानवीय सम्बन्धो की गगा मे भी न जाने कितना पानी बह गया है। ऐसी स्थिति मे हम अधिक उदार एव सहिष्णु दृष्टिकोण अपनायें, इस बात को मैं स्वीकार करती हूँ। किन्तु इसका यह भी तात्पर्य नहीं है कि दो जीवन साथियो मे से किसी को भ्रमर-वृत्ति की छूट ही न दी जाय। मेरा विचार है कि इस सम्बन्ध मे तुम भी मुझसे असहमत न होओगे। प्रणय की प्रगाढता एव गहनता, इस बात की माग करती है कि हम मानवीय सम्बन्धो म निमल स्वच्छ दृष्टिकोण को मान्यता प्रदान करें।

नीहार, तुम्हारे पत्र से मन को बडा आघात लगा है और जिस तरह बवडर में सूखा पत्ता इधर से उधर मारा मारा फिरता है उसी तरह मरा मन भी डावाडोल होकर इधर से उधर भटक रहा है। क्या उसे कोई आश्रय या आधार नही मिलेगा?

तुम्हारी ही
डौरोथी

डौरोथी क पत्र को पढकर मन अशात एव विक्षुब्ध था। तबियत उचट रही थी जी मे आता था कि पख लगाकर स्वदश उड चलू और वहा पहुँच कर चुपके से डौरोथी के पीछे जाकर उसकी आखो को उसी तरह मीच लू जसा कि आज से पाच छ वष पूव स्वय डौरोथी न मेरी आखो को मीचा था।

पर मनुष्य की विवशतायें होती हैं और उसका उत्तरदायित्व उसे टस स मस नहीं होने देता। मेरे अध्ययन-काल के तीन माह अभी शेष थ। जिस काय के लिये आया था, उसे अतिम सोपान में छोडकर कैसे जा सकता था। अत विवेक और आत्मनियन्त्रण की तुला पर एक एक अक्षर तोल कर मैंने एक ऐसा पत्र डौरोथी को लिखा जिससे वह आश्वस्त हो सके। उसकी शकाओ एव भ्रात धारणाओ का निराकरण किया और उस विश्वास दिलाया कि मैं केवल तुम्हारा हूँ केवल तुम्हारा।

स्वाभाविक ही था कि एसे उत्तर से उसे पूर्ण मानसिक सान्त्वना मिलती और वह मिली भी। आज शनिवार है। मन अवसन्न है, इस उदासीनता को

काटने के लिये किसी की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। चाहे प्रकाश गुप्ता आये, चाहे सुधीरा सान्याल अथवा डाक्टर स्टनविले के यहाँ से कोई निमन्त्रण मिले, मैं इस समय हर प्रस्ताव पर सहानुभूति के साथ विचार करूँगा। यह निर्णय मन में विवेक के मंच पर गूंज ही रहा था कि होस्टल के संदेशवाहक ने सूचना दी कि मेरा फोन आया है। फोन पर पहुँचने पर मालूम हुआ कि सुधीरा सान्याल उलाहना भरे शब्दों में कह रही है डाक्टर नीहार, पिछले पाक्षिक अवकाश पर हम लोगों ने आपकी बड़ी प्रतीक्षा की, किन्तु निराशा ही हाथ लगी। मम्मी ने तो आपके लिये न जाने कितने मधुर व्यंजन तैयार किये थे, किन्तु उस दिन आपसे फोन पर भी संपर्क न हो सका। हर बार यही सुनने को मिला कि डा० नीहार कहीं बाहर गये हैं। आप इस तरह से वचन भंग क्या करते हैं?'

मैंने इस तीखे प्रश्न से आहत होकर क्षमायाचना की, क्योंकि विगत अवकाश पर हम आयरलैंड की पहाड़ियाँ देखने चले गये थे। इस बात पर दुःख प्रकट किया कि उन मधुर व्यंजनों का मैं आस्वादन न कर सका यह मेरा ही दुर्भाग्य है। उन्हें आश्वासन दिया कि कल के रविवार पर मैं अवश्य ही उनके यहाँ उपस्थित रहूँगा और इस बार मेरे साथ, मेरे अनन्य मित्र प्रकाश गुप्ता भी रहेंगे। मेरी ओर से अपने पापा और मम्मी से भी क्षमायाचना कर लेना। विश्वास है कि इस त्रुटि का कल परिमार्जन कर सकूँगा।

सुबह जब बिस्तरे से उठा तो मन में न जाने क्या एक अभूतपूर्व उल्लास था। गुत्थी सुलझ गई थी और मैं उस दिशा में निर्णायक कदम उठाना चाहता था कि आ गये मि० गुप्ता। उन्हें देखते ही तपाक से बोला

"अमाँ गुप्ता, तुम्हारी तकदीर बड़ी सिकन्दर है। चलो आज तुम्हें सुधीरा सान्याल के यहाँ ले चलें।'

"नीहार तुम बड़े तीसमारखाँ हो। तुम तो बालू रेत में से भी तेल निकालना चाहते हो।'

गुप्ता, आज तुम्हें क्या हो गया है? कैसी बेमतलब की बात कर रहे हो! आज तुम्हारे मन की कली न खिलवा दूँ, तो मुझे डा० नीहार कहना ही छोड़ देना।"

'अरे यार, तुम्हारी तो पाँचों उँगलियाँ घी में है, अपने को कौन पूछता है!"

गुप्ता तुम बड़े घोंचू हो जरा अपने दोस्त के करिश्मे आज देखो, फिर बात करना।"

गुप्ता की समझ में नहीं आया कि आखिर मैं क्या कर रहा हूँ, पर मेरे सम्मुख

जो चोट लगी थी, उससे वह अपने आपको उबार नहीं पाई थी। मैंने गुप्ता और मिस सान्याल की मैत्री को सुदृढ़ करने की अनेक चेष्टायें की, पर वाछनीय सफलता हाथ न आई!

ओ नारी, कैसा है तुम्हारा हृदय, नवनीत-सा कोमल और आवश्यकता पड़ने पर वज्र-सा कठोर भी!

उस दिन न जाने क्या सान्याल परिवार की दावत को मैं 'एंजोय' न कर सका, दूसरी ओर सुधीरा भी कुछ उचटी-उचटी-सी बातें कर रही थी। ऐसा लग रहा था कि साँप निकल गया है और लाठी बेकार होकर खड़-खड़ हो गई है। हाँ, यह जरूर था कि श्रीमती सान्याल प्रकाश गुप्ता में रुचि ले रही थीं और इस बात की सम्भावना उज्ज्वलतर होती जा रही थी कि प्रकाश और सुधीरा का जोड़ा बड़ा ही सामयिक होगा।

□□

इग्लड प्रवास का मग जीवन, अब अपने अन्तिम चरण पर था और धीरे धीरे परीक्षा के चाप मेरी ओर बढ़ते चले आ रहे थे। अपने मानसिक जीवन की उलझनो के बावजूद मैं पढ़ने का प्रयास करता था पर उतनी सफलता नही मिल पा रही थी, जितनी कि मुझे इष्ट थी। परीक्षा के भाव म कुछ ऐसा गाम्भीर्य है कि वह सब तरफ से मन को हटाकर अपने आप म तल्लीन कर रहा था। मैंने सभी सभावित प्रश्न तयार कर लिये थे और डाक्टर स्टनविल ने उन्हे कृपापूवक देखकर आवश्यक सशोधन परिवद्धन भी कर दिया था।

अब मैं इसी पठन सामग्री से दिन रात जूझता रहता और अध्ययन के अश्व परीक्षा के रथ को ग्रहण करने के लिये उत्तरोत्तर उतावले होते जा रहे थे। ऐसा लगता था कि दो साल का जीवन अब अपनी अतिम परिणति चाहता है। डाक्टर कनेरा का पत्र मुझे इसी बीच मिला। उन्होने चिंता प्रकट की थी कि डौरोथी को मैंने न जाने क्या लिख दिया है कि वह बडी उद्विग्न रहने लगी है। इस प्रकार की सूचना उन्हे सिस्टर फ्रकलिन से मिली थी। उन्ही की प्रेरणा से डाक्टर कनेरा ने मुझे लिखा था और समझाया था कि यद्यपि प्रणय की रगीनियाँ विचित्र होती हैं और उनमे किसी का हस्तक्षेप पसन्द नही किया जाता, फिर भी वह डौरोथी और डाक्टर नीहार के सुदर भविष्य की दृष्टि से, कुछ बातें लिखने का, मोह सवरण नही कर पा रही हैं।

उन्होने सीख दी थी उनकी कल्पना म डौरोथी से अधिक उपयुक्त जीवन सगिनी और कोई नही हो सकती, यदि मैं अपने जीवन को सुखी बनाना चाहता हूँ तो मुझे अपना अतिम निर्णय बहुत सोच समझ कर ही लेना होगा। साथ ही म उन्होने लौटते समय कुछ चीजें लाने का भी आग्रह किया था चूकि ये सब चीजें हल्की-फुल्की थी, इसलिये मुझे इन्हे लाने म कोई कठिनाई न होगी ऐसा भाव भी प्रकट किया गया था। अपने पत्र के अत म उन्होने नसीहत दी थी कि मैं अपने अध्ययन के प्रति जागरूक रहूँ और सभी प्रियजनो की आकाक्षाओ के अनुरूप परीक्षा मे उल्लेखनीय सफलता प्राप्त करू।

मैं उलझन मे था कि मेरे मन की बात फ्रकलिन से होती हुई डाक्टर कनेरा तक कस जा पहुची! क्या डौरोथी ने मेरी स्पष्टोक्ति को इतने भयानक रूप म

ग्रहण किया है ! लडकियाँ प्रणय के सम्बन्ध म इतनी नादान क्यो होती हैं ? यदि उनका प्रणय पल पर भर के लिये भी आशका ग्रसित हो जाय, तो वे कितनी विक्षुब्ध हो जाती हैं !

मन में न जाने क्या आया कि डौरोथी के चित्र का हाथ मे ले लिया और उसके नयनो के सूक्त सदृश को पढने लगा। एक हल्की सी चपत भी उसके चित्रगत कपोलो पर लगा दी और अनायास ही मुँह से निकल गया

"डौरोथी तुम सचमुच बडी नादान हो !
ओ भावो के चचल यौवन,
मैं तो करता हू प्यार तुम्हे केवल !"

यह सदेह, यह आशका क्या ? खैर, इस तूफान को भी चलने दो। किसी शाति के प्रभात म स्वयमेव यह स्पष्ट हो जायेगा कि नीहार क्या है, और वह डौरोथी के बारे मे क्या सोचता है ?

तभी किसी ने मन के द्वार पर हल्की सी दस्तक दी यह परीक्षा महारानी थी। कह रही थी, 'अरे नीहार, सभल जाओ, वरना पछताओगे ! बीता हुआ समय लौटाया नही जा सकता। तुम सब उलझनो से मुक्त होकर केवल मेरी आराधना करो केवल मेरी

"सर्वधर्मान् परित्यज मामक शरण व्रज !'

मैंने इस दिव्य आकृति के सम्मुख साष्टाग प्रणिपात किया और उसके सम्मुख प्रतिज्ञा की देवि, आभारी हू तुम्हारा ! अब यह नीहार सोते जागते, खाते पीते उठते बठते, केवल तुम्हारी ही आराधना करेगा !"

प्रकाश गुप्ता को साफ साफ शब्दो में बता दिया कि अब वह प्रति सप्ताह न मिलकर महीने मे केवल एक बार मिले और सर सपाटे का प्रस्ताव भूल कर भी न लाय। महीने म केवल एक घण्टे के लिये मिलेगा और उन्ही विषयो पर विचार विनिमय करेगा, जो आगे के लिये टाले नही जा सकते। वह अपनी भावनाओ की अभिव्यक्ति के लिये डायरी लिख सकता है और परीक्षा समाप्ति पर उसका सम्मिलित रूप से आनन्द लिया जा सकता है। गुप्ता ने अनमन मन से इस प्रस्ताव को स्वीकार किया क्योकि उसकी भी परीक्षा सिर पर आ खडी हुई थी !

यह विद्यार्थी की जाति भी बडी निराली है ! परीक्षा-काल मे इनकी अनन्यता, निष्ठा एव सयम, दर्शनीय होता है। यदि ये जीवन के प्रत्येक दिवस को इसी रूप म लें, तो दुनिया निहाल हो जाये, पर यह ऐसी अन्तर्निहित शक्ति है जो केवल परीक्षा के सामीप्य म ही अपना जौहर दिखाती है।

भाजन मे भी मैं काफी काट छाट की, अब बवत लच लता हूँ और डिनर के स्थान पर फल एव दूध ताकि स्फूर्ति बनी रहे और निंदिया रानी अधिक तग न करे। नित्य प्रात घूमने निकल जाता, साथ मे अपने नोटस की कापी भी होती और किसी एकान्त स्थान पर बैठ कर उसका पारायण करता। दिनोंदिन *आत्मविश्वास बढता चला जा रहा था, अनेक विषय कण्ठस्थ हो गये* थे और मौलिक दृष्टि से भी कुछ विचार मन मे उमडने लगे थे। सोच रहा था कि परीक्षा के उपरात चिकित्सा विज्ञान पर कुछ शोधमूलक निबन्ध लिखूगा। इस दिशा मे भी मुझे गौरवपूर्ण सफलता प्राप्त करनी है।

□ □ □

आज १८ मार्च है। बड़े उत्साह और प्रेरणा से मेरा पहला प्रश्नपत्र सम्पन्न हो गया है। लिखते लिखते उगलिया थक गई हैं पर विचारो के तुरग आराम नहीं लेना चाहते। अभी उत्तर-पुस्तिका देने मे १५ मिनट शेष हैं। मेरी दृष्टि मे परीक्षा हाल का सुविस्तीर्ण वातावरण समा गया है। कैसे मनोयोग से लोग बैठे हुए लिख रहे हैं किस प्रकार निरीक्षक चहलकदमी कर रहे हैं और किस प्रकार विद्यार्थी ध्यान-मग्न हैं! इस सारे दृश्य को एक ही दृष्टि मे आत्मसात् कर मैं अपनी लिखित सामग्री को दुहराने लगा। यत्र-तत्र आवश्यक सशोधन किये, कहीं कुछ वाक्य काटे और कहीं कुछ नये जोड दिये।

परीक्षा-महारानी का प्रथम साक्षात्कार बडा दिव्य एव प्रेरणादायी सिद्ध हुआ। पर्चे पर पर्चे इसी उल्लास एव स्फूर्ति के साथ समाप्त होते चले गये और आज २८ मार्च है मेरी परीक्षा का अन्तिम दिन! आज के पर्चे को समाप्त कर कल मैं परीक्षा के पिंजरे से मुक्त हो जाऊगा, उन्मुक्त आकाश मे उड़ने के लिये स्थगित जीवन से गले मिलने के लिये और उन भावनाओं को जीने के लिये, जो मेरे प्राणो मे निरतर कपन भरती रहती थी। परीक्षा-देवी से मैंने अन्तिम विदा ली और प्रकाश गुप्ता से मिलने के लिये आतुर हो उठा। *उसकी परीक्षा २५ मार्च को ही समाप्त हो चुकी थी* पर मैंने उसके ध्यान पर रोक लगा रखी थी, इसलिये उस प्रतिबन्ध का उद्घाटन करने के लिये ही उसके यहाँ उपस्थित होना था! उसके कमरे पर पहुँचा, तो हजरत निद्रालीन थे, ऐसा लग रहा था कि प्रश्नपत्रों के घोडे बेच कर वे निश्चिन्त निद्रा मे तल्लीन हैं जी मे आया कि उसके कम्बल को हटाकर मैं भी उसी के साथ सो जाऊ! यह विचार मन मे उलझ ही रहा था कि रेडियो पर रखी हुई सुधीरा की फोटो जैसे बोल उठी

"अरे एक नजर तो इधर भी डालो हम भी क्या बुरे हैं! "

तो जनाब कई मंजिलें तै कर चुके हैं, जो बीज वीराने मे डाले गये थे, वे निष्फल नही गये है। समय पाकर वे लहलहाती फसल के रूप मे दिखाई दे रहे हैं, और उनके बीच से एक चेहरा झांकता हुआ कहता है

"सुना जी सुनो, अजी महरबा हमारी भी सुनो "

तभी मन की किसी अज्ञात प्रेरणा से मैंने प्रकाश गुप्ता के कम्बल को तनिक सिरहान से उठाया और उसे जगाते हुये कहने लगा

"अरे यार उठो भी, आज हम दोनो आजाद हो गय है, जिम्मेवारिया और झंझटों से। आओ, अब खुल कर चंद दिन इस मुल्क का मजा लूट लिया जाये।"

"हजरत नीहार हैं! अमा, हम तो सोच बैठे थे कि तुम ता इम्तिहान मे ही दफ्न हो जाओगे, पर तुम ता जजीरें तुड़ाकर यहाँ तक आ गये हो, लाहौल बिलाकूवत!' प्रकाश गुप्ता ने उनींदी आखो को मलते मलते कहा ।

"जनाब आखें ही मलते रहेंगे या कुछ चाय-काफी का भी इन्तजाम करेंगे?" मैंने उपालम्भ के स्वर मे कहा।

तभी प्रकाश गुप्ता ने 'प्रेस बटन' को दबाया, जिसके परिणामस्वरूप तुरत ही एक सेवक हमारे समक्ष उपस्थित था। उसे आवश्यक निर्देश दिये गये और कुछ ही समय के उपरात काफी, टोस्ट और पोटैटो चिप्स हमारे सामने थे।

प्रकाश गुप्ता ने मुह धोया और तौलिया से मुह पोछते हुए नाश्ते पर आ जुटा, उस पहलवान की तरह जो मालिश करते करते उकता चुका हो और अखाड़े मे कूद पड़ा हो!

'मालूम होता है आज पहली बार तसल्ली से नाश्ता किया जा रहा है। शायद इतने दिन तक तो नाश्ते की खानापूरी ही होती रही है!" मैंने किंचित् व्यंग्यमिश्रित वाणी में कहा।

'हाँ नीहार, यह बात तो बिल्कुल सही है। इम्तिहान के दिनो मे नाश्ता करने की फुरसत किसे थी! सोचते थे, इतनी देर मे कुछ और पढ ल या कुछ और तयार कर ल। अब तो परीक्षा की कालरात्रि समाप्ति हो गई है इसलिये खूब जमगी, जब मिल बैठेंगे दीवाने दो!" गुप्ता न जम्हाई लेते और होठ पर जीभ फेरते हुये कहा।

आज की काफी बडी नायाब बनी है। टोस्ट भी इतना अच्छा लग रहा है कि समूचा खाजाऊ!

'अरे हा खूब खाओ। आज आजादी का जश्न जो मनाना है! मरी बात

माना तो कुछ पिया भी। मर्ती बिगड़ हो रही है और तुम उसकी बिल्कुल मनुहार नहीं कर रहे। बड़े सूखे आदमी मालूम होते हो।"

"आदमी तो तुम लाजवाब हो गुप्ता पर मैं तो पंडित मौलवी जो ठहरा हाथ लगाऊंगा तो नापाक हो जाऊंगा। तुम अपने हाथ से पिला सकते हो।"

"यह भी खूब रही! हाथ नापाक होने का तो डर है, आंत अगर नापाक हो गई तो फिर क्या होगा?"

"उसका कसूर तो अल्लाताला की डायरी में तुम्हारे नाम लिखवा दूंगा। जो काम अपने हाथ से न हो, उसमें तो दूसरे की प्रेरणा या जबर्दस्ती ही मानी जाती है।"

"हां भाई तुम्हें ठोक पीट कर वैद्यराज बनाना ही होगा!" कहते हुये गुप्ता चुपके से उठा और अपनी आलमारी से 'स्काच व्हिस्की' की एक बोतल और दो गिलास निकाल लाया।

"अच्छा तो हजरत ने पहले से ही इंतजाम कर रखा है तुम हो बड़े चारसौ-बीस! किसी का धर्म बिगाड़ने में तुम्हें तनिक भी हिचक नहीं!"

"अरे पोंगापंथी डाक्टर क्या धरम-करम लगा रखा है! अगर तुम्हारे यही ख्यालात रहे तो तुम्हारी डाक्टरी फेल हो जायगी। बिना लापरी की दीक्षा के कोई हुनर कामयाब नहीं होता!"

"तो आज तुम पिलाकर ही मानोगे। लो भाई आज तुम्हारा कहा माने लेता हूं आगे इसरार मत करना!"

देखता हूं कि गुप्ता ने बड़े अन्दाज से बोतल खोली और गिलास में उसे उड़ेलने लगा। ऊपर से कुछ सोडा भी डाल दिया और तब उसे मेरी ओर बढ़ाने लगा। मैंने कहा "यह तो तुम पियोगे! अपना गिलास मैं खुद तयार करूंगा और पिलाओगे तुम।"

"बड़े नाज-नखरे हैं जनाब के! खैर तुम भी करलो अपने मन की!"

मैंने कांपते हुये हाथों से अपने गिलास में पहले सोडा डाला और तब ऊपर से घूंट भर व्हिस्की और ऐसे गिलास को गुप्ता की ओर बढ़ाकर कहने लगा "तुम अपने मेहमान का सत्कार कर सकते हो!"

"मेहमान साहब बड़े चालाक मालूम पड़ते हैं। व्हिस्की पी रहे हो या मजाक कर रहे हो!"

"अमां तुम तो नाहक नाराज हो रहे हो मैं तुम्हारी तरह पियक्कड़ थोड़े हूं।

हू। एक घूट भी पुरअसर होगा।"

मेरी बात पर तनिक गौर करते हुये गुप्ता ने एक अनोखे अदाज से वह गिलास मेरे होठो पर लगा दिया। पहला घूट पिया ही था कि न तो निगलते बनता था, न उगलते! बडी मुश्किल से उसे निगला और तब नाक बद कर बाकी जामेसेहत को भी गटागट चढा गया! जीभ से लगाकर कलेजे तक कडवेपन की एक लकीर–सी खिच गई और जो निगला था, वह बाहर आने के लिये जसे मचलने लगा! तभी गुप्ता ने मेरे मुह के स्वाद को बिगडता हुआ देखकर फटाफट पोटटो–चिप्स की कतरिया खिलानी शुरू की। इससे मुह का जायका तनिक सुधरा और मैं कुछ प्रकृतिस्थ हुआ। गुप्ता अब तरन्नुम मे था। इश्क की शायरी उसकी जबान से फूटी पडती थी। जामेसेहत का जादू, उसके सर पर चढकर बोल रहा था! हल्का सुरूर मुझे भी हो आया था। गुलाबी नशा बडा माफिक लग रहा था, पर गुप्ता तो इस समय बड मूड मे था। उसके दिल पर से विवेक का नियन्त्रण शिथिल हो गया था और वह अपने दिल की बातें उछाल–उछाल कर कह रहा था

"अरे डाक्टर, तुम आदमी लाजवाब हो! तुमने सुधीरा सान्याल से क्या परिचय करवाया अपनी तो पाचो उगलिया घी मे हैं! श्रीमती सान्याल मुझे बडा स्नेह करती हैं पर सुधीरा न जाने क्या बिदकी–बिदकी-सी रहती है! अमा, हमे भी कुछ बता तो दो गुर, उसके दिल को रोशन करने का! तुम्हारा असर उसके दिलोदिमाग से अभी हटा नही है।"

अरे गुप्ता तुम्हारे लिये मैंने मदान छोड दिया है। अब यह तुम पर निर्भर करता है कि तुम उसे अपने दिल की रानी बनाओ, फिर भी एक सच्चा दोस्त होने के नाते, मैं तुम्हारे लिये हर सभव चेष्टा करूगा।"

'हा, यह बात कही ढग की। तुम आदमी शहनशाह हो! दिल हो तो ऐसा हो!

'मिस्टर गुप्ता मैंने सुधीरा को साफ–साफ बता दिया है कि मेरा इरादा क्या है मैं उसे एक अच्छी मित्र के रूप मे ही ले सकता हूँ न एक रत्ती ज्यादा न एक रत्ती कम!'

अरे मीहार, वह तुम्हारी मित्र कहा है वह तो तुम्हारी होने वाली भाभी है!'

तुम्हारी जबान को खाड–घी खिलाऊ! तुम दूर की कौडी लाते हो।

इस दिलचस्प बातचीत के बाद गुप्ता ने बडी गम्भीरता से जिगर अकबर इलाहाबादी से लगाकर शकील बदायूनी तक की शेरो शायरी मुझे सुनाई। मैंने

भी उसे मीरां, विद्यापति, जयदेव और रवीन्द्र का शृंगारिक काव्य सुनाया। यह सारा दिन आजादी के जश्न में पलक मारते ही बीत गया। हमने उस दिन ही तय किया कि अगले सप्ताह इंग्लैंड से कूच कर इटली पहुँचेंगे और वहाँ के सैर-सपाटे के बाद स्वदेश की ओर प्रस्थान करेंगे।

□ □ □

इटली वास्तव में झीलों और तालाबों का मुल्क है। यहाँ इंग्लैंड और फ्रांस की तुलना में सर्दी कुछ कम ही पड़ती है। भूमध्यसागर के किनारे होने के कारण, यहाँ का जलवायु समशीतोष्ण है। यहाँ के लोग नहाने-तैरने के बड़े शौकीन हैं। रोम धार्मिक और राजनैतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। मिलान में समुद्र का सुरम्य तट बड़ा मनोहारी है। झीलों से निकली हुई कृत्रिम नहरें, लोगों के आकर्षण का केन्द्र बिन्दु हैं। सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि यहाँ के लोगों का रंग शेष यूरोप की तुलना में कुछ साँवला है। अनेक चेहरों को देखकर तो ऐसा प्रतीत हो रहा था कि हम स्वदेश में पहुँच गये हैं।

डाक्टर स्टनविल, मेरी स्टनविल और सुधीरा सान्याल हमें सी ऑफ करने इटली तक आये थे। बातों ही बातों में डा० साहब ने बताया था कि वे परीक्षा परिणाम को हवाई तार द्वारा हमें तक यथाशीघ्र पहुँचा देंगे। उनकी इस कृपा के लिये मैंने आभार प्रकट किया और उनसे अनुरोध किया कि वे किसी मांगलिक अवसर पर अवश्य ही भारत सपरिवार पधारें। मेरे अनुरोध के बीच में ही बात पकड़ी मेरी स्टनविल — डैडी यू मस्ट विजिट इण्डिया द लैंड आफ फिलासफरस, सेंटस एण्ड पोयटस। (डैडी हमें दार्शनिकों सन्तों और कवियों के देश भारत को अवश्य ही देखना चाहिये!)

'ओ यस डाक्टर चटर्जी हैज गिवन मी ए स्टैंडिंग इन्वीटेशन टु विजिट इण्डिया।' (डाक्टर चटर्जी ने मुझे भारत आने के लिये स्थायी रूप से आमन्त्रित किया है।)— भारत के कल्पना चित्रों को अपने तीक्ष्ण नेत्रों से देखते हुए डाक्टर स्टनविल ने कहा।

सर नाऊ अगेन आइ एम इन्वाईटिंग यू आन माई आन बिहाफ एण्ड आन बिहाफ आफ स्वरूप चटर्जी। (महोदय, मैं अपनी ओर से तथा डाक्टर चटर्जी की ओर से सादर एवं साग्रह, आपको आमन्त्रित करता हूं।)

आलराईट वी विल एक्म्पनी विथ यू जस्ट नाऊ वी हैव आलरडी ट्रैवल्ड विथ यू अपटु दिस कंटरी! (हां यह ठीक है, हम आपके साथ अभी चले चलते हैं। इटली तक तो हम लोग आ ही पहुंचे हैं!) —विनोद के भाव को

होठो पर थिरकाते हुये मेरी स्टैनविले चिहुक उठी, और उनका अनुमोदन किया सुधीरा सान्याल ने।

'जनाब क्या आप मुझे अपनी मातृभूमि, जो कि मेरी भी है मे आने का अवसर नही देंगे?' किंचित् विनोद के भाव से कहा सुधीरा सान्याल ने।

"अरे आपको तो मैं पहले ही निमन्त्रित कर चुका हूँ। मेरे निमन्त्रण को आप माने या न मानें, पर नीली के आग्रह को आप टाल नहीं सकती।' मैंने ममता के साथ मिस सान्याल की ओर उन्मुख होकर कहा।

इटली मे बिताये हुये तीन दिन ऐसे प्रतीत हुये जसे हम योरोप और एशिया के मध्य मे, एक ऐसे भूखण्ड म पहुच गये हैं, जहा न तो अधिक सर्दी पडती है और न अधिक गर्मी! यहा का समशीतोष्ण जलवायु सलानियो के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र बिन्दु है। झीलो का यह प्रदेश बड़ा मनोरम है। प्राय सध्या के समय लोग नौका-बिहार करत है और सर सपाटे को, जल के विस्तृत प्रदश मे, दूर-दूर तक निकल पड़ते हैं।

एसी ही एक बडी झील मे, मैं और मेरी स्टनविले नौका बिहार के हेतु निकल पडे। सुधीरा सान्याल और गुप्ता 'शॉपिंग" के लिये गये हुये थे। डा० स्टनविले इटली के एक प्रसिद्ध मैडिकल कॉलेज मे व्याख्यान देने गये थे। इस एकात का मैं अधिक से-अधिक लाभ उठाना चाहता था। इसीलिये मैंन मेरी स्टनविले को जलबिहार करने के लिये राजी कर लिया था।

यह पहले ही बतला चुका हू कि मेरी स्टनविले अत्यन्त ही सुसस्कृत एव शालीन रुचि की तरुणी है। उन्हे कविता और दशन से विशेष अनुराग है। यो प्रकृति से मितभाषिणी, सकोचमयी एव गौरवशील हैं, किंतु जब खुलती हैं, तो अनायास ही पीले गुलाब की सुरभि उनकी बातो म मुखरित होने लगती है। दशन को किसी गुत्थी के सदभ म बात छिड जाने पर उनके मन की कली खिल जाती है!

"यग मैडम, विल यू प्लीज टल मी वाट इज लाईफ?' (ओ नौजवान साथिन, क्या तुम बता सकोगी कि जीवन क्या है?) किंचित् गम्भीरतापूवक मैंने अपने इग्लड प्रवास के सवा दो वष पर दृष्टिपात करते हुये कहा।

'डा० नीहार, टू माई माईंड लाईफ इज ए कॉन्सटेंट वरशिप आफ एक्शन एण्ड कम्पलीट डडीकेशन फॉर द ड्रीम्स व्हिच एन इडीविजुअल हार्वेस्टस इन हिज हाट। (डा० नीहार मेरी दृष्टि में जीवन एक प्रेरणा है, काय की सतत पूजा है और उन स्वप्नो के प्रति एक महान् समपण है जिन्हे कि हम अपन

ढोलें, पर ज्ञान तो केवल एक सेतु है, जिसे मनुष्य जीवनधारा को पार करने के लिये काम मे लेता है। ज्ञान अपने आप मे जीवन का लक्ष्य कभी नही रहा। उसकी परिकल्पना तो जीवन को सुखद एव सामजस्यपूर्ण बनाने मे ही रही है। ज्ञान की चेतना हममे अहकार जगाती है और यह अहकार हमार मन के खोखलेपन की प्रतिध्वनि होता है। "थोथा चना बाजे घना" म एक महान् तथ्य की अभिव्यक्ति है। मैंने अनुभव किया कि मुझे गम्भीर होना है, चपलता एव हास्य विनोद को कुछ समय के लिये निर्वासित कर देना है।

नौका म बठे हुये हम दोनो एक दूसरे की ओर निहारते रहे और अस्तगत रवि की अन्तिम किरणें, हमारे मुखमण्डल से अठखेलियाँ करती रही। सहसा एक भाव मन म पूरे वेग के साथ उदित हुआ और मेरी जिह्वा से जसे एक मन वही बात ऐसे फिसल पडी, जसे प्रात होते ही घोसले से चिडिया 'फुर' हो जाती है।

'मेरी, आई सी यू विथ रस्पक्टेड प्राइज। योर स्वीट प्रेजेंस हैज आनवज इसपायड मी। नाऊ ह्व न आई एम पार्टिंग विथ दिस काटीनट, आई मस्ट पे ए होमेज टू योर एवरलास्टिंग स्वीट प्रजेंस, विच हैज इसपायरड मी एण्ड हैमड अपोन मी टू पर्सीव ए पर्फेक्ट आईडोल।" (मेरी, मैं तुम्हें सम्मान की दृष्टि से देखता हूँ। तुम्हारी मधुर उपस्थिति ने मर जीवन को एक दिव्य प्रेरणा स परिप्लावित किया है। अब जब कि मैं इस महाद्वीप से वियुक्त हो रहा हूँ तो जी चाहता है कि तुम्हारे चरणा मे एक विमल श्रद्धा-जलि अर्पित करू जिसने कि मेरे जीवन को प्रेरणापूर्ण बनाया है और जिसकी कृपा से मेरा अनगढ जीवन एक सुगठित एव मांसल मूर्ति बन गया है।)

"डाक्टर यू हैव बीन कप्टीवेटिड विथ दी फीलिंग्स आफ चीप सेंटीमेटेलिटी।" (डाक्टर आप सस्ती भावुकता के वशीभूत हो लाचार हो गये हैं।)

"आई हैव ए ग्रट रिगार्ड एण्ड सिम्पथी फॉर यू।" (मेरा मन आपके प्रति अनन्यभावना एव सवेदना से ओत प्रोत है।)

'आई एम रियली ग्रेटफुल फॉर दीज़ रिच एण्ड इन्सपायरिंग मौमेंट्स, आई शैल नवर फॉरगेट दीज़ स्वीट अटरेन्सिज।" (मैं इन मधुमय क्षणो को कभी भी विस्मृत न कर सकूगा!)

इसके उपरात मैंने मेरी स्टनविले से वचन लिया कि वह अपने पूज्य पिता के साथ अवश्य ही भारत आयेंगी और यह अनुभव भी करेंगी कि विधाता ने न जाने कौनसी भूल के कारण उन्हें यूरोप मे जन्म दिया है। वह तो वास्तव मे

ढोलें, पर ज्ञान तो केवल एक सेतु है, जिसे मनुष्य जीवनधारा को पार करने के लिये काम मे लेता है। ज्ञान अपने आप में जीवन का लक्ष्य कभी नही रहा। उसकी परिकल्पना तो जीवन को सुखद एव सामजस्यपूर्ण बनाने मे ही रही है। ज्ञान की चेतना हममे अहकार जगाती है और यह अहकार हमारे मन के खाखलेपन की प्रतिध्वनि होता है। "थोथा चना बाजे घना" म एक महान् तथ्य की अभिव्यक्ति है। मैंने अनुभव किया कि मुझे गम्भीर होना है, चपलता एव हास्य विनोद को कुछ समय के लिये निर्वासित कर देना है।

नौका मे बठे हुय हम दोनो एक दूसरे को और निहारते रहे और अस्तगत रवि की अन्तिम किरणें, हमारे मुखमण्डल से अठखेलियाँ करती रहीं। सहसा एक भाव मन मे पूरे वेग के साथ उदित हुआ और मेरी जिह्वा से जसे एक अन वही बात ऐसे फिसल पडी, जसे प्रात होते ही घौंसले से चिडिया 'फुर' हो जाती है।

"मेरी, आई सी यू विथ रेस्पक्टेड आइज। यार स्वीट प्रेजेंस हैज आलवेज इन्सपायर्ड मी। नाऊ, ह्व न आई एम पार्टिंग विथ दिस कॉंटीनट, आई मस्ट पे ए होमेज टू योर एवरलास्टिंग स्वीट प्रजेंस, विच हैज इसपायरड मी एण्ड हैमड अपोन मी टू पर्सीव ए पर्फेक्ट आईडोल।" (मेरी, मैं तुम्हें सम्मान की दृष्टि से देखता हूँ। तुम्हारी मधुर उपस्थिति ने मेरे जीवन को एक दिव्य प्रेरणा स परिप्लावित किया है। अब जब कि मैं इस महाद्वीप से वियुक्त हो रहा हूँ, तो जी चाहता है कि तुम्हारे चरणो मे एक विमल श्रद्धा जलि अर्पित करु जिसन कि मेरे जीवन को प्रेरणापूर्ण बनाया है और जिसकी कृपा से मेरा अनगढ जीवन एक सुगठित एव मांसल मूर्ति बन गया है।)

"डाक्टर यू हैव बीन कप्टीवेटिड विथ दी फीलिंग्स आफ चीप सेंटीमेंटेलिटी।" (डाक्टर, आप सस्ती भावुकता के वशीभूत हो लाचार हो गये हैं।)

"आई हैव ए ग्रेट रिगार्ड एण्ड सिम्पथी फॉर यू।" (मेरा मन आपके प्रति अनन्यभावना एव संवेदना से ओत प्रोत है।)

"आई एम रियली ग्रेटफुल फॉर दीज रिच एण्ड इसपायरिंग मोमेंट्स, आई शैल नवर फॉरगेट दीज स्वीट अटरेंसिज।" (मैं इन मधुमय क्षणो को कभी भी विस्मृत न कर सकूगा।)

इसके उपरात मैंने मेरी स्टनविले से वचन लिया कि वह अपने पूज्य पिता के साथ अवश्य ही भारत आयेंगी और यह अनुभव भी करगी कि विधाता ने न जाने कौनसी भूल के कारण उन्हे यूरोप म जन्म दिया है। वह तो वास्तव मे

भारतीय आत्मा है जो कि पाश्चात्य सभ्यता की रंगरेलियों से विरक्त होकर एक पवित्र एवं प्रेरणाप्रदायी जीवन बिताती रही है। उनकी आत्मा तो भारत भूमि के चरणों में भटकती रही है और वह दिन, सचमुच, कितना महान् होगा जबकि योरोप प्रवासी यह भारतीय मन अपने असली रूप में संसार के सम्मुख प्रकट होगा और ये सम्भावनायें जो सम्पूर्ण दूसरे रूप में साकार कितनी प्रगल्भ होंगी।

जब हम स्टाकिया' में लौटे तो सुधीरा मायाराम और गुप्ता अपनी शॉपिंग की चीजों को एक मेज पर सजा रहे थे और डाक्टर स्टानविले चिकित्सा विज्ञान की कोई स्टानियन पत्रिका पढ़ रहे थे। हमें लौटा हुआ देखकर सुधीरा जैसे हम दोनों पर झपट पड़ी और अनायास ही स्वाभाविक ढंग से कहने लगी ... देखो हम लोग तुम्हारे लिए सारी स्टकी ही खरीद लाए हैं। मेज पर बड़े करीने से स्टानियन कमरा फाउन्टेनपन-सेट ट्रांजिस्टर सेट और कुछ अत्यन्त कलात्मक साज सज्जा की वस्तुयें थीं। बाद में सुधीरा ने बताया कि इन सब उपहारों को मैं अकेला ही न हड़प जाऊं और नीना को भी उसका हिस्सा दे दूं।

एक बड़ी मजेदार बात यह हुई कि गुप्ता का भारत लौटने का इरादा बदल गया था और वह सुधीरा मायाराम के साथ पुनः लन्दन लौटने की सोच रहा था बशर्ते कि मेरी ओर से उसे ऐसी अनुमति मिल जाये।

'ओह वेरी गुड। ट्रस रविन्डि। (अरे यह तो बहुत अच्छा बहुत ही उत्तम!) डॉ० स्टनविल ने ठहाका लगाते हुये कहा। मेरी स्टैनविले भी इस बात पर प्रसन्न थीं कि उन्हें अब अकेले ही नहीं लौटना होगा, बल्कि उनके साथ दो सजीव प्राणी होंगे।

मैंने गुप्ता के कंधे को झकझोरते हुये व्यंग्यपूर्वक अत्यंत ही विनोदमयी वाणी में कहा क्या हजरत क्या सुधीरा का दिल भी खरीद लाये हो! बड़े तीसमारखां हो! मौका देखा और हावी हो गये!"

अमा, यह कला तो तुम्हीं से सीखी है। क्या यूरोप में रहकर भी भाड़ ही झोंकते रहते! घबराओ नहीं, हम दोनों जल्द ही भारत लौटेंगे। हां यह तो बताओ कि तुम और मेरी स्टैनविले, कहां कहां हो आये।

तब मैंने झील की मनोरम यात्रा का सुरम्य वृत्तान्त उसे कह सुनाया जिसे सुनकर गुप्ता भी तरंगित हुआ और कहने लगा ... तुम्हें दिन करते हम भी

आज मेरे योरोपीय प्रवास का अंतिम दिन है। भूमध्यसागर के तट पर जो जहाज खड़े हैं, उन्हीं में से एक का आश्रय लेकर मैं स्वदेश लौटूंगा। कलकत्ते मे वत्सला मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी। बम्बई में डौरोथी से मुलाकात होगी पर आज भविष्यत् के मिलन का शायद मन में उतना आह्लाद नहीं है जितना कि यूरोपीय प्रवास के इस आसन्न वियोग का। मनुष्य का मन बड़ा अजीब है वह भविष्यत् को बाद मे देखता है पहले वर्तमान से निबट लेना चाहता है।

मन न जाने कैसा हो रहा था। कुछ ही पल मे, मैं नवीन औद्योगिक सभ्यता के केन्द्र यूरोप से विदा ले लूगा और तब स्वदेश की भूमि मेरी कल्पना का विषय बन जायेगी। इस पल मैं अपने यूरोपीय प्रवास के पूरे २७ महीनो के जीवन पर दृष्टिपात कर रहा हूँ किन किन लोगो से मिला किन-किन ने मुझे उपकृत किया और कौन-कौन मेरी मानसिक चेतना के अभिन्न अंग बन गये? मुझे एक अच्छी-खासी लम्बी कतार दिखाई देती है पर फिलहाल मेरी दृष्टि इन व्यक्तियों पर टिकी हुई है डा० स्टनविले मेरी स्टनविल प्रकाश गुप्ता, सुधीरा सान्याल डा० सान्याल और श्रीमती सान्याल। इन सब की मुख मुद्रायें मेरे मन में तैर रही हैं और मैं मूक होकर मन ही मन इन सबको *प्रणाम करता हूँ*। इनमे से कुछ व्यक्ति मुझे विदा करने यहां तक भी आये है। कौन सा है ऐसा स्नेह जो इन्हें यहां खींच लाया है? मैं इन सबका अतिशय कृतज्ञ हूँ।

जहाज के जाने में अब केवल पाच मिनट हैं। अपने अपने स्थानो पर बैठ जाने का बिगुल बज चुका है। सहसा मेरे मन को न जाने क्या हुआ कि मैंने भारतीय परम्परा के अनुसार डा० स्टनविले की चरणरज ली और उन्हें साष्टांग प्रणाम किया।

'ओह नीहार, वाट आर यू डूइंग? वाट आर यू डूइंग? (अरे नीहार, तुम क्या कर रहे हो क्या कर रहे हो?)

मैं उनकी ओर मूक एवं श्रद्धामयी दृष्टि से निर्निमेष देखता हूँ, जैसे कह रहा होऊँ कि एकलव्य के देश के विद्यार्थी की यही परम्परा है।

'वेल आई एम नाट एक्स्टम्ड विथ इट। आई डु नॉट नो हाऊ टु ब्लेस

यू। मे गाड नावर ग्रॉन यू दा प्रोस्पॅरिटी, हैल्थ एण्ड वल्थ !" (अरे, मैं इस सबका अभ्यस्त नही हूँ। मैं नही जानता कि तुम्हें किस प्रकार आशीर्वाद दू। ईश्वर तुम पर समृद्धि, स्वास्थ्य एव सपत्ति की वर्षा कर !)

इस समय मुझे ऐसा लग रहा था जसे राष्ट्रों की सकीर्ण सीमायें ध्वस्त होगई हैं वरन, सस्कृति एव भाषा की सीमायें टूट गई हैं और विशुद्ध रूप से एक विश्वगुरु अपने अकिंचन, विनीत छात्र को विदा दे रहा है।

मेरी स्टनवित्ते कुछ-कुछ रूआसी सी प्रतीत हो रही थी। उसकी सूक्ष्म अनुभूतिया, जसे अश्रुधारा मे प्रवाहित होना चाहती हैं, किन्तु जिन्हें औप-चारिकता ने बीच में ही रोक लिया हो। उमस भरे बादलो से उसके लोचन बड जलद-गम्भीर प्रतीत हो रह थे। मैंने उसे अत्यत ही भावपूर्ण मुद्रा मे विशुद्ध भारतीय ढग से प्रणाम किया, जिसके उत्तर मे उसने भी अपने दोना हाथ जोड दिये और जसे कुछ न कहकर भी, बहुत-कुछ कह गई।

प्रकाश गुप्ता की आखो म शरारत नाच रही थी। उसे, मुझ से बिछुडने का कतई गम न था, बल्कि वह तो उलटे इगलड लौटने के कारण और अधिक प्रसन्न दृष्टिगोचर हो रहा था। हा, सुधीरा सान्याल अवश्य विचित्र मानसिक स्थिति म थी एक ओर नये मीत के मिलने का आह्लाद था, तो दूसरी ओर पुराने मीत के बिछुडने का गम भी था। वह इन दोनो की सधिरेखा में खड़ी हुई बडी अजीब लग रही थी। उसके व्यक्तित्व का अधीन रूप से परिप्लावित था और नैराश्य विषाद म निमज्जत! उफ यह भी कोई मानसिक स्थिति है! मानवीय जीवन कितना अधिक जटिल एव उसकी अनुभूतिया कितनी अधिक सश्लिष्ट हैं!—सहसा वह बुदबुदाई और उसने इस मानसिक स्थिति से पलभर के लिये उबर कर मुझे व ही आत्मीयतापूर्ण ढग स नमस्ते की। मैंने भी प्रगाढ आत्मीयता के साथ, उसकी भावना का प्रत्युत्तर दिया और प्रकट म अनायास ही बोल पडा 'सुधीरा, तुम प्रकाश के साथ भारत कब आ रही हो? नीली का निमत्रण याद है न?

उत्तर मे वह मुस्करा दी, जसे कह रही हो कि न जाने कब भारत आना होगा!

मैं अब जहाज के डक पर खडा होकर रूमाल हिला रहा था और उधर भी चार रूमाल मुझे विदा दे रहे थ! जब तक वे लोग दृष्टि से ओझल न हो गये, तब तक मैं निरतर रूमाल हिलाता रहा। उन सबका शरीर, जब शून्यवत् होगया और दृष्टि की पकड म आने से अस्वीकार करने लगा तो मैं मन मार कर अत्यत ही विक्षुब्ध अवस्था मे अपनी सीट पर जा बठा।

न जाने कितनी देर मैं इसी प्रकार अवसन्न रहा ! मुझे चेतना का बोध तभी हुआ जब एक अधेड सभ्रान्त महिला ने उसे सोते से जगा कर कहा 'क्या आप डिनर के लिये नहीं चलेंगे ?'

' मेम्म, तबियत जरा नासाज है । डिनर की कतई इच्छा नहीं ।

'अरे तुम 'सी सिक' हो रहे हो । चलो मैं उपचार करती हूँ और हल्का एवं पौष्टिक भोजन खिलाती हूँ ।'

पारस्परिक परिचय के उपरांत मालूम हुआ कि ये डा० शिवाकामु थी और जर्मनी में किसी महाराजा के साथ आई थीं । अब भारत लौट रही थीं । आश्चर्य की बात तो यह निकली कि वे डा० क्लेरा की परिचित थीं इसलिये उनसे आंटी जैसा स्नेह मुझे सारे रास्ते मिलता रहा । सोचता हूं कितना भाग्यशाली हूँ मैं ! जिस पल के लिये, मैं सोच रहा था कि मैं निपट अकेला होऊंगा वह पल भी किसी की स्नेहपूर्ण उपस्थिति से मंडित हो गया !

डा० शिवाकामु ने मुझे बताया कि वे महाराजा विक्रमसिंह को कैंसर के उपचार के लिये जर्मनी लायी थी किन्तु इससे पूर्व कि वे स्वस्थ हों, उनका प्राण-पंछी विदेश के गगन में उड़ चुका था ! उन्होंने तार द्वारा महाराजकुमार को बुलवा लिया था । वे महाराज की मृत देह को एक विशेष विमान में लेकर पहले ही बम्बई पहुँच चुके हैं । चूंकि डा० शिवाकामु मानसिक रूप से अत्यंत ही शोकाकुल थीं, इसलिये उन्होंने विमान यात्रा करना उचित न समझा और वे जलमार्ग से भारत पहुँचना चाहती थीं ।

चलो यह भी अच्छा हुआ । जीवन की वास्तविकता का एक रूप यह भी है । हम यौवन प्रणय आत्मीयता निष्ठा एवं साधना की कितनी बातें करते हैं किन्तु मनुष्य के जीवन का, भले हो वह कितना ही समय क्या न हो कैसा क्रूर अंत है ! उन्होंने मुझे बताया कि महाराजा को अपनी मातृभूमि से बड़ा लगाव था । वे घर सारी मिट्टी गंगाजल सूखी सब्जियां और न जाने कितनी तरह के नमकीन और मीठे खाद्य-पदार्थ अपने साथ लाये थे । उन्हें योरोपीय ढंग से रहना कतई पसन्द न था और वे बर्लिन में उसी प्रकार रहे जैसे एक हिन्दुस्तानी महाराजा अपनी रियासत में रहता है । रास्ते भर वे इसी प्रकार के अजीबोगरीब किस्से सुनाती रहीं । मैंने महसूस किया कि गम के सताये हुये दिल के लिये यह अच्छा मानसिक खाद्य है । यदि इस तरह का खाद्य मुझे न मिलता तो मेरे लिये रास्ता काटना दूभर हो जाता ! जल के उस विस्तृत प्रदेश में हमारा जहाज गजगति से निरन्तर आगे बढ़ा चला जा रहा था । नये मुल्क नए बन्दरगाह नई सभ्यतायें एवं विचित्र मानवता प्रतिदिन हमें

दिखाई देते और हम कहीं भी न रुकने का सकल्प कर, निरतर आगे बढते चले जा रहे थे।

☐ ☐ ☐

कई दिन और कई रात के सफर के बाद, अब स्वदेश का तट उसका आलोक उसकी जनता और इन सबके बीच मे मेरी मम्मी, नीली, डौरोथी और वत्सला का चेहरा भी मुझे कुछ-कुछ उभरता नजर आ रहा था। ज्यो-ज्यो हम स्वदेश के निकट होते चले जा रहे थे, त्यो त्यो मन आर्द्र भावनाओ के वेग मे भीगता जा रहा था। सोच रहा था कि न जाने मेरा मुल्क कितना बदल गया होगा, उसके रहने वाले कितने मुसललिफ होगये होगे और चिरैया-सी डौरोथी एव वत्सला किस प्रकार अपने अपने घौंसलो से झाक रही होगी। मम्मी और नीली किस तरह मेरे आने की बाट जोह रही होगी। इन्ही विचारो म डूबा हुआ था, कि डा० शिवाकामु ने सूचना दी कि हम अब चन्द घण्टो मे ही बम्बई की सुविस्तृत सडको पर होगे और वहा से अपने मनचाहे स्थाना पर जा सकेंगे।

अनन्त जलराशि के निभृत-लोक से निकल कर, अब हम कोलाहलमय जीवन के निकट पहुँचने वाले हैं। मातृभूमि का तट, उसकी सुरम्य प्रकृति, जसे एक ललक के साथ हम सबका आह्वान कर रही है। लगता है, जसे यह विशाल भूमि साक्षात् भारतमाता बनी हुई एक स्नेहमयी जननी के समान अपने पुत्र एव पुत्रियो को, अपनी ममतामयी गोद मे ले लेने के लिये विकल है। मातृभूमि का यह प्रबल सम्मोहन, इससे इतने दिन विलग होने के कारण और भी अधिक तीव्र हो गया था। भारत मे रह कर ऐसी अनुभूति कभी महसूस नही की गई थी पर आज मुझे ऐसा लग रहा था, जसे प्रत्येक प्रौढा नारी एक माता है, प्रत्येक समवयस्क तरुणी मेरी बहन अथवा मित्र है प्रत्येक बुजुग जसे पितृ तुल्य हैं और प्रत्येक नवयुवक जसे लक्ष्मण के समान ममतामय भ्राता। भारतमाता के ऐसे दिव्य रूप को मैंने इससे पूव कभी न देखा था।

बम्बई का सुहाना तट अब बहुत निकट आ गया था और हमारे जहाज ने लगर डाल दिया था। हम सब अपना अपना सामान सभाल रहे थे और उतरने को उत्सुक थे। चुगी अधिकारियो से निपट कर, मैं ज्यो ही तट पर पैर रखता हूँ तो देखता हूँ कि एक बहुत भारी भीड को चीर कर डौरोथी और नीली जसे मेरे पास दौडी आरही हो। उनके पीछे पीछे मम्मी क्लेरा जटकिन और सिस्टर फ्रंकलिन, धीर कितु उल्लसित चरणो के साथ आगे बढी चली आरही थी।

दौडी दौडी नीली आई और वह मेरी कमर क* आवेग के साथ पकड कर मुझ से ही लिपट गई जसे इतने दिनो का अलगाव आज अपना विवेक एव सयम छोडकर आतुर हो उठा हो। डौरोथी मूक दृष्टि से भाई और बहन के मिलाप को देख रही थी और उसकी मुख मुद्रा से नमस्कार की भावना स्पष्टत व्यजित हो रही थी। नयनो का मूक सभाषण चल रहा था और जसे कुछ न कहते हुये भी हम बहुत कुछ पारस्परिक रूप मे कह रह हा। आखिर मैंने ही मौन को भग किया और कहा 'हलो प्रोफेसर डौरोथी नाउ यू आर ए लेडी लाइक ए फुल ब्लूम्ड मून!' (कहो प्रोफेसर डौरोथी अब तो तुम पूर्णिमा के शशि की भाति पुल्ल कुसुमित महिला हो!)

मैंने लक्ष्य किया कि उन अरुणिम कपोलो पर व्रीडा नृत्य करने लगी! इन्दीवर से वे नयन अस्फुट स्वप्नो को झलकाने लगे। यह रूप राशि का वभव विरह जय था अथवा मिलन की मधुरिमा का उल्कापात था मैं कुछ समझ न पाया! तब तक मम्मी फ्रकलिन व क्लेरा जटकिन के साथ आ पहुँची। मैंन नतमस्तक हो उनका चरण स्पश किया। डाक्टर क्लेरा और सिस्टर फ्रकलिन को मैंने सादर अभिवादन किया, उनके आशीवचन पुष्पो की बौछार के समान मन को सुरभित कर गये। मम्मी स्नेहावेग म कुछ कह न पाइ उनक नयन आद्र हो आये थे!

'डाक्टर नीहार यार फेस इज बिट वस्टनाइज्ड। यू लुक लाइक एन इटालियन!" (डाक्टर नीहार, तुम्हारे व्यक्तित्व पर पाश्चात्य भगिमा आ गई है तुम इटली के नवयुवक-से प्रतीत होते हो!)—डाक्टर क्लेरा ने विनोद की दृष्टि से कहा।

'एम आई नाट ए जमन ए लवली चाइल्ड आफ ए जमन लेडी, म इट बी डाक्टर क्लेरा ऑफ दी पास्ट एज! (क्या मैं जमन प्रतीत नही हो रहा? एक जमन माता का सुदर पुत्र, सभवत विगतयुगीन डाक्टर क्लरा का ही तो पुत्र नही हूँ!) —मैंने व्यग्य के भाव से एक चचल लहजे म प्रकट किया।

ऑफ कोस, डाक्टर क्लेरा वाज ए मरिड लेडी इन दा पास्ट एण्ड सो वर यू बॉन! (वास्तव मे डाक्टर क्लेरा भूतकाल मे एक विवाहित महिला थी और उन्होने तुम्हें जन्म दिया था!) —डाक्टर क्लेरा ने इट का जवाब पत्थर से दिया किन्तु य पत्थर फूल के थे!

सिस्टर क्लेरा आई मस्ट काग्रेचुलेट यू फॉर हैविंग सच ए गुड सन! (बहन क्लेरा ऐसे सुयोग्य पुत्र की माता होने के उपलक्ष्य में तुम्हें बधाई है!) —सिस्टर फ्रकलिन ने टिप्पणी की।

अब तक मम्मी प्रकृतिस्थ हो चुकी थीं। और उन्होंने भी इस विनोद में कुछ योग दिया अरे, तुम सब मेरे पुत्र को क्या छीन रही हो। आज के दिन तो यह केवल मेरा पुत्र है केवल मेरा। तुम दोनों तो इसकी सांठी हो। चलो बेटा, अब चलें। —उन्होंने मेरी ओर मुखातिब होते हुए कहा।

कुछ क्षणों के इस कुतूहल के बाद हम सिस्टर मैकलिन के लंदन के यहाँ पहुँच गये। उन्होंने हम सबके आवास के लिए पर्याप्त एवं सुन्दर व्यवस्था की थी और द्वार पर ही वे गुलाब के फूलों का महकता गुलदस्ता लिये खड़े थे। उस क्षण उनके व्यक्तित्व एवं उस गुलदस्ते की सुरभि में अद्भुत साम्य प्रतीत हुआ। देखते ही तपाक से बोले "डाक्टर नीहार, आइ ग्रीट यू ऑन दिस स्वीट मॉर्निंग!" (इस शुभ अवसर पर, मैं तुम्हारा अभिवादन करता हूँ!)

उन्होंने मेरे, नीनो और डौरोथी के लिये अलग कमरे की व्यवस्था की थी और मम्मी, मिस्टर मैकलिन तथा डाक्टर घनेरा, उनके फ्लैट के हॉल में ठहराई गई था। अब हम तीनों सामान को व्यवस्थित करके सोफा सेट पर चुपचाप बैठे थे तभी नीनी ने डौरोथी की चुटकी लेते हुए कहा

"अब तो कहो गुइयाँ, कुछ अपने मन की!"

डौरोथी स्पष्ट लजा गई थी, पर दूसरे ही क्षण जरा उसने हिम्मत बटोर कर नपे तुले शब्दों में कहा

'कहिये डाक्टर, यूरोप का जीवन कैसा लगा! कभी हम लोगों की भी याद आती थी?'

'यूरोप का जीवन बड़ा रंगीन, दिलफरेब और व्यस्त था, किन्तु इस सब के बीच एक करुण रागिनी भी मेरे कानों में निरंतर गूंजती रहती थी और उसके बीच में से एक आकृति ठीक तुम्हारी ही तरह झलक जाती थी और तब मैं एक दिव्य प्रेरणा में डूब जाता था।" मैं अपना वक्तव्य पूरा भी नहीं कर पाया था कि नीली उठी और कहने लगी "मैं जरा नाश्ते का इन्तजाम कर लूं देखें क्या देर है।"

अब उस कमरे में हम दोनों निपट अकेले थे। मन को न जाने कौनसी प्रेरणा छू गई, सहसा, मैंने डौरोथी की अंगुलियों को अपने हाथों में ले लिया और कहने लगा अच्छी तो हो डौरोथी!'

प्राणों का जो वेग अब तक किसी प्रकार रुका था वह अनायास ही फूट पड़ा। औपचारिकता और संयम के बांध टूट पड़े थे और सहसा वह मुझ से लिपट

कर रोने लगी। उस रोने में न जाने क्या था कि वह मेरे जीवन की ... निधि बन गया है और उस पर तो ऐसा लग रहा था जैसे बादल बरस ... हैं और सद्य स्नाता प्रकृति अपने उजले रूप में प्रत्यक्ष हो उठी हो! मेरा मन भर आया था और न जाने किस आवेग से संचालित हो मैं उसके ... पर आवेगपूर्ण चुम्बन अंकित कर चुका था, जैसे मिलन के इन क्षणों में ... की घटाएँ अदृश्य हो गई हों और यह धवल ज्योत्स्ना, अपने प्रखर रूप ... प्रस्फुटित होती हुई प्रकट हो रही हो! उफ, मिलन के वे क्षण कितने सुहाने ... थे युग युगान्त की आकांक्षा उन क्षणों में परिप्लावित हो रही थी ... शून्य आकाश में उड़ते हुए दो पक्षी एक दूसरे से टकरा गए हों और ... भी ऐसा कि दोनों टकरा कर अपने ही घोंसले में गिरे हों। ऐसा ही ... एवं प्रेरणादायी था वह मिलन! कानों में शहनाइयाँ बजती रहीं और प्र... कालीन उद्यान में फूलों पर शबनम की बूँदें थिरकती रहीं। भर भर के ... पी रहे थे और पिला रहे थे!

सिस्टर फ्रैंकलिन के कथन ने आज मेरे सम्मान में रात्रि को एक भव्य भो... का आयोजन किया था। इसमें हम सब व्यक्तियों के अलावा डा० शिवा... भी आमन्त्रित की गई थीं क्योंकि डाक्टर क्लेरा की मुलाकात उन... बन्दरगाह पर ही हो गई थी और उन्होंने इस रात्रि भोज के लिए भी उ... आग्रहपूर्वक निमन्त्रित किया था। डाक्टर क्लेरा से ही मुझे मालूम हुआ ... शिवाकामु उनकी अनन्य मित्र हैं और उन्हीं की कृपा से वे महाराजा विक्रमसिं... के निकट सम्पर्क में आ सकी थीं।

डाक्टर शिवाकामु महाराजा विक्रमसिंह की निजी डाक्टर थीं और उनके सा... प्रायः विदेश-यात्रा में रहा करती थीं। महाराजा को कुशल व्यक्तियों की सेवा... प्राप्त करने की एक सनक थी। वे यदि किसी अच्छे डाक्टर, इंजीनियर या कलाकार को कहीं भी देखते, तो झट उसे अपनी सेवा में ले लेते! व्यक्ति को परखने की सहज अन्तर्दृष्टि उन्हें प्राप्त थी। वे वास्तव में रूप और गुणों के जौहरी थे, काफी कीमत देकर भी वे इस प्रकार के नर-नारी रत्नों को स्वायत्त कर लिया करते थे।

डाक्टर क्लेरा में ही विदित हुआ कि उन्हीं जौहरी की दृष्टि में कभी वे भी डा० शिवाकामु के माध्यम से चढ़ गई थीं। मैंने कल्पना की महाराजा और डा० क्लेरा की जिन्दगी कितनी रंगीन रही होगी! आज उनके रूप के खंडहर एक भव्य इमारत का स्पष्ट संकेत कर रहे थे। उनका पुष्ट मांसल शरीर, असाधारण रूप लम्बा कद, कभी कितना कमनीय रहा होगा इसको मैं सहज...

त्पना कर सकता हूँ। महाराजा के दु खपूर्ण निधन के समाचार से ग बनेरा खिन्न थीं, इसलिये हम सब चाहते थे कि उनकी इस खिन्नता को सहज रूप से ही दूर किया जाए। या उनकी खिन्नता, हमारे प्रति जो उनका स्नेह था उसमें उन्हें कहीं भी कृपण नहीं होने दे रही थी। वे हँसती थीं, पर जैसे इन सबके पीछे एक खिन्न उदासीनता पुन पुन झाँक जाती थी। हमारी बातचीत चल ही रही थी कि गाड़ी के हार्न की आवाज आई। डा दिवाकामु आ गई थीं और वजन उन्हें भोजन-कक्ष तक ले आये थे। हम सबने उनका आदरपूर्वक अभिवादन किया। डाक्टर बनेरा तो उनसे ऐसे गले मिली, जैसे वर्षों की बिछुड़ी हुई सखियाँ मिल रही हों।

सखियों से मिलने के उपरान्त डा० दिवाकामु की दृष्टि डाइनिंग टेबल पर गई। उसे लक्ष्य कर उन्होंने कहा 'ओहो! आज तो बड़ी खुशकिस्मत हूँ! बड़े दिनों बाद हिन्दुस्तानी खाना मिलेगा उनके होठों पर रस झलक झलक आया था उसी की मीठी घूँट लेते हुए उन्होंने कहा 'तो डा मनोहर, तुम्हारी डौरोथी यही हैं न।' और तभी तपाक से उन्होंने डौरोथी की ओर उन्मुख होकर कहा हलो डौरोथी, हाऊ डू यू डू!' इस आकस्मिक सबोधन से डौरोथी सचमुच लजा गई थी, उसके चेहरे पर जैसे विद्युत प्रभा सी नाच गई और उसी प्रभा में मैंने पढ़ा था कि डौरोथी को यह आशका थी कि मैंने डा दिवाकामु को अपने मधुर सम्बन्धों के बारे में सब-कुछ कह दिया है।

डौरोथी को यों लजाते हुये देखकर और निरुत्तर पाकर मैंने ही उसकी ओर से उत्तर दिया हाँ डाक्टर यही हैं डौरोथी, जिनका जिक्र मैंने जहाज के डेक पर किया था।'

अरे ये तो प्रोफेसर हैं न, लड़कियों को कैसे पढ़ाती होंगी!

डाक्टर प्रोफेसर तो मैं कक्षा में होती हूँ आप जैसे बुजुर्गों की प्रोफेसर थोड़े ही हूँ!' डौरोथी ने जैसे साहस जुटाकर कहा हो।

तभी उसकी ढाल बनकर मैंने कहा "डाक्टर, यह पढ़ाती लिखाती क्या खाक होगी अभी तो लजाने शरमाने से ही इन्हें फुरसत नहीं है!

हाँ तो ये बातें बाद में भी होती रहेंगी डिनर के साथ जस्टिस की जाय!" भोजन की ओर हम सबको आमन्त्रित करते हुए मम्मी ने कहा।

इस पर हम सबने प्लेटों में अपनी रुचि की चीजें, अपनी-अपनी आवश्यकतानुसार ले ली थीं और कुछ क्षण तो वातावरण में प्लेटों और चम्मचों का ही रणनाद सुनाई देता रहा। जब हम सब की भूख मिट चली और रुचि का ह्रास नियम

(डिमनिशिंग यूटिलिटी) लागू होने लगा तो डाक्टर बनेरा ने सबका ध्यान अपनी ओर खींचते हुये कहा

आज की रात कितनी खुश गवार है, कहां-कहां के लोग इकट्ठे हुये हैं इस डिनर पर।"

कहीं की इंट कहीं का रोड़ा, भानुमती ने कुनबा जोड़ा तो आज की भानुमती सिस्टर फ्रकलिन हैं। नीली ने चपल व्यग्य के साथ कहा।

अच्छा तो आप हैं डाक्टर नीहार की बहन।' डाक्टर निशाकामु ने किंचित विस्मय के साथ प्रकट किया।

नीली डौरोथी का तरह शर्मायी नहीं थी उसने तपाक से उत्तर दिया हां आंटी, मैं ही हूँ नीलिमा। कहिये, क्या हुक्म है।

हां चिड़िया सी फुदकने वाली और झरने-सी मचलने वाली यही है मेरी बहन नीली। मैंने हल्के विनोद की फुलझरी छोड़ते हुए कहा।

भया तुम बदल गये हो मैं तो सोचती थी कि इंग्लैंड में रहकर तुम कुछ सुधर गये होगे पर तुम तो वैसे ही शरारती और चपल हो, जैसे पहले थे। इस बार नीली ने मुझ पर भरपूर आक्रमण किया था।

मैं कुछ बोलूं कि मम्मी ने हस्तक्षेप करते हुये कहा इन बहन-भाइयों की तकरार बड़ी दिलचस्प होती है ये बचपन से ही इसी तरह लड़ते-झगड़ते आये हैं। इनका भी इनके प्यार का एक बेमिसाल तरीका है।

अबके बोल फ्रकलिन के कजन हां नीदी तुम्हें याद है हम भी बचपन में ऐसे ही चोंच लड़ाया करते थे।

सिस्टर फ्रकलिन बचपन की दुनिया में झांकने लगी थी और उन्होंने अपने चचेरे भाई की सहमति में स्वीकृति-सूचक सिर हिला दिया।

भाई-बहनों का महाभारत तो ऐसा ही होता है। अफसोस है कि मेरे भाई नहीं है। मैं किससे लड़ूं झगड़ूं ?' डाक्टर निशाकामु ने किंचित् बन्ना के साथ अतीत में झांकते हुये कहा।

क्या मैं अपनी खिदमत आपके लिए पेश कर सकता हूँ मैं आपका भाई बनने को तैयार हूं। बड़ी गंभीरता के साथ सिस्टर फ्रेंकलिन के कजन ने कहा।

उनकी परदुःखकातरता से हम सभी ठहाका मार कर हंस पड़े पर नीली रमन लाई बम्पूर खाने रही।

आप लोग खाना भी खाते जाइये नहीं तो यह नीली मजाक साफ कर देगी। मैंने चार का रंग हाथ पकड़ते हुये कहा।

फिर चमचों के प्रहार ववाटर प्लेटस पर होने लगे और रसमलाई गले के नीचे उतरने लगी । इसी प्रकार की गप-शप मे वह डिनर समाप्त हुआ और तब डाक्टर वलेरा ने पान की तलब की ।

'हा डाक्टर, वाकई, मेरे से बडी गलती होगई है, पर अभी फोन से यह कर इतजाम किय देता हूँ !' सिस्टर फ्रकलिन के वजन ने मेजबान की भूमिका ग्रहण करते हुये कहा ।

कुछ ही देर म मीठे पान इलायची और बगलौरी सुवासित सुपारी आ गई थी । डाक्टर वलेरा ने बडी रुचि के साथ एक बडा–सा पान का बीडा लिया और उसे चबाती हुई कहन लगी 'हिदुस्तानी खाने मे, मुझे यह आखिरी आइटम बहुत पसद है ! महाराजा के महल मे जब रहा करती थी, तभी से यह आदत मुझे पड गई है !'

'हा-हा महाराजा को लखनवी पान बहुत पसद थे । आपका याद होगा, एक बार लखनऊ से वे २१-२१ रुपये के दस पान लगवा कर लाये थे और उन्हें खाकर हम सब के दिमाग म कसा सुरूर नाचने लगा था !" डा० शिवाकामु ने अतीत के खडहर म अगडाइया लेते हुये कहा ।

महाराजा का प्रसग आने पर डा० शिवाकाँमु ने उनके जीवन की आखिरी घडिया का हम सबको सक्षेप म वृत्तान्त सुनाया और तब वे कुछ रुआसी–सी हो आई थी इसी कारण डा० वलेरा उन्हें उनके होटल तक छोडने गइ । हम सब भी अपन–अपन कमरो की ओर उन्मुख हुये और वहां पहुँचते ही डौरोथी ने उलाहन के स्वर मे कहा 'डाक्टर, आप बड कसे हैं, डाक्टर शिवा कामु को आपने सब–कुछ कह दिया है ।'

तो क्या गजब हो गया कोई अनहोनी बात तो नही कही है ।' मैंने डौरोथी की अगुलियो को कुछ भीचते हुये कहा ।

हम नही बोलगे आपसे आप तो हर किसी से सारी दास्ता कहत फिरत हैं !' रूठी रानी को मनाना भी पडगा !' मैंने उसकी ठोडी को तनिक ऊचा करत हुय कहा । उन नयनो मे चपलता झाक रही थी । उस अनुराग के आमत्रण को मैं टाल न सका और डौराथी के कपोलो पर प्रणयावेग से पूर्ण, एक सुनहरा चुम्बन अकित कर दिया !

□□

अगले दिन प्रात ही मुझे दो तार मिले एक डा० चटर्जी का था और दूसरा वत्सला मुखर्जी का। डा० चटर्जी ने मेरे स्वदेश लौटने पर प्रसन्नता प्रकट की थी और जानना चाहा था कि क्या मैं तेजपुर के मिलिटरी अस्पताल में काम करना पसंद करूँगा। वत्सला ने लिखा था कि वह उत्सुकतापूर्वक उसके आने की बाट जोह रही है और कि वह बम्बई से विमान द्वारा तुरन्त ही कलकत्ता पहुँच जाय। इन दो तारों ने मेरे मानसिक सन्तुलन को भंग कर दिया था। मैं सोच रहा था कि कुछ दिन मुक्त रहकर साँस लूगा पर कर्तव्य का आवाहन मेरे विश्राम से कहीं अधिक महत्त्व का है। हिमालय की बर्फीली चोटियों पर चीन का आक्रमण हो गया था और समस्त राष्ट्र एक तनाव की स्थिति में था। इस आकस्मिक आक्रमण ने जसे राष्ट्र का बुद्धिबल अत्यन्त प्रखर कर दिया था और सभी राजनीतिक दल अपने मतभेदों को भुलाकर राष्ट्रीयता की पात में आबद्ध हो गये थे। सम्पूर्ण राष्ट्र में एक असाधारण चेतना की लहर हिमालय से कन्याकुमारी तक और पश्चिम से पूर्व तक दौड रही थी। युवक और युवतियां स्वदेश भक्ति से प्रेरित मक्कार दुश्मन से मुकाबला करने के लिये कृतसंकल्प थे। उनकी मुट्ठियां बंध गई थीं और वे प्रतिशोध की आग से धधक रहे थे। शत्रु के अपवित्र चरणों को नेफा और लद्दाख के मोर्चे पर देखकर हमारे जवानों की आँखों में खून उतर आया था! चप्पे चप्पे जमीन के लिए विकट संग्राम हो रहा था। असंख्य घायल फौजी अस्पतालों में दिन रात आ रहे थे। ऐसी स्थिति में मेरा विवेक अपने मार्ग को चुनने के लिये विवश था और मैंने डा चटर्जी को तुरत तार द्वारा सूचित किया कि उनका प्रस्ताव मुझे स्वीकार है

पारिवारिक सदस्यों ने जब इस संवाद को सुना तो एक खलबली सी मच गई! अभी मां पूरी तरह से अपने पुत्र को निहार भी नहीं पाई थी कि यह कैसा पैगाम आ पहुँचा! अभी बहन अपनी खुशियों से भय्या को नचा भी न पाई थी कि यह कर्तव्य का कैसा बिगुल बज गया! प्रेम भरे दो दिल अंगड़ाइयां ही ले रहे थे कि शबनम नाले बन गये और उनकी आग ऐसी भभकी कि मां की मिन्नत बहन की जिद्द और प्रेमिका के मदमाते नयन इन सब को भुलाकर मैं कलकत्ते की ओर दौड़ पड़ा। वत्सला से मिलते हुए तेजपुर में अपने कर्त्तव्यसूत्र को संभालने के लिये।

विमान के यात्रियों में बड़ी गरमागरम चर्चा थी, भारत और चीन के सीमा विवाद को लेकर। यह समझा जा रहा था कि यह मात्र सीमा विवाद नहीं है अपितु लोकतन्त्र पर तानाशाही का आक्रमण था। 'जिओ और जीने दो!' की भूमि पर आज लुटेरे की आँख लगी थी। सह अस्तित्व और विश्व-बन्धुत्व का राग अलापने वाले नेता अनायास ही गम्भीर हो गये और सोच रहे थे कि कहीं हमारी नीति में कोई बुनियादी त्रुटि तो नहीं है। स्वाधीनता के बाद एक प्रकार की मानसिक शिथिलता जो आ गई थी, वह अब विलीन होने लगी। देश के चिन्तन और कर्म में एक नुकीलापन आ गया था, पर हमारे नेताओं ने विवेक को नहीं खोया था। उन्होंने राष्ट्र का आवाहन किया और राष्ट्र ने भी उसका समुचित उत्तर दिया। गहना के अम्बार लग गये, सोना पिघल कर बन्दूक और तोप की धाँय-धाँय में बदल गया और तिजोरियों की सम्पत्ति, मध्यवर्ग की सीमित आय और मेहनतकश जनता की खून-पसीने की कमाई भारत के आन्दोलन में जुट गई। करोड़ों रुपये इकट्ठे हो गये, और सैनिक उत्पादन के कारखाने दिन-रात बड़ी मुस्तैदी से धुँआ उगलने लगे।

यह समग्र युद्ध था और राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक एक अपराजेय सैनिक था। सम्पूर्ण राष्ट्र एक सैनिक शिविर में परिवर्तित हो गया, कोमल उँगलियाँ स्वेटर बुनती रहीं, मजबूत इरादे फालतू गर्म कपड़े इकट्ठे करते रहे और समस्त राष्ट्र का तन मन और धन जैसे शत्रु से पंजा लड़ाने के लिये उद्यत हो गया। नौजवानों का खून उबल रहा था, युवतियों के संकल्प दृढ़ हो रहे थे, माताओं, बहनों और पत्नियों के दिल फौलाद हो रहे थे कि चोर हमारे आँगन में घुस आया है और हम अपनी सारी ताकत के साथ उसे धकेल देना है। ऐसे ही कुछ विचार और भावनायें मेरे दिल और दिमाग से टकराते रहे कि मेरा हवाई जहाज दमदम हवाई अड्डे पर पहुँच गया। आहिस्ता आहिस्ता विमान नीचे उतरा और विमान के पिंजरे में बन्द प्राणी अपने अपने परिचितों एवं सम्बधियों को ढूँढ़ने लगे। मैं भी उस विराट जनसागर में किसी परिचित आकृति को खोज ही रहा था कि पीछे से मेरे कन्धे पर मि० मुखर्जी का स्नेह भरा हाथ पड़ा। सामने वत्सला नमस्कार की मुद्रा में मुस्करा रही थी।

पारस्परिक कुशल-मंगल के आदान प्रदान के बाद हम मुखर्जी के बंगले पर पहुँच गये थे और सारे रास्ते भर वत्सला मुझसे विदेश के बारे में नाना प्रकार के प्रश्न करती रही। यूरोप का जीवन मुझे कैसा लगा, मेडिकल शिक्षा की स्थिति वहाँ कैसी है, अंग्रेज युवतियों का जीवन किस प्रकार का है, इंग्लैंड के लोग और अन्य यूरोपीय राष्ट्र चीन के आक्रमण के बारे में क्या सोचते हैं—आदि आदि, अनेकानेक प्रश्न उसके जिज्ञासु अधरों से फूट पड़े।

बातों ही बातों में मैंने उसे बताया कि मेरी नवनियुक्ति तजपुर के फौजी अस्पताल म हो गई है और कलकत्ते अधिक न ठहर सकूँगा। इस पर वत्सला के चेहरे पर हवाइयाँ उडने लगी और उसक होश फाख्ता हो गय। क्या सोचा था क्या हो गया !

'तो आप ड्यूटी जायन करने आये हैं न कि मुझसे मिलने —उलाहने के स्वर म वत्सला ने कहा। नहीं, ऐसी बात नहीं है। आप दोना में विरोध क्यों देखती हैं। क्या वे दोना भिन्न प्रतीत होती हुई क्रियायें एक नहीं हो सकती ? —मैं अनायास पूछ बठा जिज्ञासु और प्रणयशीला वत्सला से।

'हाँ आपके विचार सही हैं और मैं सोचती हूँ कि आपको यथाशीघ्र अपनी ड्यूटी जायन कर लेनी चाहिए। मुझसे कहीं अधिक आवश्यकता है आपकी, उन घायलो को उन बहादुर सनिकों को जो मोर्चे से लहू-लुहान होकर लौटे हैं। वत्सला सब्र करना जानती है उसका दिल फौलाद का है। वह डाक्टर को उसके मरीजों से अधिक विलग नहीं रख सकती।

तभी आकर टोका मिसेज मुखर्जी ने

'अरे पहले खाना तो खा लो, बातें फिर भी हो सकती ह। साहब आप लोगो का डायनिंग-टेबल पर इन्तजार कर रहे हैं।

हाँ माताजी, हम अभी आते हैं।'

डायनिंग टेबल पर मिस्टर मुखर्जी आज का ताजा अखबार पढ़ रहे थे। मेरे पहुँचते ही गभीर होकर बोले

"साला चीनी बढ़ता ही आ रहा है। उसकी निगाहें आसाम के तेल क्षेत्रों पर हैं। हमारे मुल्क की तयारी कम है। कसे काम चलेगा ?"

"हाँ, आपका सोचना ठीक है। हम पर आकस्मिक आक्रमण जो हुआ है! ऐसी स्थिति म आक्राता सुरक्षित स्थिति में रहता है। उसके पास खोने को तो कुछ होता नहीं उसे तो पाना ही-पाना है। —मैंने मुखर्जी के मनोबल को सुदृढ़ करने की दृष्टि से कहा।

'पर अपन लोग ढीला है, अहिंसा का राग अलापना है और दोस्ती का पगाम भेजता है। यह गलत है।'—उन्होंने राष्ट्र के सुरक्षा प्रयासों की तीव्र आलोचना करते हुये कहा।

"मुखर्जी साहब आप ठीक फरमा रहे हैं पर अब हमें दुश्मन के हाथ लग गय हैं। भारत के बूढ़े शरीर में भी जवानी का खून खौलने लगा है। सब ठीक हो जायगा। —मैंने देश के भविष्य को हस्तामलकवत् देखते हुये कहा।

"अरे फिर वही बहस, आप लोग खाना क्यो नही खाते !"—श्रीमती मुखर्जी ने हमारी बातो मे हस्तक्षेप करते हुए कहा। "हा, हम खाने को तो भुला ही बैठे थे। आओ नीहार दुश्मन को हराने के लिये डटकर खाना खायें।'

"हा, अब हमारा हर काम एक ही लक्ष्य को दृष्टि में रखकर होना चाहिये और वह है स्वदेश की रक्षा और लुटेर दुश्मन को मातृभूमि से खदेडना और ऐसी मार लगाना कि वह भूलकर भी इधर मुह न करे !'

बातो ही बातो में मैंने मुखर्जी से तजपुर अस्पताल की अपनी नई ड्यूटी के बारे म बताया तब उन्होने मरी पीठ ठोकी और आशीर्वाद दिया कि मैं अपने मिशन म कामयाब होऊ।

अब मैं मुखर्जी के स्टडी रूम मे बैठा हू और उनकी और वत्सला की पसन्द की पुस्तकें और पत्रिकायें देख ही रहा था कि फुदकती मैना-सी आ गई वत्सला !

"कहिये डाक्टर इतने लबे अरसे की अनुपस्थिति मे आपने हम भी कभी याद किया !"—चपलतापूवक यह प्रश्न पूछकर वत्सला मेरे नयनो मे झाकने लगी जसे उत्तर को शब्द रूप म न पाकर उसे भावरूप में ही प्राप्त कर लेना चाहती हो ! "अरे तुम सब लोगो की याद ही तो मुझे यहाँ खीच लाई है !' मैंने वत्सला को आश्वस्त करने की दृष्टि से कहा।

पर प्रश्न लरजते रहे और उत्तर लडखडाते रहे। व्यष्टि की तृषा समष्टि के माध्यम से अपने आपको व्यक्त करती रही तभी अचानक बोल पडी वत्सला 'डाक्टर जी चाहता है कि मेरी भी ड्यूटी तजपुर अस्पताल मे लग जाय, अपने मुल्क के लिये जो शूरवीर घायल हुये हैं, उनकी मरहम पट्टी करना कितना सुखद होगा और कितना प्रेरणाकारी होगा आपका सान्निध्य !'

'समय आने पर यह भी हो जायेगा। प्रतीक्षा करो, प्रतीक्षा का फल मीठा होता है।"

'प्रतीक्षा ही तो करती रही हूँ इन लबे लबे दो-ढाई साल से, पर जब प्रतीक्षा सार्थक हुई तो भारतमाता का आमत्रण मिल गया ! कैसी खुशनसीब और बदनसीब हू मैं !'

खुशनसीब और बदनसीब एक साथ ही कसे ?'

"खुशनसीब तो इसलिये कि आपकी ड्यूटी लेह के अस्पताल म न लगकर तेजपुर में लगी है और बदनसीब इसलिये कि अभी पूरी तरह मिल भी न पाये थे कि बिछुड चले !'

" तो वत्सला मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा, घायलों की सेवा और सनिकों की मरहमपट्टी में। आशाओं के वचन दो।

तब एक पौनादी इकरार हुआ और शस्यश्यामला वसुंधरा पर एक अमागतिक उत्पात भी।

अब वे सब बनारस में हैं वत्सला का विवाह किसी का हो चुका है। यह नादान लड़की कभी भाली है कि ढाई साल तक मेरी प्रतीक्षा करती रही कितनी धर्मशालिनी है यह। आठ सौ दिन और रातें चक्कर काटते रहे, पर इसका धीरज नहीं चुका। किसी के स्नेह का दीपक प्रणय की तन्हाई में अंधड़ों में जलता रहा पर यह परवाना शमा पर ही नाचता रहा। उफ प्रणय तुम कैसे अजीब बाजीगर हो। दोनों हाथों से कंदुक क्रीड़ा करते हो, किसी का भाग्य उदारता है तो किसी का लुंठित होना है। पर तुम्हें इससे क्या तुम तो वज्र के समान कठोर और कुसुम के समान कोमल हो न। प्रणय आंख मिचौनी का खेल क्या खेलता है ?

यह स्पष्ट है कि वत्सला के प्रति मेरे मन में प्रणय भाव नहीं है पर कोमल भावना तो है इसी ने तो इस बेचारी को भ्रमित किया है। मैंने सदा वत्सला को अपना मित्र समझा प्रेरणाकारी दिव्य प्रसून समझा पर वह तितली जैसे रंगीन पंख लेकर मेरे भाग्याकाश पर क्यों मंडराना चाहती है ? क्या यह नारी हृदय की छलना है रूप की मृग मरीचिका है और यौवन के मादक स्वप्नों की अलसाई हुई मुस्कान है ? अपने अन्तर्मन में झांकता हूं और मन की गहन उपत्यकाओं में वत्सला को केवल एक मित्र के रूप में देखता हूं एक ऐसे मित्र के रूप में जिसके साहचर्य की सुरभि मन प्राणों में बस गई। फिर यह भ्रान्ति क्या ? क्या इस आवरण को मुझे ही हटाना होगा पर बहरहाल मैं खुद उलझ गया हूं क्या उलझा हुआ व्यक्ति किसी को सही रास्ते पर ला सकता है ? तभी कर्त्तव्य की रणभेरी बजती है और मैं पलंग झाड़कर खड़ा हो जाता हूं अपने आपको घायलों से घिरा हुआ पाता हूं उनकी मर्मभेदी पुकार मन के तार तार कर देती है। इन्हीं का उपचार करना मेरे जीवन का पवित्र संकल्प है और इन्हीं को एक समय सैनिक का स्वास्थ्य प्रदान करना मेरे जीवन का अन्तिम लक्ष्य है ताकि ये लड़ सकें और दुश्मन को खदेड़ सकें। उनकी नापाक छाया हमारी पवित्र भूमि पर न पड़ पाये यही तो मेरा ईप्सित है। 'नीहार' तुम प्रणय की कोमल रंगीनियों के लिए नहीं बने हो तुम्हारा जीवन किसी महत्तर कर्त्तव्य के प्रति समर्पित है। कोई उपचेतना के तट पर कुलबुलाता है। और मैं कोल्हू के बैल की तरह उसी पथ पर बढ़ चलता हूं।

□□

तेजपुर का सनिक ग्रस्पताल ! प्रात काल ते ८ बजे ही मैं अपनी ड्यूटी पर पहुँच गया, मर सहकारी ने सर्जीकल वार्ड मे घूम घूमकर हर मरीज को हिस्ट्री शीट से मुझे परिचित करवाया। मैं हर केस के विस्तार मे गया, उनकी पेचीदगियो को समझा और अपने करणीय को निश्चित किया, मन ही मन उस विशाल हाल म लेटे हुय सनिको को प्रणाम करता हू, आखिर ये मातृ भूमि के सरक्षक हैं उन्होने अपने प्राणो की बलि देकर स्वदेश की प्रतिष्ठा की रक्षा की है। ऐसे शूरवीरों के प्रति मन श्रद्धा से अभिभूत हो जाता है और मैं एक मेजर के बड के पास जाकर कुछ पूछताछ करता हूँ।

मुझे बताया गया था कि मेजर ने बड हौसले के साथ चीनियो के प्रबल आक्रमण का सामना किया था। वे अपनी ब्रिगेड से अलग होकर एक अनजाने प्रदेश मे हतचेतन अवस्था मे कई सप्ताह पड रहे और उनके साथियो ने उन्हें बडी मुश्किल से ढूढ पाया। अब भी वे निद्रावस्था मे बडबडाते है सावधान, आगे बढ निशाना सा ध' आदि आदि।

मेजर साहब के मन मे युद्ध की घटनाएँ इतनी घनीभूत हो गई थी कि वे स्वप्नावस्था म भी युद्ध के मदान मे अपनी बीमारी का पल्ला झाडकर पहुँच जाते थ। भारतमाता के इस सुपुत्र से बात करने के लिहाज से मैं उनके बड के पास जाता हूँ और पूछता हू

"मेजर साहब, कसी तबियत है ?"

डाक्टर, अब तो काफी ठीक हो चला हूँ, पर मन मे अब भी तोपो और मशीन गनो की धाय धाय समाई हुई है, अब तो आपस एक ही अज है कि जल्द-जल्द मुझे चगा कर दें, ताकि मोर्चे पर जा सकू।'—मेजर साहब ने अपने बड से कुछ उचकते हुये कहा।

मैं स्टूल लेकर उनके पास बठ जाता हूँ और उनसे पूछता हूँ

लडाई के आपके तजुर्बे कर रह ? आप अभी इतने ठीक नहीं हुये हैं कि आपको काम पर भेजा जा सके। आपकी ख्वाहिश पुरी हो, इसके लिये पुरजोर कोशिश कर रहा हू।'

बस मत पूछो डाक्टर साहब, तबियत पख लगाकर उडना चाहती है नसों मे खून खौल रहा है। उस दुश्मन के दात खट्टे करने

के लिये। साले बड़े पाजी होते हैं। अपने भाइयों की लाशों को रौंदते हुये लहरदार ढग से धावा बोलते हैं। जिन्दगी की तो उनके यहाँ कोई कीमत नहीं।

'हाँ सो तो ठीक ही है पर इसकी क्या वजह है कि हमारे जवानों के इतने दिलेर होने पर भी हम कई मोर्चों पर मुह की खानी पड़ी ?"

डाक्टर साहब, हमारी सरकार तो अहिंसा की थी ना, हमारी तयारी ही कहाँ थी, दिलेर जवान तो थे पर उनके पास नये ढग के हथियार कहाँ थे ? वे इतना ही तो कर सकते थे कि अपने आपको आग में झोंक दें और मुझे खुशी है कि मेरे नौजवान मौत से कतराये नहीं उन्होंने वो मजा मिलाया कि सारा दुश्मन भी याद करेगा।"

आप बजा फरमा रहे हैं जनाब अब हमारी सरकार ने गलती महसूस की है और फौजी कारखाने नये से-नये हथियार तयार कर रहे हैं। बाहरी मुल्कों की भी हम मदद मिल रही है।

इस बार यदि दुश्मन ने अपना नापाक चेहरा हमें दिखाया तो सालों को भून देंगे और चटनी बना देंगे गुसरों की।

हाँ मजर साहब आपके इरादे तो फौलादी हैं और मैं शुक्रगुजार हूँ उस खुदा का जिसने वतन के लिये ऐसे सपूत पदा किये हैं।

डाक्टर साहब अफसोस यही है कि मेरे साथी मुझे उठाकर यहाँ ले आये नहीं तो मेरी तमन्ना यही थी कि आखिरी दम तक उन लुटेरों को चकनाचूर करता रहूँ। पता नहीं कसे वक्त मे बेहोश होकर दब गया था। और मेरे जवान मुझे यहाँ ले आये। जब होश आया तो मैं हैरान था। कहाँ आ गया हूँ मैं ?'

मजर साहब आप ठीक होकर दुश्मन के दांत खट्टे करें, इसीलिये तो आपको यहाँ लाया गया है।

मैं अपना वाक्य पूरा भी न कर पाया था कि मेरे सहकारी ने आकर सूचना दी कि एक एमरजेंसी केस आया है और मुझे आपरेशन टेबल पर चलकर उसकी गोलियाँ निकालनी है और उसके घावों पर ड्रेसिंग करनी है।

सुनने के साथ ही मैं उठ खड़ा हुआ और दौड़ा दौड़ा आपरेशन थियेटर में गया। एक जवान आपरेशन टेबल पर बेसुध पड़ा था उसे प्राथमिक सहायता तो मिल चुकी थी किन्तु गोलियाँ बड़ी बुरी तरह से उसकी पसलियों में समा गई थी। मैंने आनन फानन में उसकी पसलियों पर क्रास का चिन्ह अंकित करते हुये गोलियाँ निकाली तब सहकारी डाक्टर ने तुरन्त ही उसकी मरहमपट्टी की। गोलियाँ निकलने के कुछ समय बाद ही उसे होश आया और वह अस्फुट रूप में कुछ बुदबुदा रहा था ऐसा लगता था कि इस अचेतावस्था में भी उसकी बंदूक तनी है और वह दनादन गोलियाँ छोड़ रहा है। मैंने उसकी आखों पर

की पट्टी हटाई और पूछा—"क्यो जवान अब कसे हो ? बदूक के फायर अब भी जारी हैं। देखते नही यह अस्पताल है और यहां तुम्हें इलाज के लिये लाया गया है।'

" मैं कहा हूँ खदक कहा है, मोर्चा कहाँ है"—वह बडबडाया।

"जनाब, आप लडाई के मदान मे नही हैं अस्पताल मे हो अस्पताल मे।" मैंने अपने मुह को उसके कान के पास ले जाकर कहा। सहकारी को सकेत किया कि इसे तुरन्त ही सर्जीकल-वाड में वड नम्बर ८१ पर पहुँचा दिया जाय।

इसी तरह के 'केसिज' से उलझते दोपहर के ३ बज गये। न खाने की सुध थी, न पीने की आराम तो कल्पना से बाहर था, क्योकि मैं उसे हराम समझता था। बगले पर गया, तो बेचारी मिसरानी रसोई के आगे बठी ऊघ रही थी। वह १ बजे से ही मेरा इतजार कर रही थी। हालाकि मैंन उसे कह रखा था कि जब एक-डेढ बजे तक न आ पाऊ, तो वह खाना बनाकर रख दिया करे, पर वह है कि मुझे *ताजा खाना* ही खिलाना चाहती है।

खाना खाते खाते ४ बज गये ५ बजे मुझे फिर अस्पताल पहुँचना है। सोफे पर लेटे लेटे कुछ चिकित्सा विनान की पत्रिकाएँ देखता हूँ, पढते-पढ़ते ऊघ जाता हूँ तभी फान की घटी टनटना उठती है। फिर कोई "एमरजसी केस" आ गया है। जल्दी-जल्दी कपड पहनता हूँ और आॅपरेशन थियेटर पहुच जाता हूँ। दिन रात यही क्रम चलता है। गोलिया मरहम पट्टी रिसते हुए घाव फ्रक्चर कटे हुए अग आॅपरेशन सर्जीकल इस्ट्रूमेटस सहकारी डाक्टर और नर्से, फौजी जवान मजर, कप्तान और ब्रिगडियर इन्ही मे, मैं सास लेता हूँ और यही मेरी दुनिया है। *अविराम, अक्लात श्रम, कत्तव्य की रणभेरी कानो मे निरन्तर गूजती रहती है* किसी मीठे स्वप्न की भाति डोरोथी और वत्सला आती हैं और नयनों म स्फूर्ति एव चिरस्फूर्ति का अजन आजकर चली जाती हैं। फिर काम में जुट जाता हूँ अपने आपको एक सनिक समझता हूँ, घायलो के मोच पर डटा हुआ हूँ। पर हाथ मे बन्दूक नही है हैं केवल आॅपरेशन के औजार, मरहम-पटिटया और दवाइया ! यही तो जीवन है, लगता है समग्र देश एक शिविर है, समस्त देशवासी अपराजेय-अनन्त सनिक !

आज प्रात काल ही डा० स्टैनविले का एक्सप्रेस टेलीग्राम मिला मेर विश्व-विद्यालय में प्रथम आने की सूचना थी। लिखा था कि मेरा चित्र और सक्षिप्त जीवन-वृत्त अखबारो मे छपा है। उन्होंने अपनी ओर से और अपनी सुपुत्री

की ओर से हार्दिक बधाइयां दी थीं। मेरी प्रसन्नता का भी आज ठिकाना न था, यद्यपि पिछले एक सप्ताह से जी-तोड़ परिश्रम कर रहा था, पर आज मन और शरीर दोनों ही फूल-से हल्के लगे। मुझे मेरे जीवन का प्रथम मिल गया था, इतने भिन्न भिन्न राष्ट्रों के विद्यार्थियों के बीच मैंने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की थी।

सन्ध्या को मुझे ढेर-सारे तार और चिट्ठियां मिलीं। सबका एक ही विषय था बधाई और हार्दिक बधाई! मैं आज फूला नहीं समा रहा था सोच रहा था कि काश आज मैं अपने घर होता मम्मी मुझे कितना प्यार करतीं भोली इतराई-इतराई सारे मोहल्ले में फिरती और अपने भैया की कामयाबी का ढोल हर घर, हर कान में पीट आती।

आज मेरा इस सफलता के उपलक्ष्य में रात्रि को सार्वजनिक अभिनन्दन है अस्पताल एवं नगर के प्रमुख व्यक्तियों ने इसका आयोजन किया है। राज्य के स्वास्थ्यमन्त्री को भी इस अवसर पर बुलाया गया है। विमान द्वारा डा० चटर्जी भी आ रहे हैं। मैं एक ओर प्रसन्न होता हूँ और दूसरी ओर सकुचित भी। इस अदना-से व्यक्ति की सफलता पर इतना विराट आयोजन क्यों?

आयोजक कार में लेने आ गये हैं। अब तो टाउन हॉल जाना ही होगा। वहां पहुँचते ही स्वास्थ्यमन्त्री ने मेरे हाथ में महकते फूलों का एक गुलदस्ता थमा दिया और कामना प्रकट की कि मेरा यश-सौरभ भी इसी प्रकार फैले। निगाह उठी तो देखा डा० चटर्जी मुस्करा रहे हैं और गर्व के मारे उनकी छाती फूली नहीं समा रही है। मैंने ललककर उनका चरणस्पर्श करना चाहा पर उन्होंने जबरन मुझे नीचे से ऊपर उठा लिया और पीठ ठोंककर विनोद के भाव में कहने लगे 'वाह रे मर मिट्टी के ढेर! तूने अपना झण्डा इग्लैंड में भी गाड़ दिया!'

दूसरी ओर दृष्टि गई तो वत्सला भी आ गई थी। इस मांगलिक अवसर पर भला वह कैसे पीछे रह सकती थी! उसने आते ही बधाइयों का पुलिन्दा दिया आँखें उसकी आन्तरिक उल्लास की दीप्ति से चमक रही थीं। उसका कुसुमित यौवन एक ताजे गुलाब के मानिन्द दमक रहा था!

'आज तो तुम्हारी खुशी का कोई ठिकाना नहीं है नयनों का उल्लास ढरक रहा है क्या वत्सला क्या बात है?'

डाक्टर आज मेरी खुशी का सबसे बड़ा दिन है, दो खुशियां एक साथ घटी हैं। आज के अखबार में आपकी सफलता का समाचार और पहली ही डाक से

तेजपुर के अस्पताल मे मेरी नव नियुक्ति ! बतलाओ डाक्टर आज मुझसे अधिक खुश और कौन हो सकता है ।'

अब तक डा चटर्जी की निगाह वत्सला पर पड़ चुकी थी। वे उछलते हुये बोले 'अरे वत्सला, तुम यहा कहा ? बडे दिनो मे दिखाई दी हो। सुना था, तुम तो कलकत्ते के किसी अस्पताल मे काम कर रही हो ना ?'

हा डाक्टर साहब, परसो की तारीख तक तो कलकत्ते के अस्पताल म ही काम कर रही थी, पर कल से मेरा अपाइन्टमेंट (नियुक्ति) तेजपुर के सैनिक हास्पिटल में हो गया है। आखिर आपके स्टूडन्टस को ही तेजपुर के अस्पताल के लिये सबसे काबिल समझा गया है।'

अच्छा तो यह बात है ! कहो तो मैं भी यहीं आ जाऊ !'

'नहा डाक्टर साहब, आप जयपुर के अस्पताल की तरह हमे वही फिर डाटन तो नही लग जायेंगे ? याद है न डाक्टर नीहार डाक्टर साहब मरीजो के सामने ही हमारी कैसी खबर लिया करते थे ! उन्ही के सामने पूरा व्याख्यान सुनना पड़ता था।'

'उसी डाट के बीज का असर ही तो है कि तुम लोग इतने काबिल हो गये हो। तुम लोगो की काबलियत के फूलो मे वही बीज महक रहा है।'

इस बात में तो दो राय नहीं हो सकती' मैंने उन दोनो की बातचीत मे हस्तक्षेप करते हुये कहा । सयोजक के सकेत पर हम सब अपने निर्धारित स्थानो पर बैठ गये थे और स्वास्थ्यमत्री का भाव-भीना भाषण जारी था

"बहिनो और भाइयो,

आज हम भारत-माता के एक ऐसे सपूत का स्वागत करने के लिये यहा इकट्ठे हुये हैं जिसने अपनी योग्यता से अतर्राष्ट्रीय-जगत मे भारत की प्रतिभा का पौरुष एव सामर्थ्य सिद्ध कर दिया है। कितनी प्रसन्नता की बात है कि इस नौजवान ने अपनी सेवाओ को उन शूरवीरो के लिये अर्पित किया है, जो आज घायल होकर तेजपुर के अस्पताल को ऐतिहासिक गौरव प्रदान कर रहे हैं ! यहा के बच्चे-बच्चे की जुबान पर डा० नीहार की प्रशसा अकित है कि किस प्रकार वे दिन–रात घायलो की परिचर्या मे जुटे रहते हैं ! इस नौजवान को न भूख सताती है, न प्यास अटकाती है और न किसी प्रकार का प्रलोभन ही इनके पथ की बाधा बनता है। हमें डा० नीहार की निष्ठा पर गर्व है और मैं उनके गुरु डा० चटर्जी को इस बात पर बधाई देता हूँ कि उन्होंने सच्चे अर्थों मे एक डाक्टर भारत को प्रदान किया है

तालियों की गड़गड़ाहट से सभा भवन गूंज उठा। मैं सकुचित-सा अपनी कुर्सी पर बैठा था कि संयोजक ने घोषणा की कि डा० नीहार अपने कुछ विचार प्रकट करेंगे।

'माननीय स्वास्थ्यमंत्री जी, गुरुदेव, बहनो और भाइयो

आपने आज मुझे जो गौरव और सम्मान प्रदान किया है वह मेरे चरणों में एक सजीव स्फूर्ति का संचार करेगा। दरअसल मैं इस लायक न था यह तो आदरणीय डा० चटर्जी की कृपा का ही फल है कि मैं आपकी कुछ सेवा कर सका। प्रभु से यही प्रार्थना है कि वे मुझे ऐसी ताकत दें कि मैं दिन रात एक करके भी मातृ भूमि के इन रत्नों की कुछ सेवा कर सकूं। यही स्वदेश के प्रति मेरा कर्तव्य है और मैं उसके प्रति अपनी विनम्र सेवाओं सहित समर्पित हूं।

तब डाक्टर चटर्जी ने उपस्थित जन-समुदाय को मेरे विद्यार्थी-जीवन के कुछ दिलचस्प प्रसंग सुनाये, जिन्हें सुनकर लोग-बाग हंसी से लोट-पोट हो गये।

सभा की समाप्ति पर मैंने डा० चटर्जी और वत्सला को अपने ही साथ ठहरने का आग्रह किया। डा० चटर्जी ने बताया कि वे केवल एक रात्रि ही मेरे साथ बिता सकेंगे और अगले ही प्रातः उन्हें विमान द्वारा पटना पहुंचना है जहां कि 'आल इण्डिया मेडिकल कान्फ्रेंस' हो रही है। वत्सला से मैंने पूछा कि वह कहां ठहरी है? उसने एक युवती की ओर संकेत कर बतलाया कि वे मेरी बचपन की सहपाठी हैं और इन्हीं के साथ ठहरी हुई हैं। इसके तुरन्त बाद ही वत्सला के संकेत पर वह युवती वहां आ गई थी। वत्सला ने उसका मुझे परिचय देते हुये कहा 'ये हैं मेरी सखी कनिका सान्याल जिन्हें मैं बंगाल की लता मंगेशकर कहती हूं।'

मैंने लक्ष्य किया कि उस कृष्णवर्णा युवती के कपोल लज्जा से आरक्त हो गये थे और उसने मुझे नमस्कार करने के उपरान्त केवल इतना ही कहा—वत्सला बचपन से ही शरारती है, जब इसे किसी को गिराना होता है तो ऐसी ही बातें करती है।'

'गिराने से आपका तात्पर्य ऊंचा उठाने से है।' मैंने वत्सला की ओर से हस्तक्षेप किया, और दूसरे ही पल जैसे मैं सोते से जाग गया हूं 'आप सुधीरा सान्याल की चचेरी बहन तो नहीं हैं?'

'आप उन्हें कैसे जानते हैं?'

'वे इंगलैंड में मेरी परिचिता रही हैं और आजकल मेरे मित्र प्रकाश गुप्ता की

सहगामिनी हैं।'

'विधाता की कैसी विचित्र सृष्टि है कि चचेरी बहन का परिचित, आज मेरा भी परिचित होने जा रहा है !'

' पर इस शुभ-परिचय के उपलक्ष्य मे आपका मधुर गीत कब सुनने को मिलेगा ?'

'आप भी मेरी सहेली की बातो मे आ गये। यह तो वेपर की हाकती है !' कनिका सान्याल ने प्रतिवाद किया।

'नही मिस सान्याल मैं वत्सला का अनुगामी नहीं हूँ। आपकी प्रशसा तो इग्लंड में सुधीरा ने भी की थी।'

'अच्छा तो यह बात है। आप कभी आइये हमारे यहा, पिताजी को आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता होगी।'

'नीहार, चलो तुम्हारे बगले पर चलें। इन लोगो से तो मिलते ही रहोगे, मैं कुछ रैस्ट (आराम) चाहता हूँ।' डा० चटर्जी ने फूलो से घिरे हुये नीहार को अचानक ही टोक दिया।

तब मैं डा० चटर्जी के साथ कार मे बठकर, कुछ ही देर मे अपने बगले पर आ गया। मम्मी तथा डौरोथी का पत्र, सन्ध्या की डाक से अस्पताल के पते पर आया था जिसे एक कमचारी ने अभी अभी मुझे लाकर दिया है। लिखा था

"प्रिय बेटा नीहार,

आज तुम्हारे परीक्षाफल के बारे में मालूम हुआ कि तुम अपने विश्वविद्यालय में प्रथम आये हो। इस समाचार से मैं फूली नही समा रही हूँ। काश, आज तुम्हारे पिता जीवित होते ! कितने हर्षित होते वे तुम्हारी इस उल्लेखनीय सफलता पर ! आज स्वप्न में, मैंने उनके दर्शन किये थे, वे तुम पर आशीर्वाद की मागलिक वर्षा कर रहे थे।

अपने प्रिय पुत्र की सफलता पर वे अत्यन्त प्रसन्न थे, पर बेटा, इस तरह अकेले कब तक रहोगे ? अब ईश्वर का दिया, सभी कुछ तुम्हें मिल गया है। अब तो केवल एक ही कसर है, मैं बहू का मुह देखने के लिए तरस रही हूँ। यह नीली कहती है—'भय्या, भाभी को कब लायेंगे !' सिस्टर फ्रैंकलिन का पत्र पूना से आया है वे भी डौरोथी के सबध को लेकर बहुत विकल हैं। कब तक प्रतीक्षा करवाओगे उन्हें ? बेटा, सब काम समय पर ही शोभा देते हैं। अब अधिक देर न करो अपने निर्णय से मुझे शीघ्र ही सूचित करो। अपनी सेहत का

ध्यान रखना, खाना समय पर खाते हो या नहीं ? नीली नमस्ते कहती है और तुमसे मिठाई की मांग करती है।

—तुम्हारी मां।'

डौरोथी ने लिखा था

'मेरे आराध्य

आप जब से गए हैं तब से केवल एक पत्र मिला है आपकी कुशल क्षेम का। उसका मैं कभी का उत्तर दे चुकी हूँ पर आप मौन हैं। क्या आप अपनी डौरोथी पर नाराज हैं ?

आज समाचारपत्र से आपका शानदार तरक्की का ज्ञात हुआ। मन बाँसों उछलने लगा। प्रियतम अपनी डौरोथी की हार्दिक बधाई स्वीकार करें। मम्मी को जब यह समाचार विदित हुआ तो उनकी आँखों में स्नेहावेग के कारण अश्रु बिन्दु झलक आए।

काश आज आप यहां होते या मैं ही पंख लगाकर आपके पास उड़ आती। सच कहती हूँ, अब किसी काम में मन नहीं लगता एक प्रकार की उद्विग्नता प्रतिपल घेरे रहती है। आपकी चिन्ता प्रतिदिन मन को कुरेदती रहती है। जब खाना खाने बैठती हूँ तो सोचती हूँ कि मेरे देवता ने अब तक खाना खाया होगा या नहीं ? जब सोने के लिए शय्या पर जाती हूँ तो विचार आता है कि आप न जाने क्या कर रहे होंगे ! मन उड़ा उड़ा-सा रहता है।

आप अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें और आपको मेरी सौगन्ध है कि आप समय पर भोजन, विश्राम और निद्रा लें। अब चीनी आक्रमण की घटाएँ छंट रही हैं प्रभु से यही निवेदन है कि वह हमारे देशवासियों को शक्ति और सुबुद्धि दे, ताकि हम शत्रु का प्रतिकार कर सकें। मेरी छाती गर्व से फूली नहीं समाती है जब मैं यह सोचती हूँ कि मेरे प्रिय घायलों की मरहमपट्टी उपचार और शल्यक्रिया कर रहे हैं। कितनी सौभाग्यशालिनी हूँ मैं, इस क्षण तो मुझे ऐसा लगता है कि जैसे समस्त संसार, मेरे भाग्य पर ईर्ष्या कर रहा है।

प्रियतम, अब विदा दें। कॉलिज का समय हो रहा है, इसलिए पत्र यहीं समाप्त करती हूँ। आशा है, आप इस बार मुझे निराश न करेंगे। शत शत चुम्बन और प्रेमार्द्र अश्रु आपको भेंट करती हूँ।

सदैव आपकी ही,
डौरोथी।

इन पत्रों को पढ़कर मन न जाने कैसा हो गया था ! रात, बड़ी देर तक डा०

चटर्जी, मुझसे बात करते रहे। इंग्लैंड के जीवन के बारे में, स्टनबिसे परिवार के सम्बन्ध में, चिकित्सा विज्ञान की नई शोध भी हमारी बातचीत का प्रसंग बनी। फिर उन्होंने भी वही बात दुहरायी कि अब मुझे चौपाया हो जाना चाहिए। हे प्रभु आप कैसी साजिश रच रहे हैं, इस नीहार के विरुद्ध कि सभी परिचित, पूज्य एवं आत्मीय एक ही स्वर दुहरा रहे हैं विवाह!
विवाह!!

प्रात ही डा० चटर्जी पटना के लिए विमान से उड़, पर जाने से पूर्व उन्होंने सर्जीकल वार्ड का एक राउंड मेरे साथ लिया और हम दोनों ने आवश्यक विचार विमर्श किया। उनके व्यावहारिक सुझाव, मेरे लिए बड़े लाभप्रद सिद्ध हुए।

फिर वही ऑपरेशन थियेटर, चीर फाड़ गोलियों का निकालना, हड्डियों का बठाना, अपाहिजों की परिचर्या और सबसे अन्त मे चकनाचूर होकर सो रहना! अगले प्रात फिर वही क्रम दिन आये और गये, पर मैं वहीं एक मुस्तैद सैनिक की तरह डटा रहा!

□□

२०

आज डाक्टर बतासा मुखर्जी को रायपुर के [illegible] अस्पताल में अपनी ड्यूटी ज्वाइन किए एक सप्ताह हो गया है। वे मेरी सहयोगी हैं। उनके अधीन नर्सों की परिचर्या का निरीक्षण, रोगियों की सुख-सुविधा की व्यवस्था और मेरी सहायता करना है। सचमुच बतासा के साथ भार समान भाग में मेरा काम बहुत हल्का हो गया है अब उतना नहीं खटना पड़ता। अस्पताल की व्यवस्था में भी एक नई दृष्टि एक नई चेतना परिलक्षित हो रही है। शुक्र है उस परवरदिगार का जिसने इस ओर पर बतासा के रूप में रिलीफ भेजी। अब मुझे ऐसा भी प्रतीत नहीं होता कि मैं किसी अनजाने अजनबी प्रदेश में हूँ। बतासा का सान्निध्य और अभिन्न यही स्मरण कराता रहता है कि मैं अपने परिचित एवं आत्मीय प्रदेश में लौट आया हूँ।

इस सब के बावजूद मेरे अन्तर्मन की उलझन बढ़ी है। सोचता हूँ कि मैं अपने जीवन को बेपनाह समस्या और मायूस पहेली बनाता जा रहा हूँ। मैंने उसे यहाँ क्यों बुलाया वह यहाँ क्यों आयी? मेरे बुलाने में क्या मात्र औपचारिकता ही थी या कोई कुछ अन्तरातलस्पर्शी भाव था पर वह तो स्वयं ही यहाँ आने को उत्सुक थी। फिर उसके आवेदन को स्वास्थ्य विभाग के निदेशक ने मंजूर किया है मैंने तो नहीं। मैं इसके लिए कतई जिम्मेदार नहीं हूँ। पर इतना अवश्य स्वीकार करूँगा कि उसका आना मुझे अच्छा लगा। डोरोथी का चित्र मन में उभरता है जैसे कह रहा हो यह तुम क्या कर रहे हो!

नहीं डोरोथी, मैं तुम्हारे प्रति मिथ्याचरण नहीं करूँगा तुम मेरे मन के मंच पर एकाकी ही नाचती रहो उल्लास एवं स्फूर्ति की वर्षा करती रहो!

तो क्या तुम बतासा को अपना सहयात्री ही समझते हो एवं ऐसा सहयात्री जिनके पथ और गन्तव्य एक हैं! —जैसे किसी ने पूछा।

हाँ, मान लो है ही! क्या आपको इसमें एतराज है? यदि कोई जीवन-यात्रा के पथ पर अपने विमल व्यक्तित्व का सौरभ बिखेरता चले, तो इसमें आपत्ति की क्या बात हो सकती है!

अच्छा तो एक जीवन-संगिनी है और दूसरी सहयात्रिणी है। —किसी ने व्यंग्य किया।

'हाँ, यही समझिये, पर आपको इसमे कोई अन्तर्विरोध क्यो दिखाई देता है?''—मैंने इस प्रकार व्यग्य को स्वीकारा जसे उसमे कही कोई कटुता न हो, आशका की छाया का तो प्रश्न ही नहीं है। पर कहीं, मैं अपने आपको प्रवचित तो नहीं कर रहा हूँ?—चेतना ने एक नुकीला प्रश्न उठाया।

मैं इस उधेडबुन मे न जाने कब तक गोते लगाता रहता, कि फोन की घटी टनटना उठी। वत्सला ने मुझे आपरेशन थियेटर मे याद किया था। एक सगीन केस है उसमे वह मेरा निर्देशन चाहती है।

'हाँ, अन्तमन की कन्दरा मे अब अधिक गोते न लगाओ, कत्तव्य की पुकार है, उसे सुनो अपना करणीय निश्चित करो।''—जसे डा० चटर्जी मन को प्रबोधन दे रहे हों।

आपरेशन करते-करते तीन बज गय। बीमार को 'बी' वाड मे उन्तीसवें बड पर पहुँचाने का आदेश देकर, मैं और वत्सला कमरे मे आये। मैंने माऊथ-कवर खोला, वत्सला ने ऑपरेशन-गाउन उतारने में मेरी मदद की और इच्छा की कि मैं आज 'लच' उसके साथ लू। वह अपनी यूनीफॉर्म खोल आयी थी और आग्रह कर रही थी अपने साथ चलने का। मैंने स्थिति को स्पष्ट करने के विचार से कहा 'वत्सला, अपना तो लच डिनर-टी सब एक ही हैं, देख नहीं रही हो ३ ३३ हो रह हैं। इतना लेट खाकर रात्रि मे खाने का तो कोई प्रश्न ही नही है, बस दूध पीकर सो जाता हूँ।''

''डाक्टर आप अपनी सेहत का ध्यान रखें, ऐसे कब तक चलेगा!'—उसने चिता व्यक्त करते हुए कहा।

काम इतना रहता है कि क्या बताऊ, खाने की सुध ही नही रहती यह तो तुम समय पर आ गइ, वर्ना मैं बीमार पडने ही वाला था!'

तो फिर लोग यही कहेंगे फिजिशियन हील दाई सल्फ!'' (डाक्टर, पहले अपना इलाज करो, फिर दूसरों का।'')

'पर पर मैं तो सजन हूँ और मेरी फिजिशियन तो तुम हो!'—इसी तरह हँसी-मजाक करते हुए, हम कनिका सायाल के बगले पर पहुँचे। वत्सला ने सायाल-परिवार से मेरा परिचय करवाया, मि० सान्याल बीच मे ही बोल पड 'इनकी बाबत सुधीरा ने हमे सब लिख दिया है आज इन्हें अपने यहा देख कर मैं बेहद खुश हूँ।'

नमस्ते!' कनिका ने बीच मे ही बमबारी कर दी।

दखिये, आज आ गया हूँ, मैं आपके यहा! आज आपसे रवीन्द्र-सगीत सुनूगा।

इसी बात पर वत्सला मुझे लाई है !"—मैंने अवसर का उचित लाभ उठाने की दृष्टि से कहा।

वनिता ने मेरी बात का कोई उत्तर नहीं दिया और वह बरस पड़ी वत्सला पर दीदी, आप बड़ी वसो हैं ! भोजन के लिये हम दो घंटे से आपका इंतजार कर रहे हैं ! सब खाना ठंडा हो गया है।"

"कोई बात नहीं, डाक्टरों को 'इनवाइट' (निमंत्रण) करने पर तो सब-कुछ होता है। वनिता जी आज एक मेजर ऑपरेशन में फंस गये थे, माफ कीजियेगा ! हमारे आने से कहीं जरूरी, एक सैनिक की जान थी, जिसे हम बचाने में कामयाब हुये हैं !'—मैंने वत्सला के मुँह खोलने से पूर्व ही अपनी ओर से सफाई दे दी।

हार्टी कॉंग्रेट्स टू यू डाक्टर, ऑन योर रिमार्केबिल सक्सेस ! (डाक्टर, आपकी उल्लेखनीय सफलता पर मैं बधाई देता हूँ !)—मि० सान्याल ने हस्तक्षेप करते हुये कहा।

अच्छा अब आइये भोजन पर।"—श्रीमती सान्याल ने साग्रह कहा।

डाइनिंग रूम में पहुँचे, तो नाक महक से भर गई। आज, वाकई बड़ी भूख लगी थी हालांकि इसका एहसास वहाँ पहुँचने पर ही हुआ। करीने से मिठाइयाँ सलाद फल सब्जियाँ, पूरी-कचौरी आदि रखे थे। सब अपनी अपनी प्लेटों में लेकर खाने लगे बीच-बीच में वनिता जी इसरार करती जाती।

'आज तो आपने हम सब लोगों को भूखों मार दिया !"—वनिता ने अपने खूबसूरत दाँतों से कचौरी काटते हुये कहा।

क्या फिक्र है अब खाने में अधिक आनन्द आयेगा !"—मैंने अपनी झेंप मिटाने के लिये कहा।

अधिक आनन्द ! यहाँ तो पेट में चूहों ने वो घुड़-दौड़ मचाई, कि भूख ही गायब है ! —वनिता ने चुटकी ली।

'आप यह एपीटाइजर (क्षुधावारक पदार्थ) लीजिये, चूहे फिर दौड़ने लगेंगे।'—मैंने विनोद के भाव से पूरा रसगुल्ला का मुँह में रखते हुए कहा।

हम तो रायता अच्छा लगता है ! यह 'एपीटाइजर' भी है और पेट में पूरियाँ उतारने में मदद करता है। —वत्सला ने दार्शनिक गंभीरता के साथ कहा।

तभी चीनी आक्रमण का प्रसंग छिड़ गया था। मि० सान्याल, चीन दो एक बार हो आये हैं वे उनके आतिथ्य हिन्दी चीनी भाई भाई को एक ढकोसला बता रहे थे। उन्होंने बताया कि दुनिया के मुल्कों से अलग रहने के कारण

और अपनी ज्वलन्त समस्याओ का सही समाधान न ढूंढ़ पाने के कारण, आज चीनी तानाशाह क्षुब्ध हैं और खिसियायी बिल्ली खम्भा नोचे की कहावत को चरितार्थ कर रहे हैं। उनकी स्थिति उस सिंह के समान है, जो अपनी ही परछाइ को कुए मे देखकर दहाडता हुआ, उसमे कूद पडा हो, और अपने ही अहकार के गहन जल मे निगल लिया गया हो। उन्होंने विस्तार से बताया कि चीनी खाद्य-पदार्थों की कमी से बेहद परेशान हैं, उनकी निरन्तर बढती हुई जन सख्या उनके खाद्य स्रोतो को सोख गई है। अब वे हिमालय के इस पार पर पसारना चाहते हैं, और उधर रूस की सीमा मे भी चोरी छिपे प्रविष्ट होते रहते हैं। असहाय और भूखी जनता, रूसी क्षेत्र म प्रविष्ट होती है तो चीनी आकाओ का पारा गम हो जाता है और वे अपन ही भाइयों को, देशवासियो को भून देते हैं! साम्यवाद का यह अमानवीय पहलू उसका घृणित विस्तारवादी रूप, उनकी अपनी समस्याओ का स्वाभाविक परिणाम है। लाल क्रान्ति आज विकारग्रस्त हो गई है और अपनी कब्र खुद ही खोद रही है! एशिया मे फूट के बीज बोकर चीनी तानाशाह अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। पाकिस्तान, इडोनेशिया अल्बानिया आदि उनके लिए केवल शतरज के मोहरे हैं।

मि० सान्याल के उद्बोधक व्याख्यान के बाद मैंने कनिका से कुछ गाने का आग्रह किया।

'यह तो दुहरा जुल्म है। पहले तो चार-पाच बजे लच हो और फिर डटकर खा लेने के उपरान्त सा रे-गा-मा का अभ्यास किया जाये! यह उल्टी गगा आप क्यों बहाना चाहते हैं?'—कनिका ने पूरी मोर्चेबन्दी करते हुए कहा।

' पर यहा तो कुछ ऐसी ही आदत पड गई है। आप यकीन मानिये मैं तो ३ ४ बजे ही लच ले पाता हू। फिर खाने के बाद काऊच पर लेटकर कविताएँ पढ़ता हू चिकित्सा विज्ञान की पत्रिकाएं देखता हू।—मैंने मोर्चे को नाकाम करते हुए कहा।

तो यहा भी क्या, चीन-भारत-सीमा विवाद आरम हो गया!' कनिका ने सामयिक व्यग्य किया।

'अरी निगोड़ी, नखरे क्यों करती है! कब-कब डाक्टर नीहार तुझसे फर्माइश करेंगे।'—वत्सला ने अपनी सखी पर भरपूर वार किया।

कनिका तिलमिला उठी थी और बचाव का कोई रास्ता न पाकर, विवश हो, पूछ बठी 'अच्छा बताइये, क्या सुनाऊ?'

'अपने मन का गीत सुनाओ।' मैंने आग्रह करते हुए कहा।

तब कनिका ने दो गीत सुनाए एक तो प्रसाद का हिमाद्रि तुग शृग से स्वतन्त्रता पुकारती। और दूसरा महादेवी का मैं नीर भरी दुख की बदली।' मेरे प्रस्ताव पर उसने रवीन्द्र-सगीत भी सुनाया।

सचमुच कनिका, बगाल की लता मगेशकर है। गीत की विषय वस्तु म वह अपने प्राण उन्ल देती है। उसके आरोह अवरोह मे प्राणा का ऐसा विचित्र प्रकम्पन था कि समां बध गया। कोटि-कोटि हृदयो को उल्लसित करने वाली सगीत-सम्राज्ञी लता की तरह कनिका की वाणी म प्राणा का अपरिमय माधुय था ऊजस्वित यौवन की टकार थी और सजल भाव मघो के बीच उसकी प्रतिभा दामिनी जब कौंधती थी तो श्राता त्रिगुद्ध रस-दशा को पहुँच जाते थे। सगीत के इन मधुर चपका का पान करके विलक्षण परितृप्ति अनुभव हुई। वह रमणीक सन्ध्या, सचमुच कितनी विस्मय-विमुग्ध एव आह्लाद-पूरित थी जब मैं सान्याल-परिवार से विदा ले पुन अपनी ड्यूटी पर जा रहा था। लगता था जसे प्राणा की क्लान्ति कला की तृषा एव जिह्वा के माधुय सरावर में डूब कर कण एव नयन भी निहाल हो गय थे क्योंकि सबको उनका प्राप्य मिला था और भरपूर मात्रा मे।

अस्पताल के पोर्टिको मे, ज्योही मैंने कार रोकी त्योही एक कमचारी ने बताया कि स्थल-सेनाध्यक्ष जनरल चौधरी आकस्मिक रूप से आ गये हैं और कि मुझे याद कर रहे हैं। वे अपने आभार को प्रकट करन के लिए ही अब तक ठहरे हुए हैं क्योंकि अस्पताल की सुन्दर व्यवस्था देखकर उन्होंने पूण सन्तोष व्यक्त किया है।

□ □ □

आज अस्पताल के लिये तयार हो ही रहा था तो पोर्टिको में किसी टक्सी को देखकर मैं आश्चय-चकित रह गया। दरवाजा खुला और एक महिला उतरती हुई देखी। मैंने बरामदे में आकर देखा यह तो मम्मी थी। उन्हें इस प्रकार अचानक आया हुआ देखकर, मेरे आश्चय का ठिकाना न रहा।

'अरे मम्मी आप, और वह भी बिना सूचना के!' मेरे मुख से हठात् निकल पडा।

हा बेटा बात कुछ ऐसी ही है। एक बात को लेकर म कुछ दिन से बडी परेशान हूँ उसी का समाधान पाने अचानक ही यहा आ गई हूँ।'

"आखिर ऐसी क्या बात है मम्मी? खरियत तो है?"

अरे इतना अधीर क्या होना है कुछ सास तो लेने दे! तनिक ठहर, फिर सब बताऊगी।'

मैंने गृह-सेवक को आवाज देकर मम्मी का सामान यथास्थान रखवाया और तुरन्त ही चाय और नाश्ता लाने के लिये कहा। मम्मी हाथ मुह धो आई थी और कुछ प्रकृतिस्थ हो चली थीं, तभी मैंने फिर कुरेदा "हां मम्मी, आखिर एसी क्या बात है जो आपको यहा तक खींच लाई है?'

"नहीं मानेगा रे तू ले तो सुन। पिछले हफ्ते सिस्टर फ्रकलिन आई थीं। उनके बम्बई वाले कजन भी साथ थे। वे फरवरी मे विवाह की तारीख निश्चित करना चाहते हैं। मैं 'हां' करने को ही थी कि नीली ने मुझे टोक दिया। वह कह रही थी कि भया अभी विवाह के बारे में तय नहीं कर पाये हैं! देख रहा है रे तू मुझे, कितनी बूढ़ी हो चली हूं! क्या मेरे मरन के बाद विवाह करेगा? बोल तू क्या कहता है?"

"अच्छा मम्मी, खोदा पहाड़, निकली चुहिया! यह बात तो आप चिट्ठी द्वारा भी पूछ सकती थी।" मैंने घडी पर अपनी दृष्टि गडाते हुय कहा। साढे-आठ हो आए थे और मुझे अस्पताल ड्यूटी पर पहुँचना था।

'मम्मी, अभी आप आराम करें, दुपहर को फुरसत मे बात होगी।'

तभी गृह सेवक को मम्मी के आराम की पूरी ताकीद कर, मैं कार मे बैठ अस्पताल की ओर चल पड़ा। आज कई मेजर ऑपरेशन के केस थ। यो मुझे समय से १५ मिनट पूव पहुँचना था पर पहुँच रहा हूँ १५ मिनट बाद। मेरे सहकारी डाक्टरो ने आपरशनो की सपूर्ण पूव-व्यवस्था कर ली थी। वे मेरी ही प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने बगले पर फोन भी किया था किन्तु तब तक मैं चल चुका था। मम्मी ने सूचित कर दिया था कि मैं शीघ्र ही पहुँच रहा हूँ।

सबसे पहले एक कप्तान का ऑपरेशन था। उसके पसलियों में से कारतूस निकालने थे और आवश्यकता पड़ने पर उसके फेफड़े भी बदलने थे। इस बहादुर कप्तान के अनेक गोलियां लगी थी और जब वह अस्पताल मे पहुचा था, तो प्राथमिक सहायता के बावजूद, उसका ड्रेसिंग बन्डेज (पट्टा) खून से तर हो रहा था, पर कप्तान बड़ा दिलेर था, उसके चेहरे पर ऐसी मनमोहिनी मुस्कान खेल रही थी जसे कुछ हुआ ही न हो! उसे बड़ी कठिनाई से सनिक अस्पताल लाया गया था वह तो मोर्चे को नहीं छोड़ना चाहता था।

मैंने उसकी मुस्कान को देखा और अनुभव किया कि ऐसे ही सूरमाओं पर तो हमारी भारतमाता की लाज टिकी हुई है! जब तक मुसीबतों में मुस्कराने वाले नौजवान हमारी सेना में हैं तब तक हम किसी भी शत्रु को लोहे के चने चबाने के लिये मजबूर कर सकते हैं। इस ऑपरेशन का सम्पन्न करते हुय मैं

ऐसा अनुभव कर रहा था, जैसे मैं भी एक सैनिक हूँ और अपने भाई की भरपूर मदद कर रहा हूँ। डाक्टर भी तो आखिर सनिक पात मे होते हैं ना।

साथी डाक्टर ने उसकी चेतना का अपहरण कर लिया था और अब वह निढाल होकर आपरेशन-टेबिल पर पड़ा था। उसकी पसलियाँ अनेक गोलिया लग जाने के कारण छलनी हो गई थी और ऐसा प्रतीत होता था कि यदि उसके फेफड़े को न बदला गया, तो वह जीवित न रह सकेगा। खून इतना अधिक बह चुका था कि मुझे ताज्जुब हो रहा था कि वह कैसे अब तक जिन्दा है। आपरेशन को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए आवश्यक था कि उसे तत्काल ही खून दिया जाय जिससे कि वह आपरेशन की पेचीदगियो को झेल सके! डाक्टर वत्सला ने उसके शरीर मे खून चढाया और तब मैंने सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से उसकी पसलियो को गौर से देखा। मैं हैरत मे था कि वह जवान इतनी साघातिक चाटों के बाद भी कसे जीवित था। अब इसके सिवाय कोई चारा न था कि उसकी पसलियो को बदल दिया जाय, क्योंकि वे तो तार-तार हो गई थी। गनीमत यही थी कि हृदय के ऊपर के फेफड़े का भाग सही-सलामत था, यदि वहा भी कोई आघात हुआ होता, तो भारतमाता को अपने एक शूरवीर पुत्र से वंचित हो जाना पड़ता।

बीन-बीन कर कारतूस निकाले गये गिनने पर उनकी सख्या ८ ६ निकली। फिर एक वनमानुष के फेफड़े को उसके क्षत विक्षत फेफड़े के स्थान पर लगा दिया पेट में टाके लगा दिये और मेरे एक सहकारी डाक्टर ने स्वय बडी सफाई क साथ ड्रेसिंग किया। अब कप्तान कुछ-कुछ होश म आने लगा था और क्लोरोफार्म के कारण उसका जी कुछ-कुछ घबरा रहा था। मैंने हल्के से उसक पास अपना मुह ले जाकर पूछा 'कहिये अधिक तकलीफ तो नही हुई!'

वह सभवत उत्तर देने की स्थिति मे न था, किन्तु उसकी आखो की चमक और होठों की थिरकन, जसे वह रही हो कि वह इस जीवन-दान के लिये बडा ही आभारी है और वह अब चीनी दरिंदों का डटकर मुकाबला करेगा। उसके हाथ भी जसे नमस्कार करने के लिये उठे पर शक्ति के अभाव में बीच मे ही गिर पडे।

इस सारे ऑपरेशन मे लगभग साढे-तीन घण्टे लगे पर मुझे ऐसा ही लग रहा था कि जसे सब-कुछ आनन फानन में १० १५ मिनट में ही हो गया हो। माथे पर पसीना आ रहा था और अब जसे पूरी सास लेन का मौका मिला था। कप्तान को उसके बैड पर पहुँचाने का सकेत कर मैं एक माइनर आपरेशन से निपट लेना चाहता था। इस तथा अन्य आपरेशनों को यद्यपि मैं अन्य डाक्टरो के

सुपुर्द करना चाहता था, क्योंकि मम्मी का फोन आ गया था और वे लंच पर मेरा इन्तजार कर रही थी। पर यह सनिक मेरे से ही आपरेशन करवाने के लिए इसरार कर रहा था। तोपों की धाय धाय मे और बदूकों की दनादन में, इसकी श्रवण-शक्ति विलुप्त हो गई थी। वह अपने कान का ऑपरेशन मेरे से ही करवाने के लिये कृतसकल्प था। मैंने मम्मी को फोन पर इत्तिला दे दी थी कि मैं डेढ बजे तक पहुँच रहा हूँ, हालांकि तीन बजे से पहले ऑपरेशन थियेटर छोडना मेरा स्वभाव नहीं था।

वत्सला ने उसके कान में इन्जक्शन लगाया और तब उसके बायें कान पर एक शल्ययन्त्र रखकर मैंने आन्तरिक स्थिति का परिज्ञान किया। यद्यपि उसकी आँखों पर रुई लगाकर पट्टी बाधी जा चुकी था, पर फिर भी वह बीच-बीच में कुछ-कुछ बिदक जाता था। उसकी विलुप्त श्रवणशक्ति का सधान किया गया और नसों को यथास्थान बठा कर पट्टी बाधी गई। हाथ के ऊपर की नस को काटकर कान में फिट' किया गया था, इसलिये हाथ के ऊपरी भाग पर भी मरहम पट्टी की, और तब फारिग होने के विचार से, मैंने सारी बात डाक्टर वत्सला को समझाई और ऑपरेशन थियेटर से रुखसत ली।

दौडा-दौडा घर आया और इससे पूव कि मम्मी कुछ कहें, मैंने सफाई देते हुये कहा मम्मी, आज बडा सीरियस ऑपरेशन था। एक कप्तान का फेफड़ा ही बदलना पडा। एक दूसरे सनिक की सुनने की ताकत को दुबारा लौटाया और तब बीच मे ही काम छोडकर आप तक दौडा आया हूँ।'

'क्यो रे, तू रोज ही इसी तरह देर से खाना खाता है।'

'नहीं मम्मी, आज तो डेढ घण्टे पहले खाना खा रहा हूँ। मेरे लच और डिनर का टाइम तो साढे तीन बजे है।

हा, तेरी सारी कहानी, मैंने मिसरानी से पूछ ली है। मुझे जिस बात का डर था, वही तू करने जा रहा है। इस तरह कितने दिन चलेगा रे ?'

मम्मी राष्ट्र के शूरवीर पुत्रों के लिये उपवास तो करना ही पडता है। आखिर वे लोग हथेली पर जान रख कर अपने वतन के लिये लडते हैं, तो क्या हम भूखा भी नही मर सकते।'

अच्छा तो यह बात है, आप भूखे रहकर दुश्मन स मुकाबला करते हैं।'
दूसर ही पल हम खाने की मेज पर थे और मम्मी ने फिर वही बात छेड दी थी, जिसको लेकर व यहा तक आई थी।

'नीहार, तुम विवाह के सबध मे फसला क्यो नही करत ? सिस्टर फ्रकलिन के

प्रस्ताव से तो मैंने तुम्हें परिचित करवाया ही है यदि यह प्रस्ताव तुम्हें मंजूर न हो तो वत्सला के बारे में भी सोच सकते हो । यह सजातीय है और बंगाली है । अपने रिश्तेदार तो उसी के लिए जोर दे रहे हैं। यों मुझे दोनों ही लड़कियां पसन्द हैं, तुम किसी एक के बारे में फैसला कर लो।'

मम्मी की निश्चयात्मक ध्वनि से मैं अवाक रह गया था और किंचित् किंकर्तव्यविमूढ़ भी हो गया था। आखिर डोरोथी और वत्सला मेरे जीवन में इतने निकट रही हैं और मैं जिस प्रकार इन दोनों के बीच उलझा रहा हूँ केवल इसी आधार पर मम्मी या अन्य व्यक्तियों का ऐसा सोचना सर्वथा स्वाभाविक ही है। मैं निर्णय के अंतिम सूत्र को हाथ में लेना चाहता हूँ पर भाग्य की वह मुट्ठी भर हाथ से छूट जाती है और उलझ जाती है। ज्यों ज्यों सुलझाने की कोशिश करता हूँ त्यों-त्यों और उलझ जाता हूँ। हाय री नियति यह कैसी विडम्बना है। मैं इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था कि मम्मी ने फिर टोका कैसे हो तुम सर्जन। तनिक-सी बात भी तय नहीं कर पाते। आपरेशन थियेटर में क्या इसी प्रकार की बुद्धि से काम लेते हो ?

इस व्यंग्यपूर्ण चुनौती को मैं स्वीकार न कर सका और हठात् ही बोल पड़ा

मम्मी यह बड़ी पचीदा समस्या है जिन्दगी भर का सवाल है और मैं इस बारे में कुछ भी तय नहीं कर पा रहा हूँ। कभी कोई पलड़ा नीचे की ओर झुकने लगता है तो कभी दूसरा पलड़ा भारी पड़ जाता है। इसलिये इस बारे में फैसला आप ही करें।'

इतना पढ़ लिख कर यह बात तू मेरे ऊपर क्यों डाल रहा है रे नीहार ? कल को कोई गलत फैसला हो गया तो मुझे ही कोसेगा।

मैं मम्मी की बात का कुछ उत्तर देने ही जा रहा था कि गृह सेवक ने सूचना दी कि डा० वत्सला मुखर्जी और कनिका सान्याल आई हैं।

मैंने आज प्रात ही आपरेशन थियेटर में वत्सला को मम्मी के आने की खबर दी थी इसीलिये वह मिलने आई है मैंने मन में सोचा पर यह भी विधाता का कैसा तर्क है कि जिसके या जिनके बारे में फैसला होना है वह या वे स्वयं भी अपनी गवाही देने दौड़े चले आते हैं। मम्मी ने वत्सला को देखा न था नीली से उसके बारे में बहुत-कुछ सुन रखा था।

वत्सला और कनिका आ गई हैं और मम्मी से बातें कर रही हैं। मैं उन्हें एकांत देने के लिहाज से अपनी स्टडी (अध्ययन कक्ष) में आ गया हूँ और फिर उन्हीं उलझे तारों को सुलझाने की कोशिश करता हूँ। कभी अल्मारी से

कोई पुस्तक निकालता हूँ पन्ने पलटता हूँ और ठोडी के नीचे हाथ रखकर सोचने लगता हूँ। कभी मेज पर पडी हुई पत्रिकाओ के पन्ने ही पलटने लगता हूँ, पर दरअसल दिमाग न पुस्तको मे है, न पत्रिकाओं मे। रह रह कर डोरोथी और वत्सला का ध्यान आता है। वे दोनो जैसे मुझसे आँख मिचौनी का खेल-खेल रही हो। एक बचपन की साथिन, युवावस्था की निकटतम मित्र और समर्पिता है तो दूसरी तरुणाई की मित्र और जीवन यात्रा के एक महत्त्वपूर्ण अग की सहयात्री है। एक का व्यक्तित्व यदि पीले गुलाब-सा है तो दूसरी का व्यक्तित्व रक्त इदीवर-सा प्रस्फुटित है। किसे छोडू, और किसे अपनाऊ?

अभी कोई निर्णय नही कर पाया था कि दरवाजे पर हल्की-सी दस्तक होती है और दरवाजे की दरार म से एक चपल बालिका झाँकने का असफल प्रयास करती है।

क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ डाक्टर? हम तो आप से मिलने आये और आप 'रद्दी मे मशगूल हैं।'—वाणी मे स्पष्ट ही उपालभ था और आत्मीयता की एक सहज एव निरछल अभिव्यक्ति भी।

आइये आइये। मैं तो आप लोगो को एकात देने के लिहाज से ही यहा आ बैठा था।

'डाक्टर, आपकी मम्मी, वत्सला से बहुत लंबे चौड सवाल पूछ रही हैं आखिर उस बचारी की इतनी कडी परीक्षा क्यो ली जा रही है। आप नाहक लोगो को परेशान करते हैं, अपना फसला क्यो नही दे देते?

इस उद्धत बालिका को मैं कसे समझाऊ कि फसला देना उतना आसान नही है जितना वह समझती है। वह चचल हरिणी फिर चिहुँक उठी

'डाक्टर, वत्सला दीदी आपकी बडी तारीफ करती हैं। आप विवाह क्यो नही कर लेते?'

मैं समझ नहीं पाया कि तारीफ और विवाह मे क्या तुक है और क्या यह आसान है कि कोई पलक मारते ही फसला कर ले। मैंने यह भी अनुभव किया कि कनिका को इन सब बातो का कसे सुराग लग गया।

'कहिये, आपकी वत्सला दीदी, *क्या तारीफ करती हैं? आप ही बतलायें, क्या* मैं तारीफ के काबिल हूँ!'

'हम तो आपको तारीफ के काबिल नही समझते हमारा बस चले तो आपको आपरेशन थियटर में बद कर दें और कहें बच्चू, यही तुम्हारी दुनिया है। इसी को खाओ-पीओ ओढो बिछाओ!'

सचमुच, कनिका ने मुझे बहुत सही समझा था और मैं ऑपरेशन थियेटर के पिंजरे मे ही बद होने लायक प्राणी हूँ।

'चलिये न डाक्टर मेरे साथ, वत्सला दीदी इन्तजार कर रही होंगी।'

कनिका के साथ ड्राइग रूम मे पहुँचने पर मैंने गौर से देखा मम्मी की आंखो मे चमक थी, पर वत्सला जसे लाज से गडी जा रही हो! लाजवती का फूल होता है न, ठीक वैसी ही अवस्था वत्सला के मुख की थी! न जाने वह, कसी छुई मुई-सी हो रही थी! मुझे आया देख वह सामान्य अवस्था मे आई उसने मुझे विस्तार के साथ, उस दिन के बाकी बचे हुये आपरेशनो का वृत्तात सुनाया। वत्सला ने मम्मी को अपने घर पर ले जाने का भी आग्रह किया, पर चूंकि मम्मी को आज रात ही उदयपुर लौटना था, इसलिये वे उसके प्रस्ताव पर अमल न कर सकी। जब मैं उन्हें स्टेशन पहुँचाने गया, तो वे अपने कम्पार्टमेंट मे एक चौडी-सी बच पर बैठकर कहने लगी

'लडकी, बुरी तो नही है रे नीहार। मजूर क्यो नही कर लेता!'

'मम्मी तुम तो हरेक की ऐस ही सिफारिश करती हो। जो तुम्हारी नजरा मे आया, उसी को उछालने लग जाती हो! अभी यदि डोरोथी आ जाये, तो उसके जैसी कहने लगोगी!'

'आखिर मैं हूँ न अनिश्चय के पुतले की माँ! इस प्रकार का आचरण मेरे स्वभाव के सवथा अनुकूल है।'

अच्छा तो मम्मी मैं तार से अपने निश्चय को आप तक पहुँचाउगा।'

तो मेरा यहा आना फिजूल ही साबित हुआ! बात तार पर आकर अटक गई। जल्दी भेजना रे तार, मैं इन्तजार करूगी!'

गाडी ने सीटी दे दी थी। मैंने मम्मी का चरण-स्पश किया और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया फलने-फूलने का, जिसे दूधो नहाओ, पूतो फलो कहते हैं।

तीन दिन बाद मैंने डोरोथी के पक्ष मे, अपने निर्णय का तार द्वारा मम्मी के पास भेज दिया था हालाकि यहा कानों-कान किसी को इस निश्चय की खबर न थी! वत्सला जब भी मिलती, तो मैं अपनी निगाहें नीचे डाल लेता और उससे केवल वही बातें करता, जो कर्तव्य की दृष्टि से नहीं टाली जा सकती थी। मैं ऐसा महसूस करता जसे मैंने वत्सला के प्रति कोई अपराध किया है!

□□

२१

निणय ले लिया गया था और मैं निणय के पश्चात् के जजाल मे फँसा हुआ था। मेरी मानसिक स्थिति ठीक वसी ही हो रही थी, जसे कि कोई विद्यार्थी परीक्षा दे आया है और अपने उत्तरो की विवेचना, आराम से घर बैठकर कर रहा हो तो डौरोथी के पक्ष मे निणय ठीक ही है? पर तभी मन के किसी शून्य प्रदेश से वत्सला आ टपकती है और पूछती है "डाक्टर नीहार, मैंने आपके प्रति क्या अन्याय किया था जिसका यह दण्ड मुझे आज भुगतना पड रहा है! अगर ऐसी ही बात थी, तो आपने मुझे अटकाये क्यो रखा? तो वत्सला तुम्हें कसे बतलाऊ कि निणय की पृष्ठभूमि मे बचपन की चचलताओ और मोहमयी-छलनाओ का एक ऐसा सम्भार है, जो निणय के सर पर चढ कर जादू की तरह बोलता है! यदि आज मैं तुम्हारे पक्ष मे और डौरोथी के विपक्ष मे निणय देता, तो भी उलझन से निस्तार न होता! मन की यह कसी विडम्बना है! निणय कर लेने के उपरात तो कम से-कम मुझे हल्का हो जाना चाहिये, पर मैं हल्का होने के स्थान पर और भारी हो गया हूँ। मेरे मन के चरण, जसे उलझन के कीचड मे फँस गये हो और सवा मन के हो गये हो!

इन्हीं विचारो मे मग्न था कि घडी ने आठ का टनका बजाया और मेरी चेतना जैसे झकृत हो उठी उफ! मुझे सवा आठ बजे तो डयूटी पर पहुँचना है और मैं जल्दी-जल्दी तयार होकर अस्पताल पहुँच गया। आज के आपरेशना के बारे मे विचार विमर्श करने सहकारी डाक्टर मेरे कमरे मे आये हुये हैं वत्सला भी उनमे से एक है। मैं सबको आवश्यक निर्देश देता हूँ, वे अपनी शकाओ को उपस्थित करते हैं मैं उनका समाधान प्रस्तुत करता हूँ पर इस बीच न तो मेरी ही हिम्मत हुई कि मैं वत्सला पर दृष्टि निक्षेप कर सकूँ और न वत्सला ने ही मुझ से कुछ पूछा है जसे वह सकोच और भीति के भयावह जगल में फँस गई हो! मुझे यह बडा अजीब लगता है।

इसी स्थिति का प्रतिकार करने के लिये आपरेशन थियेटर मे जाने से पूव मैं वत्सला से पूछता हू "डाक्टर वत्सला क्या आज शाम को आप मुझे चाय पिला सकेंगी? आपसे कुछ बातें भी करनी हैं।

"ओहो यह भी कोई पूछने की बात है। आप जरूर आइये मैं आज सध्या को ५ बजे आपकी प्रतीक्षा करूगी, और यदि आपको आपत्ति न हो तो सिनेमा का प्रोग्राम भी बनाया जा सकता है।"

'हा ५ बजे आने की बात तय रही, पर सिनेमा के बारे मे कहने मे असमर्थ हूँ।'—यह कहकर हम दोनो अपने अपने काम मे लग गये।

मैं आज अपने काम से २ बजे ही निवृत्त हो गया था और लच लेकर आराम से धूप-सेवन कर रहा था कि मन कुछ कुछ उचटने लगा। मन म आया कि अभी ही वत्सला के यहा पहुँच जाऊ पर इसे उचित न समझ कर इलुस्ट्रेटिड वीक्ली के पन्ने पलटने लगा। आज न जाने क्यो कवितायें पढन को मन हो रहा था। वीक्ली" की अग्रेजी कविताओ से मन न भरा और मैं अपनी किताबो की आलमारी के पास गया और नरेन्द्र शर्मा के 'प्रवासी के गीत" को किताबो मे से निकाल कर पहली ही कविता पढने लगा

साँझ होत ही न जाने
छा गई कसी उदासी।
क्या किसी की याद आई
ओ विरह व्याकुल प्रवासी?
माधवी की गध से हो अध
अब क्या झपी पलकें?
याद आई क्या प्रिया की,
सुरभि सींची शिथिल अलकें?

इन्ही कविताओ मे कुछ देर उलझा रहा पर इनसे भी जब मनस्तुष्टि न हुई तो कपड पहन कर निर्धारित समय से एक घण्टे पूव ही वत्सला के घर जा पहुँचा। चूकि समय से पहने ही चल पडा था, इसलिये कार मैंने नहीं ली थी सोचा था टहलते टहलते पहुँच जाऊगा।

मि सान्याल के बगले पर पहुँचा, तो ऐसा लगा कि वहा जसे कोई नही है। क्या सब सो गये हैं या 'मटिनी शो" मे गये हैं पर तभी पीछे के एक कमरे से कोकिल स्वर गूज उठा

'मोहब्बत की झूठी कहानी पै रोये
बडी चोट खाई जवानी प रोये,
न सोचा न समझा न देखा न भाला
तेरी आरजू ने हमे मार डाला!"

उफ! गीत मे कितना दर्द था और उससे भी अधिक उस कंठ मे वेदना थी, जो उसे गा रहा था। तो क्या वत्सला जान गई है कि मैंने उसके विषय में निर्णय दिया है! तो घायल हिरनी को सहलाना ही होगा, मरहम-पट्टी करनी ही होगी!

चुपके-चुपके कुछ देर तक और गाना सुनता हू और अपने ही आपको अपराधी-सा समझ कर 'कॉल-बैल' बजा देता हू। कुछ ही पलो मे शिथिल अलकों वाली वह नायिका अपने सुरभि सिंचित कचजाल को लिये हुए मेरे निकट आ जाती है और आश्चर्य से देखती है कि क्या पाच बज गये हैं!

मैं उसके चेहरे के भाव को ताडकर स्पष्टीकरण के रूप मे कहता हू 'नही, वत्सला पांच तो नहीं बजे हैं आज मैं समय से पूर्व यो ही आ गया! समय पर या समय के बाद तो सभी आते हैं पर समय से पूर्व भी तो किसी को आना चाहिये न! यह कह कर ठहाका मार कर हँस पडता हू, जैसे अपने मन की वेदना पर पर्दा डाल रहा होऊ।

मैं देखता हू कि वत्सला भी बड़ा अजीब महसूस कर रही है जैसे वह अभी तयार नही हो पाई थी और मैं दाल भात मे मूसरचंद की तरह आ-टपका होऊ! प्रकट मे उसे कहता हू 'वत्सला, तुम तयार हो सकती हो, मैं तुम्हारी 'स्टडी' मे बैठता हूँ।'

'हा, अभी आ रही हूँ केवल पाच मिनट मे डाक्टर।' मैं रवीन्द्र की गीतांजलि के पन्ने पलटने लगता हू और बंगला गीतो का सस्वर पाठ करना ही चाहता हू कि श्वेत-कपोती की तरह वत्सला नवनीत धवल साडी मे आ जाती है, जैसे बसन्त के एक प्रात अन्तश्चेतना की धारा मे कोई हर्रसिंगार का फूल अनायास ही चू पडा हो। 'कहिये डाक्टर, मुझे अधिक देर तो नहीं हुई!

"देर आयद, दुरुस्त आयद!'

'कहिये डाक्टर क्या आज्ञा है!"

"वत्सला, मैं तुम्हें आज मन की एक अत्यन्त गुप्त बात बतलाने आया हू। मैंने सचमुच तुम्हारे प्रति अपराध किया है उसी के लिये क्षमायाचना करने आया हू।"

"पहेली मत बनिये डाक्टर, इसे बुझाइये भी।"

"हा वही तो कर रहा हू। तो सुनो वत्सला, डोरोथी जो कि मेरे बचपन की साथिन रही है उससे आगामी अप्रल मे मेरा विवाह होने जा रहा है। उसी के लिए मैं तुम्हें निमन्त्रित करने आया हूँ। —सोचता हू निमन्त्रण की बात

मैंने अपराध पर पर्दा डालने के लिये कही थी। अकस्मात् ही बिजली कौंधी और शून्य आकाश मे मेघ छा गये। अश्रुओ की झडी लग गई थी। वत्सला फफक-फफक कर रो रही थी 'वह तो मैं पहले ही "जानती !! थी !!! पर क्या डाक्टर आप पर मेरा कुछ भी अधिकार नहीं है ?

मैं मौन हू और कोई जवाब देते मुझसे नहीं बन रहा जैसे आशकाओ एव दुश्चिन्ताओ का सप मुझे डस गया हो।

मैं अपने रूमाल से उन आसुओ को पोछता हू और उसे धीरज बधाते हुये कहता हू 'वत्सला तुमसे जितना-कुछ मुझे मिला है उसके लिए अत्यन्त आभारी हूँ हू ही क्या आगे भी रहूगा। मैं तो इसी कारण निणय नहीं कर पा रहा था पर मम्मी हैं कि पीछे ही पड गईं और मुझे व्यथा के साथ निणय लेना पडा।

बरसते आसू कुछ थम चले थे और वह अश्रुसिक्त सौंदय मेरी ओर निर्निमेष दृष्टि से निहार रहा था, जसे आसुओ की मूक भाषा मे बहुत-कुछ कह रहा हो शिकायत-शिक्वा की अनन्त-अबूझ कहानी है ! मैं उस सजल दृष्टि से आहत हुआ, नमित-दृष्टि कहता हू वत्सला, क्या तुम मुझे माफ न करोगी ? मैं तुम्हारी भावनाओ के साथ न्याय नहीं कर पाया ।

पर तुम्हें कसे भुला सकूगी मैं ! हिचकियों के बीच वत्सला ने कहा कमिंग इवन्टस कास्ट देयर शडोज बिफोर' (आने वाली घटनायें, कभी-कभी अपनी पूव-सूचनायें दे देती हैं) कुछ देर पहले मैं एक ऐसा ही गीत गा रही थी।'

वत्सला मैंने उसे सुना है और चुपके रह कर सुना है। मैं तुम्हारे मन के दद को एक भेदिये की तरह जान लेना चाहता था।

"सच ! पुरुष बडे भेदिये होते हैं नहीं-नहीं उन्हें अहेरी कहना चाहिये !'

'अब तुम चाहे जो कह सकती हो मैं भेदिया भी हू और अहेरी भी पर क्या इस सगीन अपराध के लिये नारी का क्षमा-कोश रिक्त हो गया है !

इतने मे चाय की ट्रे लेकर गृह-सेविका उपस्थित हो गई थी और वत्सला ने प्यालो में चाय ढाली और उसे विनत-लोचन ही मेरी ओर बढा दिया चाय पी रहा हू पर लगता है जसे खारे आसुओ का कोई आसव पी रहा होऊ ! टोस्ट का एक स्लाइस आसुओ के खारीपन को समाप्त करने के लिये लेता हू पर उसमे भी विरह का हलाहल भरा हुआ है। वत्सला चुप है किन्तु उसकी मूकता ही जैसे वाचाल हो रहा है। कुछ देर तक इसी प्रकार की चुप्पी रहती है और तब मैं विदा लेता हू।

"पर डाक्टर, कनिका कह गई है कि जब तक मैं न लौट आऊ, तब तक डाक्टर साहब को न जाने दिया जाय।"

"वत्सला, आज रुक पाना सभव नहीं है। कनिका से फिर कभी बातें होगी।" तब बाई-बाई कह कर हम दोनो एक-दूसरे से ऐसे अलग हुये, जैसे किसी ने दोनों के हाथ पकड कर बडी क्रूरता के साथ झटक दिया हो!

हाय री नियति! तेरे इस अनन्त कोष मे अश्रुओं के मेघ मडल, स्मृतियो की दामिनी और विवशता के डूबते हुये अरमानो के अतिरिक्त भी क्या-कुछ और नहीं, तब मैं भारी मन और भारी पाव लेकर, ऐसे अपने घर का रास्ता नाप रहा था जैसे कि कोई छोटी सी नौका अनन्त सागर में लहरों से थपेड खाती हुई, किसी अज्ञात दिशा की ओर बढी चली जा रही हो!

मेरे निर्णय के उत्तर में, आज मम्मी का पत्र आया है, जिसमे लिखा है कि विवाह के लिए २५ अप्रैल का दिन निश्चित किया गया है। मुझे ताकीद की गई थी कि मैं छुट्टी के लिए पूर्व-व्यवस्था कर लू। चूकि अब दोनों ही ओर से युद्ध विराम की घोषणा हो गई थी, इसलिए सैनिक अस्पताल मे घायलो की आमद कम हो गई थी। ऐसी स्थिति मे छुट्टी मिलना आसान था। मैंने २० दिन की छुट्टी के लिए आवेदन कर दिया, जिसका अगले सप्ताह ही मुझे अनुकूल रूप मे उत्तर मिल गया।

इसी बीच मुझे डौरोथी का भी पत्र मिला, लिखा था

पूना,
दिनाक २० मार्च

'मेरे आराध्य,

अब हमारी परिणय-वेला में लगभग १ माह शेष है, इस दिन की मैं पिछले ३ वर्ष से आतुरतापूर्वक प्रतीक्षा कर रही हू। इतने दिन, कभी भी अधीरता अनुभव न हुई, पर ज्यो ज्यो वह मिलन-वेला निकट आती जा रही है, त्यो त्यो मन की विकलता भी बढ़ती जा रही है।

अतीत में कैसे सुनहले स्वप्न, मैं अपने हृदय मे सजोती रही हू, इसका पूर्ण विवरण यदि लिपिबद्ध करू, तो एक नये मेघदूत की रचना हो जाये! प्रियतम, वे क्षण कितने स्पृहणीय होंगे, जब मैं आपके निकट होऊगी, सदा सर्वदा के लिए! सच कहती हू, आपका प्रणय पाकर मैं धन्य हो गई हू!

मधुयामिनी के लिए आपने श्रीनगर-यात्रा का जो साप्ताहिक कार्यक्रम बनाया है उसकी आतुरतापूर्वक प्रतीक्षा कर रही हू। 'शिकारे मे बैठे हुए फूलो से घिरे

हुए, उस निजन नदी के मध्य केवल हम दोनो होंगे, तब आकाश का चदा भी हमे ईर्ष्या से निहारेगा । उन पलो को शीघ्र ही पाने के लिए मन तरस रहा है।

प्रिय, आपके प्रणय ने मुझे कवयित्री बना दिया है । और मैंने अनेक भावपूर्ण गीतो को जन्म दिया है। इन्हें सुनकर आप निश्चय ही प्रमुदित होंगे । मेरा मन इधर बड़ा भाव प्रवण हो गया है, नित-नयी अनुभूतियों से मैं प्रतिपल अनुप्राणित रहती हूँ । यह कौन से नवजीवन का विहान है प्रिय ? जसे हर-सिंगार के वृक्ष के नीचे बसन्त मे प्रातःकाल के समय राशि राशि पुष्प अनायास ही चू पड़ते हैं वसे ही जब मैं निद्रा-त्याग करती हूँ तो असख्य भाव पुष्प मन प्राण को महका देते हैं और तब मैं आपके व्यक्तित्व क माधुय मे डूब जाती हूँ ।

कसी सौभाग्यशालिनी हूँ मैं, जो आप-सा रतन धन मैंने पाया है ! इसे सहेज कर रखूगी मैं, दुनियाँ मे बड़ी अजीब हवा बह रही है कहीं मेरे प्राणधन झुलस न जायें ! मन न जाने क्यो आशकाओ से भर भर आता है । क्या जिसे हम प्यार करते हैं उसके प्रति अनिष्ट की आशकाओ से भी ग्रसित होते हैं ? यह कसी अनोखी रीति है प्यार की !

आप तेजपुर के सनिक अस्पताल मे अपने कत्तव्य मे सलग्न हैं, यह मेरे लिए बड गौरव की बात है । न जाने कितनी नववधूटियो के सुहाग को आपने बचाया होगा न जाने कितनी माओ को उनके लाल सौंपे होंगे न जाने कितनी बहिनो को उनके प्यारे भया से मिलाया होगा और न जाने कितने बूढे पिताओ को उनके बुढापे का सम्बल जुटाया होगा ! ऐसे सौभाग्यशाली एव कत्तव्य परायण व्यक्ति की भार्या होना कितने गौरव की बात है ! वही मैं २५ अप्रल को होने जा रही हू उसी शुभ घडी की प्रतीक्षा मे खडी मैं आपको प्रगाढ प्रणय के शत शत चुम्बन अर्पित करती हू । अपनी डौरोथी की इस सौगात को झुठलाइयेगा नही, अलविदा प्रियतम अलविदा !

सदव आपकी ही,
प्रतीक्षामयी डौराथी ।

डौरोथी का पत्र पढकर मन सुरम्य अतीत म विचरण करने लगा । आज से १० १२ वष पूव, जव मैंने उसे हास्पिटल के क्वाटरो मे देखा था तो वह कितनी चपल एव कमनीय लगी थी ! किशोरावस्था का मन अनायास ही उसकी चापल्यमयी चितवन मे फस गया और दो हृदयो के बीच कोमलता का सूत्रपात हुआ । यही प्रणय दिन-दूना, रात चौगुना बढता गया और इग्लड के

प्रवासी जीवन में और फिर तेजपुर के कर्त्तव्यपूर्ण क्षणों मे नित्य नयी मधुरता का सचार करता गया और इसी ने वत्सला के युवावस्थाजन्य प्रेम को पछाड दिया। मैं सोचता हूँ कि बचपन के प्रेम मे इतनी प्रगाढता क्यो होती है ! कितने मुक्त एव ग्रन्थि विहीन होकर हम किशोरावस्था के प्रागरण मे खेला करते थे और कैसे आँख मिचौनी खेलते हुये डौरोथी का चचल सौंदय मेरे मन को कचोट जाता था, यह अतीत की निधि आज वनमान की वास्तविकता बनने जा रही है।

वत्सला के प्रति अपने अनुराग का जब विश्लेषण करता हूँ, तो यही पाता हूँ कि पहल वत्सला की ओर से हुई थी, आरम्भ मे मैं उदासीन था, किन्तु शनै शन मेरा मन भी कोमल अनुभूतियो का निकेतन बनने लगा। आखिर यह क्यों ? मन की इस बहुविध प्रवृत्ति को क्या कोसना ही पर्याप्त होगा, क्या उसके मूल म कोई प्रगाढ अनुभूति काम नही कर रही ? मन की गति शतधा क्यो है, वह विवेक की रज्जुओ मे बधा होने पर भी एक चपल हरिरण के समान चौकडी क्यों भरता है ? इस रहस्य को बूझना चाहता हूँ, पर बूझ नही पाता। विजय बचपन के प्रगाढ प्रणय की ही हुई है, पर विकसित पाटल के समान यौवन पुष्प की पाखुरियों को क्रूरता के चरणा के नीचे कुचल कर क्या मैं सुखी हूँ ! ससार, व्यक्ति से नतिकता और मर्यादा की माग करता है, तो क्या मेरा शेष जीवन इसी नतिकता और मर्यादा की खाना-पूर्ति होगा ? मन मे कुछ इसी प्रकार के विचार उमड घुमड रहे हैं और तब मन को विश्राति देने के निमित्त डौरोथी के पत्र को पुन पुन पढता हूँ, ताकि वत्सला के अश्रुमय आनन को भुला सकू। मैं सोचता हूँ उसके जीवन का क्या होगा ! लगता है जैसे बिना पतवार के कोई नौका तूफान से भरे अगाध समुद्र में छोड दी गई हो, सवथा निस्सबल और निराश्रित ! पर यह ससार किसी को स्वीकारने और किसी को अस्वीकारने का ही तो दूसरा नाम है। इस तक से अपने मन को समझाता हूँ और डौरोथी की प्रणय सुरभि मे फफकते खारे आँसुओ के समुद्र को भुला देने की असफल चेष्टा करता हूँ। मन मे आता है कि अपनी इस मर्मांतक वेदना को डौरोथी के सम्मुख स्पष्टत प्रकट कर दू, और उसी से इसका समाधान भी प्राप्त करु, पर क्या यह उचित होगा ?

प्रणय का आवेग जब अपने सम्पूर्ण यौवन को लेकर लरज रहा हो, तब उलझनो की पगुता क्या उसे सुहायगी ? एसी स्थिति में मेरी गति 'धोबी का कुत्ता घर का न घाट का' सी न हो जायेगी ? जब प्रणय एकाधिकार चाहता है तब उसके सम्मुख समानातर माग कसे रखे जा सकते हैं। तो वत्सला

मुझे तुम्हारे प्रति अन्याय करना ही होगा, क्योंकि तुम मेरी बचपन की साथिन नहीं हो युवावस्था की मीत हो ! किन्तु तुम्हारे आभार को मैं सदव वहन करता रहूंगा। क्या पत्नी और प्रेयसी के उभय व्यक्तित्व कल्पित नहीं किये जा सकते ? मैं जब पत्नीत्व की गरिमा, डौरोथी की माँग में सिन्दूर की तरह भरूंगा, तब क्या वत्सला के जूड़े में गुलाबी आकांक्षाओं से महकता एक गुलाब न लगा पाऊंगा ? पर संसार इसे न तो स्वीकार करने को ही प्रस्तुत है और न इसे किसी प्रकार की मान्यता देता है।

पत्नीत्व एक मर्यादा है तो क्या प्रेयसीत्व एक उन्मुक्त, उच्छृंखलता ही रहेगी ? क्या जीवन और जगत में दोनों के लिये उपयुक्त सामंजस्य नहीं ? बर्नार्डशा कहा करता था कि एक पुरुष को छ स्त्रियों से विवाह करना चाहिये और प्रत्येक स्त्री को छ पुरुषों से। उसकी दृष्टि में शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक कलात्मक एवं मनोवेगात्मक मनस्तृप्ति का यही एक मार्ग है पर आज संसार इस योजना को अव्यवहार्य ठहरा चुका है और यह योजना केवल एक बौद्धिक क्रीडा ही होकर रह गई है ! क्या इसे मन का प्रमाद कहूँ या यह प्रकृति की वास्तविकता है ? खैर जो कुछ भी हो डौरोथी की प्रतिमा को प्रतिष्ठित करने के लिये, वत्सला की प्रतिमा को खण्डित करना ही होगा ! इसके लिये मैं वेदना और मनस्ताप में घुल सकता हूँ किन्तु कोई अन्य व्यावहारिक मार्ग सुलभ नहीं हो सकता। वत्सला के अरमानों, तुम सो जाओ, मैं तुम्हें थपकी नहीं दे सकता ! मैं किसी का हो गया हूँ और अपनी और उसकी पवित्रता के लिये मैं तुम्हारे आंसू भी नहीं पोंछ सकता। लाचार हूं विवश हूँ और डौरोथी के अनुराग को पाने के लिये विकल भी हूँ। यह मन की कैसी विचित्र गति है ! अनेक आडी तिरछी रेखाओं से मन का सूना आंगन बियावान जगल बन गया है और उसमें विवेक का मृग खो गया है ! मृगतृष्णा है पर सूर्य की किरणों का जो प्रतिबिम्ब मरुस्थल में पड़ रहा है उससे मन की प्यास बुझ नहीं सकती नहीं बुझ सकती !

□□

२२

प्रतीक्षा के पल भी कसे मधुर होते है ! समय बीतते अधिक देर नहीं लगती, पर कभी कभी ऐसा भी लगता है कि परिधि अनन्त हो गई है और उससे बाहर न निकला जा सकेगा, पर काल चक्र ऐसा अजीब है कि अनन्त परिधि को भी तोड़ देता है, और तब मनुष्य यह अनुभव करता है ओह, इतना समय बीत गया ! सो ऐसे ही धडधडाते २५ अप्रैल आ पहुचा मेरे परिणय बधन का मागलिक दिवस !

कुछ परम्परागत प्रथाओ को और कुछ आवश्यकतानुसार नई बातो को जोडकर, विवाह की योजना प्रस्तुत की गई। इस अवसर पर बरातियो की सख्या सीमित थी और उनमे सम्बन्धियो से अधिक मित्र थे। हिन्दुस्तान के हर कोने से बधाई के तार मिले। मेरे बिखरे हुये मित्र इस अवसर पर एक होकर पूना आ पहुचे हैं। आपस में हँसी-मजाक चल रहा है। इग्लैंड से सुधीरा सान्याल और प्रकाश गुप्ता भी आये है। दो मास पूर्व ही वे परिणय-बधन म बधे हैं, इसलिये उनके अनुभव मेरे लिये मार्ग-दर्शक हो सकते हैं यो मेरे लिये विवाह कोई बहुत बडे कौतूहल-जसी बात नहीं है, क्योकि जिस वधू रूप मे मेरी जीवन-सगिनी होना है उसे मैं बचपन से ही जानता हूँ।

हा इसमें कोई सदेह नही कि अब हमारा जीवन और सह जीवन, नये सदर्भ मे होगा और अब हमारी बातचीत, भावनाओ का विनिमय एक नये अर्थ से प्रदीप्त होगा।

डाक्टर कलेरा भी हम दोनो को आशीर्वाद देने आई हैं। इस बरात मे यह भी नवीन बात थी कि महिलाओं की सख्या पुरुषों के समकक्ष थी, यद्यपि परम्परागत विवाहों में महिलाओं का प्राय बहिष्कार-सा होता है। २५ अप्रल की सध्या को डा० शिवाकामु और डा० चटर्जी भी आ पहुचे।

आत्मीयजनों से घिरा हुआ मैं अपने आप में बडा प्रसन्न अनुभव कर रहा था। मेरे प्रबल आग्रह के कारण वत्सला भी पूना आई थी यद्यपि आरभ मे उसने यहा आने की अनिच्छा प्रकट की थी। मैं कह नहीं सकता कि मेरा आग्रह उसे खीच लाया अथवा एक विचित्र कौतूहल ही उसके आगमन का प्रमुख कारण था। आत्मीयजन प्रकाश गुप्ता को छेड रहे थे कि उसने न आव देखा, न ताव

और विवाह के बंधन में बंध गया ! मैंने भी प्रकाश गुप्ता को लक्ष्य कर विनोद की दृष्टि से पूछा 'क्यों हज़रत, विवाह से पूर्व चंगे थे या विवाह के बाद ?

'अमा चौपाया होना मुसीबत भी है और खुशनसीबी भी !'

दोनो बात एक साथ क्यो ? मुसीबत और खुशनसीबी एक साथ कैसे चल सकते है !

अरे डाक्टर नीहार यही तो मज़े की बात है। मुसीबत तो इसलिये कि नई जिंदगी नई जिम्मेवारियां लाती है और खुशनसीबी इसलिये कि एक हमदर्द और हमदम मिलता है, जिसकी मुस्कान फूल बरसाती है और जिसके बोल कानों में मिश्री-सी घोलते हैं।'

अच्छा तो यह बात है हम तो परमानेन्ट बचलर (चिरकुमार) हैं। डाक्टर चटर्जी ने बीच मे पडते हुये कहा और नसीहत दी जरा संभल कर रहना डाक्टर कहीं साथ रहने से एक दूसरे की दिलचस्पी न खत्म हो जाय ! 'क्लोज फैमीलियरिटी ब्रीड्स कान्टेम्प्ट। (अतिशय निकटता घृणा की जन्मदात्री होती है।)

"डाक्टर चटर्जी, आप अरमानो से भरे हुये एक दिल के साथ इंसाफ नहीं कर रहे। —बीच म पडते हुये डाक्टर कलरा ने कहा।

हां लेडीज तो अरमानो की ही बातें करेंगी आखिर क्या होते हैं ये अरमान ? इनकी टस्ट टयूब ऐनेलसिस करो।' —संगदिल डाक्टर चटर्जी ने टिप्पणी की।

आप भी क्या बहस म पड गये आइये कुछ काम में हाथ बटाइये।

डा० शिवाकामु ने समयोचित आवाहन किया।

यद्यपि मैं सिविल मरिज के पक्ष मे था, किन्तु मम्मी के आग्रह के कारण परपरागत रीति से ही विवाह-सस्कार सम्पन्न हुआ। हा मेरे निवेदन करने पर, उन्होंने एक विद्वान् पडित से परामश कर पाणिग्रहण सस्कार को अत्यत सक्षिप्त सुरुचिपूर्ण एव वज्ञानिक बना दिया था ! सप्तपदी को नय विचारो के पडित ने एक नया ही रूप दिया उसमें वर और वधू की गरिमा को अपेक्षित महत्व देते हुय, कुछ ऐसी प्रतिज्ञाओ का विधान था जिनके आलोक में दाम्पत्य जीवन की नौका, जीवन-सागर मे अपने अतिम लक्ष्य तक पहुच सकती है !—मैं और डौरोथी जब अग्नि की परिक्रमा कर रहे थे, तो वत्सला हमारी ओर निर्निमेष दृष्टि से देख रही थी, उस दृष्टि में कौतूहल था, ईर्ष्या थी और सद्भावनायें भी पर्याप्त मात्रा म थीं। मुझे लगा जसे वह सोच रही हो कि काश उसे भी अग्नि-परिक्रमा का सौभाग्य प्राप्त हो सकता और वह भी डाक्टर

नीहार के साथ ! किन्तु यह आकांक्षा केवल एक इच्छापूर्ण चिंतन (विशफुल थिंकिंग) ही थी। हो सकता है कि ऐसा कुछ उसने न भी सोचा हो पर मेरी दानों में तो एक सन्देह का तिनका था, जो मुझे ऐसा सोचने के लिये विवश कर रहा था।

पाणिग्रहण-संस्कार के बाद मित्रो और संबंधियो की ओर से उपहार दिये गये। ढेर सारी किताबें, कीमती कमरा, बढ़िया फाउंटेनपेन, कलेन्डर वाली घड़ी ट्रांजिस्टर-सेट और इसी प्रकार की अन्य अनेक वस्तुयें थीं। इन चीजों मे उपयोगिता के साथ-ही-साथ कलात्मक-सौंदर्य को भी महत्त्व दिया गया था। डा० क्लेरा ने एक बहुत ही सुन्दर नेकलेस और रिस्टवाच डोरोथी को भेंट दी। मुझे उन्होंने फाउन्टेन-पेन का एक बढ़िया सेट भेंट किया था। सुधीरा सान्याल और प्रकाश गुप्ता ने भी एक मजेदार भेंट दी और वह थी एक सूटकेस मे परिवार नियोजन के उपकरणों का सेट एवं तत्संबंधी साहित्य!

इसके बाद एक बड़ा भारी प्रीतिभोज हुआ। डा० चटर्जी ने मुख्य-अतिथि की भूमिका अदा की और उनके नेतृत्व मे अनेक वक्ताओं ने मेरे भविष्य की शुभ कामनायें प्रकट की। डायनिंग-टेबल पर अनेक प्रकार की मिठाइयां, नमकीन, फल, सलाद, आइस क्रीम कोल्डड्रिंक्स आदि पेय-पदार्थ करीने से लगे हुये थे और सभी लोग मधुर गप-शप करते हुये खाने मे तल्लीन थे। पर वत्सला जैसे खाने का अभिनय कर रही हो! डोरोथी ने उसकी मानसिक स्थिति को ताड़ लिया और वह एक स्नेहमय अनुरोध के साथ उसे खिलाने पिलाने लगी। उफ, इन दो प्रतिस्पर्धी युवतियों का वह मिलन एवं सामंजस्य कैसा अद्भुत था, कैसा आह्लादक और विस्मयकारी!

अब आगन्तुक महानुभाव और सम्भ्रान्त महिलायें मम्मी को बधाइयां दे रही थीं, तभी नीली अपनी नई भाभी को पकड़ कर एक कमरे में ले गई और कुछ देर बाद मुझे भी बुला ले गई। आज हमारे वैवाहिक जीवन का प्रथम दिवस था। वैवाहिक वेश भूषा मे डोरोथी कुछ नवीन एवं विचित्र सी लग रही थी। नये ढंग के कलात्मक आभूषणों से वह आभूषित थी और एक नव-वधू की व्रीडा, उसके होठों पर थिरक रही थी!

उस कमरे में नीली के निर्देशन मे बड़ी कलात्मक साज सज्जा की गई थी। चटकीले रंगों की आभा महकते हुये फूलों का राशि राशि सौंदर्य और भेंट की हुई वस्तुओं का एक बड़ी मेज पर एकत्रीकरण जैसे हमें एक नये लोक का आभास दे रहा था। आज डोरोथी बिल्कुल बदल गई थी उसका व्यवहार सर्वथा नवीन था। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे इससे पूर्व वह मेरे से न

तो कभी मिली है और न कभी उसने बातचीत के लिये ही मुह खोला है। पत्नीत्व की गरिमा उसके मुख मडल से स्पष्ट आभासित हो रही थी और वह एक लज्जावनता-नायिका के समान सोफासेट के एक किनारे पर बैठी हुई थी तभी नीली ने पूछा भया यह डौरोथी थो" ही है यह तो न जाने कौन है, न बोलती है न चालती है ! हमारी भाभी मिट्टी की माधो क्या बनी है ?" नीली की इस टिप्पणी पर डौरोथी की अवरुद्ध मुस्कान, जसे फूट पडी और उसके चचल नेत्रो से आत्मीयता का अभूतपूर्व आसव छलक पड़ा ! उसका मूक उत्तर काफी वाचाल था । उस मुखचद्र से शरत्-पूर्णिमा की जुन्हाई बरस रही थी। मैं सोच रहा था कि बाह्य औपचारिकतायें भी जीवन को कभी कभी कसा विचित्र रूप दे देती हैं ! दो व्यक्ति जो एक-दूसरे को भली भाति जानते हैं इस समय कितनी दूरी अनुभव कर रहे हैं ! आकाक्षा के गुलाबी डोरे उन आयताकार लोचनो म स्पष्ट ही दीख रहे थे। कसा विचित्र था यह अनुभव, दोपाये से चौपाया होने की अनुभूति, सचमुच बड़ी विचित्र और आह्लादक थी ! तभी डाक्टर क्लेरा ने सूचना दी कि अब सभी व्यक्ति विश्राम के लिये या चाहें तो सास्कृतिक मनोरजन के लिय जा सकते हैं। वह रात्रि धूम धड़ाके से रात भर विद्युत प्रदीपो मे पुलकित होती रही और फुलझडियो की तरह श्वेत प्रकाश के प्रसून बिखराती रही ! चूकि अगले दिन हम सबको उदयपुर के लिये प्रस्थान करना था अत काफी रात गये सब लोग नींद की खुमारी मे डूब गये ! मैं भी प्रत्यक्ष और परोक्ष का विवेक की तुला पर तौलता रहा और न जाने कब कामनाओं की वाटिका म गुलाबी पाखुरियो की सुरभि ले निद्रालीन हो गया। होठ मुस्कराते रहे कमनीय कटाक्ष बिजली की तरह कौंधते रहे और यौवन का आसव साकी के पमाने से छलकता रहा और भर भर के जाम पीये जाते थ गले मे गलबहिया डालकर !

२६ अप्रल के प्रात जब मैं जगा, तो मैंने पाया कि मैं अब एक भिन्न व्यक्ति हूँ। २४ अप्रल तक मैं अपने आपको कुमार समझता था पर २५ अप्रल, न जाने जादू की किस छड़ी से मुझे विवाहित बना गया और अब मैं एक कुमार से भिन्न एक विवाहित व्यक्ति हूँ। मेरे लिये जीवन एक समझौता है और अनुभव करता हूँ कि कौमार्यावस्था की स्वाधीनता जसे अब नये मधुर उत्तरदायित्वो में ढल रही है। अब मैं केवल अपने तई कुछ नहीं सोचता जब भी सोचता हूँ तो डौरोथी के लोचन चेतना में उभर आते हैं, जसे कह रहे हों, मेरी ओर भी तो देखो और मेरे लिये भी कुछ करो ! इस नये आह्वान को मैं नहीं झुठला सकता, उसके प्रबल सम्मोहन मे मैं प्रतिपल बंधता चला जा रहा हूँ !

पूना के प्लेटफार्म पर मैं और डौरोथी खड़े हैं। मम्मी, क्लेरा और शिवाकामु

से बातें कर रही हैं । डा० चटर्जी आज प्रात ही बम्बई चले गये थे और वत्सला तथा नीली ह्वीलर के बुक-स्टाल से कुछ पत्रिकायें और पॉकेट सीरीज के कुछ उपन्यास खरीद लाई हैं। वे हम दोनों के पास आती हैं और नीली पूछती है

"भाभी, उपयास पढोगी ?"

अरे, इन्हें उपयास पढने की फुरसत कहा है !"—व्यग्यपूर्वक वत्सला कहती है।

ऐसी क्या बात है ! लाओ, मुझे भी एक उपन्यास दे दो।' डौरोथी झेंप मिटाने की दृष्टि से कहती है।

आप उपन्यास पढेंगी या जियेंगी ?"—वत्सला आकस्मिक रूप से एक नुकीला प्रश्न करती है। इसमे व्यग्य है, उपालभ है या ईर्ष्या की मिश्रित अभिव्यक्ति है! मन मे विश्लेषण करता हूँ। तभी सुनता हूँ ' उपन्यास पढू गी भी और जिऊगी भी।' – डौरोथी सहज मे हार मानने वाली न थी।

'यह तो भविष्य ही बतलायेगा कि इन दोनो घोडो की सवारी करने मे आप कहा तक कामयाब होती हैं! सुधीरा ने हमारे दाम्पत्य जीवन के भविष्य म झाकते हुये, जसे एक चेतावनी दी !

"यो यदि आप कामयाब हुईं, तो मैं पहली नारी होऊगी, जो आपका अभिनदन करेगी !" – इस बार वत्सला ने अपने मीठे व्यग्य पर माधुय की भी वर्षा कर दी थी।

सोचता हूँ वत्सला के इन उद्गारो मे क्या है ? क्या यह एक नारी हृदय के सहज उद्गार हैं, या उनमें ईर्ष्या की पुट कितने सहज रूप मे दे दी गई है ! उसके व्यग्य मे मिठास भी कम न था। साथ ही वह हमारे दाम्पत्य जीवन का परीक्षक भी होने जा रही थी। यह नया दायित्व उसने स्वय ही क्या ओढ लिया ? क्या इसमें भी कोई रहस्य है ? मैं इसी उलझन मे फसा था कि दूसरे प्लेटफाम पर कलकत्ता जाने वाली गाडी आ गई थी और डाक्टर वत्सला हम लोगों से विदा ले रही थी। विदा के समय वह बडी भाव-प्रवण हो आई थी ! उसने डौरोथी का अलग ले जाकर एक बहुत ही कीमती बगलोरी साडी भेंट की थी और एक अद्भुत प्रभा से दीप्त, कलात्मक नगीने से युक्त अगूठी भी प्रदान की थी। आग्रह किया था कि मिलन की प्रथम रात्रि का डौरोथी वही साडी पहने और वही अगूठी, अपनी कनिष्ठिका में धारण करे ! जाते-जाते उसने मुझे नमस्कार किया और अपनी अन्तर्भेदी दृष्टि से कुछ पढना भी चाहा और जाने से पूर्व उसकी शुभकामनायें इस रूप म मुखरित हुइ विश यू द बस्ट ऑफ लक

स्वीट एंड ड्राऊज़ी ड्रीम्स, मे गॉड शावर ग्रान यू।" (सुन्दर, अति सुन्दर भविष्य की कामना करती हूँ प्रभु से यही प्रार्थना है कि वह मधु-मधुरिम एवं उनींदे स्वप्न, तुम दोनों पर बरसाये!)

मैं और डौरोथी, दोनों वत्सला को 'सी-आफ' करना चाहते थे पर बुरा हो रेलवे टाइम टेबल बनाने वाले का, जिसने दोनों गाड़ियों के छूटने में केवल तीन मिनट का अन्तर रखा था। ज़ाहिर था कि ऐसी स्थिति में हम उसे छोड़ने नहीं जा सकते थे। क्या वत्सला से नियति भी अप्रसन्न थी जो उसने ऐसा विधान किया।

सोचता हूँ, वत्सला कितनी कल्पनाशील है उसने अपनी कल्पना को बगलौरी साड़ी में लपेट कर कहां तक पहुँचा दिया है। मुझे लगा कि विक्षुब्ध मन वाले वे आहत नयन मधुयामिनी में भी हमारा पीछा न छोड़ेंगे। वत्सला की इस भेंट में कैसी विचित्र एवं दारुण यन्त्रणा थी इसे तो कोई अनुभूतिशील प्राणी ही समझ सकता है। कुछ पलों के लिये मन का स्वाद कटु तिक्त हो गया, पर दूसरे ही क्षण नवविवाह की अरुणिम कल्पना ने एक ऐसा आवरण डाला, कि वह कसकता हुआ कांटा न जाने कहां विलीन हो गया। यद्यपि उसकी चुभन मेरे मन को यदा-कदा भरमा रही थी पर फिर भी वर्तमान का आह्लाद पूर्ण आलिंगन अपने आप में कुछ ऐसा रहस्य छुपाये हुये था कि मैं उसकी माधुरी के रस में उसी तरह डूबता गया जैसे कि बसंत की मादकता में मधुकर के मन प्राण डूब जाते हैं।

हमारी गाड़ी चल पड़ी थी और उस कम्पार्टमेंट में हमारे आत्मीयजनों के अतिरिक्त और कोई न था। सारे रास्ते गप-शप छेड़-छाड़ और मीठी विनोदोक्तियां चलती रहीं। बातों ही बातों में बम्बई का चहल-पहल से भरा हुआ स्टेशन आ गया और तब मैं नीली और डौरोथी के साथ चाय के लिये स्टेशन के ही निरामिष उपाहार गृह में गया। मैं देख रहा था कि नीली बड़ी शरारती होती जा रही है और हम दोनों के संबंधों में एक सेतु-जैसा कार्य कर रही है। नदी के दो किनारों को मिलाने वाले पुल के समान वह कभी कुछ कहती और कभी कुछ। उसकी मधुर वार्ता से डौरोथी को ऐसा अनुभव हो रहा था कि जैसे वह नई जगह या नये व्यक्तियों में नहीं जा रही है बल्कि समय के एक दीर्घ व्यवधान के बाद अपने ही घर लौट रही है। दो सखियों का यह पुनर्मिलन नये संबंधों के संदर्भ में कितना आह्लादक और विस्मय-विमुग्धकारी था यह बता पाना मेरे बस की बात नहीं है। चाय के आने पर डौरोथी उसे प्याला में ढालना चाहती थी, पर नीली ने उसे ऐसा न करने दिया। उसने आग्रहपूर्वक

चाय की केतली को डोरोथी से छीन लिया और स्वयं बड़े मनोयोग से चाय प्यालों में डालने लगी। मैं बिस्कुट खा ही रहा था कि नीली ने हम दोनों के आगे एक ही साथ दो प्याले बढ़ा दिये, बहिन, भाभी और भैया का सत्कार जो कर रही थी। कहने लगी "आज मैं बेहद खुश हूँ, इस दिन के इंतजार को, मैं पिछले कई सालों से अपने मन में सजो रही थी। बड़े दिनों में यह मौका हाथ आया है! अब इसकी पूरी फीस वसूल करूँगी।"—एक मधुर कटाक्ष के साथ नीली ने टोस्ट की प्लेट डोरोथी के आगे कर दी और डोरोथी को भी न जाने क्या सूझा कि उसने एक स्लाईस उठाकर मेरे मुंह की ओर बढ़ा दी।

"इसे ही 'अ. प्रॉपर चमल' कहते हैं।"—नीली ने ठहाका मार कर कहा।

चाय पीकर जब हम लौटे, तो हमारा सामान नई गाड़ी में लग गया था और मम्मी गाड़ी के डिब्बे में बैठी हुई एक पत्रिका के पन्ने उलट-पुलट रही थी। हमें आते देखकर उन्होंने उपालभ के स्वर में कहा "बड़ी देर लगाई नीली, भैया भाभी के आगे, तुझे मां की भी कुछ सुध न रही! इंतजार करते-करते मेरी आँखें दुखने लगी हैं।"

'मम्मी हम कहीं खो तो नही गये थे, पर हाँ कुछ देर जरूर हो गई है। हमारी अच्छी मम्मी क्या उसके लिये माफ न करेंगी!"—नीली ने ममत्व के कवच को सहलाते हुये जैसे कहा। तब उनका स्नेह बरबस ही, हम सब पर ढरक गया और वे अपनी नव वधू से पूछने लगी "कहीं नीली ने तो तुम्हें परेशान नहीं किया है?"

इससे पूर्व कि डोरोथी कुछ उत्तर दे, नीली बीच में ही बरस पड़ी "बड़े इंतजार के बाद यह दिन आया है मम्मी, इसे यों न जाने दूंगी।"

२८ अप्रल को प्रातःकालीन किरणों ने मुझे एक नये रूप में उदयपुर के स्टेशन पर पाया। अब मेरी आत्मीयता की परिधि बढ़ गई थी और उसमें मम्मी, बहिन के अतिरिक्त, पत्नी के लिये भी स्थान हो गया था। इस नई स्थिति में मेरा स्वागत करने अनेक आत्मीय जन एवं मित्र स्टेशन पर उपस्थित थे। गाड़ी से उतरते ही मुझे और डोरोथी को फूल मालाओं के भीने-भीने स्वागत ने एक विचित्र लोक में ही पहुंचा दिया। उल्लास से चमत्कृत चेहरे थे, कौतूहल से परिपूर्ण नयन थे और जिज्ञासा से परिपूर्ण संवेदनशील मन भी स्वागत में पलक-पावड़े बिछा रहे थे। लगता था, जैसे मैं पलट गया हूँ और सब ओर मेरे लिये अभिनंदन के द्वार खुल गये हैं।

घर पर पहुंचे, तो आने जाने वालों का तांता लग गया था। सब उत्सुकता से

नववधू को देखन मा रहे थ और मीठी मुस्कान एव सजीले सौन्य को देख कर मुह भी मीठा करत जा रहे थ। बहुत स लोग यह भी भूल गय थ कि यह नववधू तीन वष पूव तक यही रही है और उसका मत्हड़ यौवन शशव को पार कर, यहीं सबसे पहले हिरनी की तरह चौकड़ी भरना सीखा था ! इस समय तो नववधू, लज्जा एव छवि में बधना में बधा, अपने अतीत को सवथा अस्वीकार कर रही थी।

सन्ध्या होते ही गाने-बजाने का कायक्रम चल पड़ा। सब अपने हृदय के उल्लास को गीतो की सीपी म सहज-सहेज कर रख रहे थे। ढोलक बजती रही चपल चरण नाचते रहे और कामना से भरे हुये मन अनचीन्हें उद्गारों म बरसते रहे, कि रात्रि के ग्यारह बज गये ! आज छवि के बधन दो प्राणों को अनुराग के तट पर ले आये हैं ! जीवन के ये क्षण भी कितने मादक एव उल्लास मे चपल होते हैं ! नीली को अचानक क्या सूझा कि वह शरारत से भरी हुई अपनी नई भाभी को दूसरी मजिल के मेरे कमरे में छोड़ गई। उसने बड़ी साध और स्नेह से कमरे को सुसज्जित किया था आभामय विद्युत-प्रदीप वहां एक नई ज्योत्स्ना बिखेर रहे थ। एक नय सोफासट के सामने एक गोलाकार मेज पर ताज फूलो का गुलदस्ता अपनी भीनी भीनी महक से बसत का आभास द रहा था। एक सुन्दर गदीले पलग पर झालरदार मसहरी लटक रही थी। उसके चारो ओर फूलो के गजरे भी अपनी शोभा को लुटा रहे थे। पलग पर ताजे गुलाब क फूलो की पखुडिया बिखरी हुई थीं, जसे कामनाओं के वन म बसत की देवी का आह्वान हो रहा हो !

मैं सोफे पर बठा हुआ एक उपन्यास पढ़ रहा था। उसी के पास्व मे रखा हुआ दीपाधार एक मधुर आलोक विकीर्ण कर रहा था। नीली झूठ-मूठ ही मेरा नाम लेकर डौरोथी को बुला लाई थी। मेरे सकेत करने पर वह सोफासट के एक किनारे पर बठ गई। नीली को भी मैंने बठने का सकेत किया पर वह पान लने क बहाने नीचे चली गई और थोड़ी ही देर मे दूध के दो गिलास और एक चादी की थाली में लवग से बिंधे हुये कुछ ताँबूल लकर पुन आ उपस्थित हुई। उसने एक एक गिलास हम दोनो की ओर बढ़ा दिया। मैंने लक्ष्य किया कि दूध म मलाई, पिस्त बादाम और केसर के कुछ अश पर्याप्त मात्रा में तर रह थे। वह सुवासित एव स्वादिष्ट दुग्ध नीली के स्नेह का महज प्रतीक था। डौरोथी ने एक खाली गिलास में अपने गिलास से कुछ दूध डाला और कुछ मेरे में से, तब उसने उस तीसरे गिलास को नीली की ओर बढ़ा दिया और कहने लगी तुम्हें भी हम लोगों के साथ इसे पीना

होगा।"

"मैं तो पहले ही पी आई हूँ भाभी। मेरे ही द्वारा "एप्रुव" होकर यह यहाँ तक आया है।"—नीली ने दृढ़ता के साथ कहा।

"पर इस दुग्धपान मे तुम्हें हमारे साथ भी शरीक होना होगा।" यह कहते हुये डौरोथी ने आग्रहपूर्वक उस गिलास को नीली के होठो से लगा दिया।

बड़े जायके के साथ हम तीनो ने उस सुवासित दूध का पान किया और तब नीली ने लवग से बिंधे हुये पानो की थाली को हाथ मे लेकर, अपने ही हाथ से डौरोथी और मुझे पान खिलाया। डौरोथी ने एक पान उसके भी मुह मे रख दिया और बोली "जैसे इस पान मे यह लोग लगी है वैसे ही हमारे जीवन मे ननन्दरानी का स्नेह बिंधा हुआ है!"—इस समयोचित टिप्पणी पर हम सब हस पडे। तभी नीली उठी और काम का बहाना करती हुई चचल चरणों से फटाफट नीचे उतर गई। अब उस कमरे मे केवल दो प्राणी थे, आशाओं से भरे हुये एव मदमाते सपनो के सागर मे तरते हुये! मुझे याद आया कि वत्सला ने जो बगलौरी साड़ी भेंट मे दी थी, उसी को आज की रात डौरोथी को पहनना है। मेरे आग्रह करने पर वह अटैच्ड-रूम मे गई और उसी बगलौरी साडी को पहन आई, तब मैंने चमकील नगीने की अगूठी को उसकी कचनार-सी पतली उगलियो मे पिरो दिया!

आज डौरोथी कितनी नवीन लग रही थी! ऐसा प्रतीत हो रहा था कि कोई चद्र-कन्या ज्योत्स्ना के मडप के नीचे दुग्ध धवल प्रकाश म सद्य स्नाता के रूप में मेरे सम्मुख उपस्थित हुई हो! इस रूप की माधुरी का पान कर ही रहा था कि सहसा उस बगलौरी साडी के प्रत्येक अश पर मुझे दो तीखे आहत-नयन तरते हुये प्रतीत हुए! क्या यही वत्सला का ईप्सित था? क्या इसी भाव से उसने यह भेंट दी थी या मधुयामिनी के एकात-क्रोड मे वह भी किसी रूप में उपस्थित हुआ चाहती थी? मुझे इस प्रकार बहकते हुये देखकर डौरोथी स्तभित हो गई और सहसा पूछ बठी क्या बात है प्रियतम? तबियत तो ठीक है न!" और यह कहते हुये उसने मुझे गुलाब की पाखुडियो के उस कमनीय कातार में सुला दिया और कुछ देर तक मेरा माथा दबाने के बाद अपनी कोमल उगलियो से हल्के-हल्के मेरे केशो को सहलाने लगी। मुझे लग रहा था जसे कोई निरुपम सौंदयमयी अप्सरा अपने व्यक्तित्व के माधुय से मेरी सपूर्ण शिरोवदना को अस्तित्वहीन करने पर तुली हुई हो!

अब मरा सिर काफी हल्का हो गया था और इन तीखे व्यग्यपूर्ण नयनो का उन्माद डौरोथी के मधु-मधुरिम रूप के नगार पर जसे पराजित हो गया हो

और तब उन उल्लासपूर्ण पलों में दो अनुराग से दीप्त होठों का मिलन हुआ और हम एक प्रगाढ आलिंगन में बँध गये।

उस मधुयामिनी का प्रत्येक पल कितना सजीव था कितना चटुल एव स्पर्द्धामय! निद्रा हम से बहुत दूर जा चुकी थी और मधुजागरण के तट पर हम दोनो अपनी स्नेहमयी भावनाओं का विनिमय कर रहे थे। अतीत का इतिहास एक उमडती हुई गगा के रूप म अपनी लोल लहरियों के साथ, हमारे वतमान जीवन को अभिषिक्त कर रहा था। मुझे याद आया डौरोथी का जन्म दिन क्लेरा का वात्सल्यमय स्नेह डौरोथी के पूना जान पर एक भयकर विछोह इगलड जाने से पूव बबई का मिलन अनेकानक पत्रों का आदान-प्रदान इगलड से प्रत्यागमन और पुर्नमिलन तेजपुर के सनिक-अस्पताल का व्यस्त जीवन, प्रणय की आडी तिरछी रेखाओं की मीठी यादें और इन सबके उपसहार के रूप मे आज का यह मधुमिलन! मुझे लगा कि रूप के सागर का सतरण करते हुये, मेरी बाहें थक गई हैं और मैं डौरोथी की स्नेहपूर्ण गोद मे अपने सिर को रख कर उसकी ओर एकटक निहारता हूँ। पूर्णिमा का चाद आज मेरे पलग की मसहरी मे आ उलझा था और उसकी शत-सहस्र किरणें मेरी कामनाओं को उद्दीप्त कर रही थी। उस रात ऐसा लगा कि रात्रि आठ घंटे की न होकर आठ मिनट मे ही बीत गई हो! मधुयामिनी के लिये अनत-अखड रात्रि की आवश्यकता है तभी दो प्राण एक-दूसरे को बूझ सकते हैं पर स्वप्नलोक की छलनायें प्रभात की पहली किरण के साथ ही विलीन होने लगीं और उनींदे रतनारे लोचन उन किरणों के आगमन से पूव ही जाग्रत हो गये और दिवस के उत्तरदायित्वो म खो गय!

□□

२३

वत्सला का हार्दिक बधाई का पत्र आया है। उसने हमारे वैवाहिक जीवन को लेकर शतश मंगल-कामनायें व्यक्त की हैं और पूछा है कि उसकी भेंट का सदुपयोग हुआ या नहीं ! इस नये जीवन की आकांक्षाओं एवं रंगीनियों मे वह एक किनारे होकर नहीं बैठ गई है बल्कि हमारे दाम्पत्य जीवन का पीछा कर रही है कल्पना रूप मे, भावरूप में। उसने जिज्ञासा प्रकट की है कि वैवाहिक जीवन के प्रथम अनुभव कैसे-कुछ लगे !

अब आप ही बतायें कि वत्सला दाम्पत्य-जीवन की प्रच्छन्नता के संबंध मे इतनी प्रश्नमयी क्यों है ! मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि उसे क्या उत्तर दूं। यदि मौन रहता हूँ तो उसकी जिज्ञासाओं के अपमान का बोझ सहना होगा, यदि उत्तर देता हूँ, तो एक औपचारिकतामात्र का ही निर्वाह हो सकेगा। ये सब बातें बताने की थोड़ ही होती हैं, ये तो अनुभव की बातें हैं, जो प्राणों की सरस अनुभूति से अनुप्राणित है ! क्या इन्हें अभिव्यक्ति के माध्यम से मुखर किया जा सकता है ? मुझे लगा कि संसार की सर्वोच्च सुखानुभूति अव्यक्त ही रह गई, ठीक उसी प्रकार जैसे कि संसार का महान साहित्य अलिखित ही रहा है ! जो लेखन की सीमा मे आ गया, उसको लेकर हम मोल-तोल करते हैं, पर जो अप्रकट रहा है, और कवि के मानस को भिगोता रहा है, उसकी सरसता का, प्राणवत्ता का मूल्य क्या कोई चुका पाया है ! गहरे विचार-मंथन के बाद मैंने उसे यही लिखा कि अब आ ही रहा हूँ, लिखकर क्या-क्या बताऊं ! सब प्रत्यक्ष ही सुन लेना।

लिखने को तो लिख गया, पर जिज्ञासायें कौतूहल का रूप धारण कर मेरे प्राणों को सर्प-कुंडली की तरह घेरे रहीं, और इससे कोई निस्तार नहीं दीखा ! ऐसे ही पलों में अनुरागमयी डौरोथी ने मुझे पकड़ लिया। मुझे इस प्रकार विचार प्रवण देखकर वह हठात् ही बोल पड़ी "आप ऐसे खोये-खोये क्यों रहते हैं ? *क्या अपने मन की बात न बतायेंगे ?"*

तब मैंने अपने प्राणों की अन्तर्व्यथा को स्पष्ट किया और कुछ हल्कापन महसूस करने लगा। मेरे स्पष्टीकरण पर डौरोथी ने इतना ही कहा "बड़े वैसे हैं आप, न जाने क्या-क्या सोचते रहते हैं!'

अपने मानस-मथन पर डौरोथी से जो प्रमाणपत्र मिला, उसे मैंने सहेजकर रख लिया है और सच मानिये, उससे हल्कापन महसूस करने म बडी म** मिलती है । सच है, पुरुष की उलझन का नारी के पास एक सहज हल है सभवत वह पुरुष से अधिक व्यावहारिक है इसीलिये तो मन की दुर्भेद्य प्रहेलिकाओं का, कभी-कभी बडा सरल हल निकाल लती है। ऐसे क्षणो म किसी की अनुरागमयी चचल उँगलिया सिर के बालो म इस खूबी से घूमती हैं कि मन का सारा बोझ चुक जाता है और तब समपण कितना सुखदायी होता है !

हँसी-खुशी, आनद-उल्लास चहल पहल और गपशप म बीस दिनो की छुट्टी ऐसे बीती, जसे उसका कोई अस्तित्व ही न हो, वह नितात नगण्य और निव्याज हो। आखिर तजपुर जाने का समय आ गया और डौरोथी को बुलाने भी उसका छोटा भाई लौरस और साथ में सिस्टर फ्रक्लिन के बवई वाल कजन आ पहुँचे। ऐसा लग रहा था कि सयोग के साथ-साथ, वियोग भी लगा रहता है । क्या वियोग इस लिये आता है कि हम सयोग के महत्त्व का ठीक प्रकार से आक सकें ?

कल प्रात मुझे तेजपुर के लिय प्रस्थान करना है और डौरोथी को स्नेहमयी जननी की गोद के आवाहन-रूप म पूना जाना है यही सोचकर डाक्टर क्लेरा न हम सबको आज डिनर पर आमन्त्रित किया है।

रात्रि के आठ बजे जब हम सब डाक्टर क्लेरा के बगले म प्रवेश कर रहे थे तो *सहसा रगीन विद्युत प्रदीपो की शत शत दीपावलियो ने हमारा स्वागत किया।* इसी जगमगाहट के बीच, एक प्रफुल्ल वात्सल्य-स्नेह से द्रवित एव उच्छल व्यक्तित्व हमारे भावनापूण स्वागत मे गहरी दिलचस्पी ले रहा था।

हम डाक्टर क्लेरा के ड्राइग-रूम म बठे हैं। पास की मेज पर भेंट की वस्तुयें सजी हुई हैं जिन्हें डाक्टर क्लेरा डिनर के बाद हम एक स्नेहपूण सौगात के रूप म देंगी। कई तरह की रग बिरगी साडिया, ब्लाउज-पीस, स्कट-ब्लाउज, लेडीज पस तथा मेरे लिये टरीलीन के दो सूट बडे करीने से उस मेज पर लगे थे। एक बहुत ही सुन्दर, कलात्मक टेबल लम्प भी इन सब चीजो पर अपनी मधुर मुस्कान बिखेर रहा था।

'कहो डौरोथी तुम्हें उदयपुर लौटना कैसा-कुछ लग रहा है ?' डाक्टर क्लेरा ने सहज भाव से पूछा।

आटी यह भी क्या कोई पूछने की बात है ? जहा आप जसे लोग हो, वहा मुझे क्या कमी महसूस हो सकती है ! डौरोथी ने सयत रूप में उत्तर दिया।

"डाक्टर, यह तो अपने आपको बडी खुशनसीब समझ रही है ! आप जसी आटी मिली इसे, मुझ जैसा खाविंद मिला और नीली जसी शरारती ननद, वात्सल्य की अगाध गभीरता जैसी साम जिसे मिली हो, उसे भला और क्या पाना शेष रह गया है !'–मैंने भी हल्की शरारत के साथ, यह टिप्पणी डौरोथी के उत्तर ही के साथ जड दी।

"बड शरीर हो रहे हो नीहार, बचपन की साथिन को पाकर तुम्हारी खुशी का कोई ठिकाना नहो है !" –डाक्टर क्लेरा ने मीठी चुटकी लेते हुये कहा।

"आटी, मैं तो इन्ह मजूर ही कहा कर रहा था, यह तो आप थी, जिन्होंने इस रिश्ते को पक्का किया।" मैंने चपल व्यग्य की दृष्टि से डौरोथी को छेड़ने के भाव से कहा।

'हा, हा आटी, ये तो फसला ही नही कर पा रहे थे, न जाने कितनी नाजनीनें इन्ह घेरे हुये थीं। इनकी तो सिट्टी पिट्टी ही गुम हो गई थी। यह तो दरअसल आप थी, जिनकी जादुई छडी ने मेरी तकदीर जगा दी।"—डौरोथी ने समयोचित टिप्पणी की।

"अरे देखो नीहार, बातें फिर बताना, चलो डायनिंग रूप मे चलकर डिनर ले लिया जाय, नौ बजा चाहते हैं।"—डाक्टर क्लेरा ने डिनर के लिये आमन्त्रित करते हुये कहा।

इस पर हम सब डायनिंग-रूम की ओर बढ चले, पहुचे तो नाक खुशबू से भर गई और पेट के चूहे, उस सब पर हाथ साफ करने के लिये, आमादा हो गये। डाक्टर क्लेरा ने भारतीय भोजन के साथ साथ, कुछ जमन डिसेज भी तयार की थी। उन्होंने मेरी, डौरोथी और अपनी रुचि का बडा ही अद्भुत सामजस्य किया था। मुझे तो इस सब मे यही प्रतीत हुआ, जसे डाक्टर क्लेरा का सुप्त मातृत्व जाग गया हो, और वह अपनी दत्तक सतानो के लिये खाद्य-वस्तुओ के विविध व्यजनो मे अपना स्नेह ढरका रही हो !

उस रात खूब छक कर खाया। रात के दस बजे जब हम डाक्टर क्लेरा की सौगात के साथ लौट रहे थे, तो यही विचार रह-रहकर मन को कचोट रहा था कि परिस्थितियो की साजिश के कारण बेचारी क्लेरा मातृत्व के गौरव से वचित रह गई हैं और उन्होने अपने मातृत्व की अभिव्यक्ति कितने उदात्त धरातल पर की है ! उस स्नेहमयी जननी के मातृत्व को शत शत प्रणाम करता हू और उन्ही के स्नेह मे डूबता-उतराता, डौरोथी के साथ अपने माग को तय करता हू और सोचता हू कि ऐसे आयाजनो से कभी-कभी मन के ऐस पहलुओ

को भी अभिव्यक्ति मिलती है जो सामान्य परिस्थिति मे अछूते ही रह जाते हैं। यदि ऐसा न होता तो डोरोथी और मुझे मीठे उलाहने सुनने का सौभाग्य कस होता ! नियति, तुम्हारी व्यवस्था निराली है ! कही की इट, कही का रोड़ा, भानुमती ने कुनबा जोड़ा ! कहाँ जमनी, कहा भारत, कहा महाराजा विक्रमसिह और कहा वलेरा और उनकी दत्तक सतान के रूप म हम दोनो ! सचमुच, विधि का विधान अद्भुत और अनिवच है। इसकी थाह पाना मुश्किल ही नहीं बल्कि असभव है।

□□

यह जीवन संयोग-वियोग के ताने बानों से बना हुआ विचित्र पट है ! अभी मधुर मिलन की आकांक्षाएँ पूर्ण भी न हो पाई थी कि विदाई की घड़िया आ गई। मुझे तेजपुर के लिए प्रस्थान करना था और डोरोथी को लॉरेंस और अंकिल के साथ पूना जाना था। अभी कामनाओं की मेंहदी भी उन कमनीय करों से नहीं धुल पाई थी कि जुदाई के आंसू ढुलक पड़े !

उदयपुर का स्टेशन आज बड़ा गमगीन नजर आ रहा था। दो प्रेमी युगल, भिन्न दिशाओं में यात्रा करने को प्रस्तुत थे। आत्मीयजनों से घिरा हुआ मैं, दिल पर पत्थर रखे, डोरोथी की मासूम निगाहों को उड़ती नजरों से देख लेता था और गम के आँसू मन में ही पीकर, ऊपर से मुस्कराने का अभिनय कर ही रहा था कि नीली हम दोनों को स्टेशन के वेटिंग रूम में ले गई। अभी गाड़ी आने में देर थी। वह चाय के बहाने हमें लिवा लाई थी, पर दरअसल, वह बिछुड़ने से पहले हम दोनों की मुलाकात करवाना चाहती थी। कितनी अच्छी और समझदार है मेरी बहिन !

फर्स्ट क्लास के वेटिंग रूम में हम केवल तीन ही प्राणी थे। चाय आ गई, हम धीरे-धीरे 'सिप' करने लगे और साथ साथ कुछ सोचते भी जाते थे। तभी नीली को क्या सूझी कि वह व्हीलर के बुकस्टाल पर कुछ पत्रिकाएँ लेने चली गई।

अब स्वत ही किसी अज्ञात प्रेरणा से अभिभूत हाथ बढ़े और मिल गये। नयन नयन न रहे थे वे गिरा और कर्ण का भी कर्म सम्पन्न कर रहे थे ! वे सजल लोचन उठे उनमें एक आवाहन था, मैंने डोरोथी को भुजपाश में बांध लिया और चुपके से एक चुम्बन उसके अनुराग-दीप्त कपोलों पर जड़ दिया ! उस चुम्बन में कैसा सम्मोहन था, कैसे बिछलते हुए अरमान थे, यह बता पाना आज कठिन है ! बिछुड़ते प्राणों ने कुछ मौन संकल्प लिए, प्रतिदिन पत्र लिखने की बात तय रही और स्वप्न लोक में मिलते रहने के वायदे किये गये।

नीली ढेर-सारी पत्रिकाएँ लेकर लौट आई थी कल्पना, कादम्बिनी, नवनीत मनोरमा, ज्ञानोदय, फेमिनिना, ईव्ज मंथली, पिक्चर-पोस्ट, इम्प्रिंट आदि न

जाने क्या-क्या ले आई थी ! उन्हें मेज पर बिखेरते हुए बाली भाभी, छाट लो अपनी पसन्द की पत्रिकाए, भया को बची खुची दे देना ।

"ओ हो अभी से पक्षपात होने लगा, जब यह अपनी ननद के कान ऐंठेगी, तब मालूम होगा ।"

"नहीं भया, तुम झूठ बोलते हो। मेरी अच्छी भाभी, ऐसा कभी नही कर सकतीं !"—उसने एक दृढ विश्वास के साथ अपना सकल्प दुहराया।

म कुछ जवाब देने की सोच ही रहा था कि इतने म घरघिराहट करती हुई गाडी प्लेटफाम पर आ लगी। हम सब स्वत ही उठ खड हुए और अज्ञात रूप म ही चरण अपने माग पर बढ चले। बम्बई जाने वाले कम्पाटमेंट में डोरोथी, सारन्स और उसके अक्लि गये। नीली, गाडी के 'विसल देने तक अपनी भाभी स बातें मठारती रही और मैं डिब्बे की खिडकी से लगा उनके अक्लि से औपचारिकता की बातें करता रहा। तभी फक फक्क छक्क छक करके गाडी चल पडी। रूमाल हिलते रहे, आसू ढरकते रहे और गाडी भी मद गति से सरपट गति पर आ गई !

मेरी ट्रेन छूटने मे अभी १ घटे की देर थी। इसलिए गम को गलत करने के लिए मैं प्लेटफाम पर चहलकदमी करने लगा। नीली अपनी किसी परिचिता से उलझ गई थी चलो यह भी अच्छा हुआ, अन्यथा बेकार की बातो से वह मेरा दिमाग खराब करती। आज एक घटा काटना बडा भारी लग रहा था एक एक मिनट ऐस रुक रुककर बढ रहा था, जसे तपेदिक का मरीज हो। सकिन्ड की सुइया तो जमी हुई-सी प्रतीत हो रही थी। और घटे की सुइया तो मूक समाधिवत् निश्चल और जड हो गई थी। ऐसा लग रहा था कि समय की राह रुक गई है क्योकि उसके सीने पर ढेर सारी गम की बरफ जो पडी थी !

राम राम करके एक घटा बीता और तब दिल्ली एक्सप्रेस के दशन हुए। नीली मम्मी, डा० क्लेरा आदि सब मेरे कम्पाटमट को घेर कर खड थे अब इनसे भी बिछुडना होगा और फकत अकेले को तेजपुर की लम्बी, थकान से भरी हुई यात्रा करनी होगी।

डाक्टर जी छाटा नहीं करते। हम सब फिर मिलेंगे कभी न बिछुडन के लिए। तेजपुर के अस्पताल म भी तो तुम्हारा इतजार हो रहा है तुम्हारे मरीज तुम्हारा काम—सब बचनी से तुम्हारी राह देख रहे हैं ! वतन की राह पर तुम्हें चलना है !—डा० क्लेरा ने जसे उद्बोधन किया।

'हा, नीहार ! नेफा के मोर्चे पर जो घायल हुए हैं, वे भी तो तुम्हारे ही भाई और दोस्त हैं। उनके आवाहन को टाला नहीं जा सकता !' मम्मी ने डा० क्लेरा का ही समर्थन किया।

'भैया, मैं और भाभी जल्द ही तुम्हारे पास आयेंगे। घबराना नहीं। एक बहिन डाक्टर भाई का हौसला बढ़ा रही थी।

तभी गाड़ी ने सीटी दी और मैं पत्नीत्व, मातृत्व एवं भगिनीत्व की सम्मिलित भावनाओं में डूबा हुआ, मम्मी और डा० क्लेरा के चरण-स्पर्श करता हूं और आशीवचन पाता हूं। नीली को चिट्ठी लिखने की ताकीद करता हूं और छेड़ता हूं 'भाभी के चक्कर में अपने भैया को न भुला देना नीली !' और हँसता हूं।

ट्रेन चल पड़ती है, सबको पीछे छोड़ती हुई, जैसे उसे किसी से कोई ममत्व न हो ! उसका तो दिन-रात का काम ही यह है कि मिले हुओं को बिछुड़ाये और बिछुड़ हुओं को मिलाये ! वह प्रगति की प्रतीक है, रुकना उसका काम नहीं ! सम्पूर्ण यात्रा में बिखरे चित्र याद आते रहे, भोगे हुए क्षणों की अनुभूतियां प्रखर से प्रखरतर होने लगीं और तभी अपने को भुलाने के लिए मैं एक उपन्यास में खो गया।

□□

६४ घण्टो की लम्बी थकान भरी यात्रा के बाद मैं पुन तेजपुर आ गया हूँ। स्टेशन पर मुझे रिसीव करने के लिए डाक्टरो एव अन्य कर्मचारियों की खासी भीड थी। प्लेटफाम पर पर रखते ही वत्सला ने फूल-माला अर्पित की जिसे मैंने हाथो से ही ग्रहण किया उसके बाद अन्य लोगो ने भी अपने प्रेम के प्रतीक रूप मे सुवासित फूलो की अगणित मालायें भेंट की। उन सबको जब सभालना कठिन हो गया तो वत्सला ने फिर मेरी मुसीबत हल्की की और उसके सकेत पर उन मालाओ को कार के ऊपर इस तरह से सजा दिया गया जसे कि विवाह मेरा न होकर उस कार का हुआ हो।

स्वागत-अभिनन्दन के भीने भीने वातावरण में मैं घर पहुँचा। यद्यपि मुझे अस्पताल मे कल ड्यूटी ज्वाइन करनी थी फिर भी सारे दिन बठा-बठा क्या मक्खियाँ मारूगा इसी विचार से एक दिन पूर्व ही अपने काम पर पहुँच गया। साथ के डाक्टरो ने व्यग्य किया 'आराम हराम है के साकार स्वरूप डाक्टर नीहार आ गये हैं।

नहीं ऐसी कोई बात नहीं है, आखिर घर पर भी क्या करता इसीलिए आ गया हूँ।'

सर्जीकल-वार्ड म एक चक्कर लगा कर हर मरीज से उसका हाल पूछा। हर मरीज ने मुझे हार्दिक बधाइया अर्पित कीं और बतलाया कि वे मेरी अनुपस्थिति बडी तीव्रता के साथ महसूस करते रहे हैं।

अब मेरी अनुपस्थिति मेरी बीबी महसूस कर रही होगी।—अचानक ही मेरे मुह से निकल गया।

'साहब तुस्सी मेमसाहब नू नाल क्यो नई ल्याय ? असी ते सोचते सी, तुस्सी मेम साहब नू जरूर नाल ल्याओगे'—एक पजाबी घायल ने सहज जिज्ञासा के भाव से टिप्पणी की।

सरदार जी मेम साहब अभी अपने घर गई हैं, थोडे दिनो बाद अपनी ननद के साथ यहा आयेंगी।—मैंने उनकी जिज्ञासा का समाधान किया।

'चगी गल अ साडहे मन विच उनाहे दर्शन दी बडी ख्वाइश सी।

'आपकी ख्वाइश पूरी होगी !'

मैं अनुभव कर रहा था कि मेरा स्नेही-परिवार कितना बढ़ गया है, और न जाने कैसे-कैसे अरमान लोगो के दिल मे भरे हैं ! वत्सला न लोगो को विस्तार से सारी बातें बताई थी इसलिये मेरा कुछ कहना शेष नही रह गया था। तभी अपने वार्ड का राउण्ड लेकर डा० वत्सला मेरे कमरे मे आ गई कहिये डाक्टर याद तो बडी आ रही होगी !"

आखिर तुम भी तो उसी जाति की हो, फिर याद आने की क्या जरूरत है !' —मैंने सहज व्यग्य के भाव से कहा।

'नही डाक्टर, आपकी बीवी, आपकी बीवी ही है, मैं भला क्या खाकर उनका मुकाबला करूगी !'—तुर्की ब-तुर्की जवाब वत्सला की ओर से दिया गया था ?

नही वत्सला तुम मुझे गलत समझ रही हो। यहा मुकाबले का सवाल नही उठता, तुम-तुम हो और वह-वह है, दोनो एक दूसरे से निस्सग और सर्वथा पृथक !'

डाक्टर, काहे को धोखा देते हो ? अब जिन्दगी बदल गई है !'

' तो क्या विवाह ने हमारे बीच कोई पहाड लाकर रख दिया है ? क्या मानवीय सबधो की धारा उस पहाड से आक्रान्त होगी ?'

'खर, मैं बहस म नहीं पडना चाहती, इस सबध मे भविष्य ही निर्णय करेगा।'

तभी डाक्टरा का एक दल वहा आ पहुँचा था और बात आई गई हो गई थी। मैं सोच रहा था कि वत्सला भी कैसी अजीब है ! स्वागत करने में सबसे आगे, मेरे सुख दुख का ध्यान रखने में, जसे डोरोथी की बहन हो ! आखिर वह मुझे क्या समझती है ? हा, ठीक ही तो है, मानवीय सबध किसी घटना-विशेष से दब नहीं सकते ! मनुष्य का हृदय सवत्र अखण्ड और अविभाज्य है। दिल पर पडी हुई गहरी लकीरा को कोई कैसे मिटा सकता है ! तो वत्सला आओ, मैं अपने मन की डायरी में तुम्हें नये रूप मे अकित करता हूँ ! मेरी अनन्य मित्र और सुख-दुख की सहज-सवेदनापूर्ण सहचरी ! दूसरे ही पल मैंने सोचा कि वत्सला को भी विवाह कर लेना चाहिये और तब हम दोनो एक-सी ही मानसिक स्थिति में आ सकते हैं वत्सला को जब भी देखता हूँ, मुझे ऐसा लगता है कि मैंने उसके साथ ज्यादती की है इसका प्रतिकार तभी सभव है, जब वत्सला मेरे साथ डबल ज्यादती करे। पर दूसरे ही क्षण कोई कान

वे पाम माकर कहता है यही तो पुरुष और नारी का अन्तर है एक अपने अधिकारों का उपयोग करता है दूसरा आत्म-समर्पण एवं आत्म हनन में ही अपने जीवन के साध्य को पाता है। इसी प्रकार नारी युग युगान्त से अगणित बलिदानों के द्वारा पुरुष के कुत्सित कठोर हृदय को नवनीत-सा कोमल बनाने की चेष्टा करती रही है पर क्या पुरुष का पाषाण हृदय नवनीत सा कोमल हो सका है। पुरुष व्यवहारवादी है और नारी भावनाओं की वीथियों में मतरण करने वाली एक रंगीन मछली है!

घर पर आया तो बड़ा सूना-सूना लग रहा था। इसीलिए तो मैं एक दिन पूर्व ही अपनी ड्यूटी पर पहुँच गया था पर रात्रि की तन्हाई मुझे नोचने को बढ़ी चली आ रही थी। बहुत देर तक करवट बदलता रहा जब निन्द्रिया महारानी ने सर्वथा असहयोग किया तो अपना पन खोलकर एक पत्र लिखने बैठ गया। मेरा सम्बोधन इस प्रकार था

'ओ स्वप्नमयी

आज तुमसे हजारों मील की दूरी पर बैठा हुआ मैं, रात्रि के मध्यान्तर में तुम्हें याद कर रहा हूँ। बीते हुये दिन और तरल भावनाओं मे डूबी हुई अनुभूतियां तुम्हारा आवाहन कर रही हैं। तुम्हारे और मेरे बीच जो एक विकट-व्यवधान है उसे चीर कर मैं तुम्हारे बहुत निकट आ पहुँचा हूँ सोचता हूँ जैसे शारीरिक-रूप से एक दूसरे से पृथक होते हुये भी हम मानसिक रूप से अभिन्न हैं। वह क्या है जो हम दोनों को मिलाता है, स्मृतियों के आंचल में दुबका हुआ मैं पुरुष आँसू बहाता हूँ तो सोचता हूँ कि तुम जो नारी हो, उसके चारों ओर अश्रुओं का अनन्त-महोदधि लहरा रहा होगा।

निम्मी तुम कैसा कुछ अनुभव कर रही हो। आज वायदे के मुताबिक प्रथम पत्र लिख रहा हूँ हो सकता है तुम भी इसी समय मुझे याद कर रही हो और कोई ताज्जुब नहीं कि रात्रि के निपट एकान्त में तुम भी मुझे पत्र लिख रही हो। स्थान और काल की सीमाओं को पार कर मेरी तीव्र दृष्टि तुम्हें देख रही है तुम भी टेबिल लैम्प के सहारे झुकी हुई मुझे पत्र लिख रही हो। मैं तुम्हारे पत्र के प्रत्येक अक्षर को स्पष्टतः देख पा रहा हूँ।

प्रिय कल्पना के गगन मे भावनाओं का उन्मुक्त विहग विचरण कर रहा है और मैं सोचता हूँ कि काश! पंख लगाकर मैं भी तुम्हारे पास उड़ आऊं और तुम्हारी पीठ पीछे से तुम्हारी आँखों को मींच लूं। विरह के इस प्रगाढ़ क्षण में हम एक-दूसरे के कितने निकट हैं किन्तु प्रात की पहली सूर्य किरण के

साथ, हम एव दूसरे से कितने दूर हो जायेंगे ! तुम कॉलेज मे भाषण दे रही होगी और मैं सर्जीकल-वाड मे राउड लगा कर अपने मरीजों का हाल पूछ रहा होऊगा। कत्तव्य और भावना, एक-दूसरे से कितने पृथक हैं, फिर भी एक दूसरे से जुड हुए और सम्बद्ध हैं, उसी तरह जसे रात और दिन, छाया और प्रकाश, आशा और निराशा, सुख और दुख, यही प्रकृति की द्वन्द्वात्मक स्थिति है।

तुम्हे मीठे स्वप्नो के साथ याद करता हूँ और तुम्हारे भाल पर तरल भावनाओं में डूबा हुआ एक प्रगाढ चुम्बन अकित करता हूँ। अच्छा डोरोथी, अब अगली रात तक के लिये विदा दो, तनिक मैं भी सो लू और तुम भी बत्ती गुल कर मीठे स्वप्नों मे डूब जाओ। कोई आश्चय नहीं, निद्रा के उस स्वप्न-लोक में हम फिर मिलें, इसी भावना के साथ लेखनी को विराम देता हूँ। चीयर यू डालिंग स्वीटो डालिंग!

सदैव तुम्हारा ही,
नीहार"

□ □ □

इतने व्यक्तियो से घिरा रहने पर भी, कभी कभी मैं नितान्त अकेलापन अनुभव करता हूँ, यह अकेलापन मेरे प्राणो को कचोटता है। लगता है, इस जटिल सस्कृति के युग मे, जहा व्यक्ति के दायित्व इतन वॅट गये है, वहा उसके प्राणो की तृषा कसे बुझ सकेगी! जब कभी ऐसा सूनापन मुझे घेर लेता है, तो मैं पुस्तक या पत्रिका पढने का उपक्रम करता हूँ, सिनेमा देखता हूँ या किसी से मिलने चला जाता हूँ, पर आज मन एक विचित्र स्थिति म फँस गया है। कुछ भी करने को या कही भी जाने को मन नही कर रहा। अध-चेतना की अवस्था में, मैं सोफे पर ही पसरकर लेट जाता हूँ और सोचता हूँ मैं यहा आ गया हूँ, क्यो आ गया हूँ? क्या यही जीवन की सिद्धि है? मुझे लगा, कि यह नितान्त अकेलापन मनुष्य के प्राणो को लील जायगा और सभवत यही आज के युग की सबसे बडी विडम्बना है। क्या इसीलिये हम रेडियो की चीख-पुकार म, सिनेमा की खर्राटे-भरी जिन्दगी म और सरकस की उछल-कूद में, होटलो की चहल पहल भरी जिन्दगी मे और पिकनिको के रोमास मे भाग लेते हैं?

हा ये सब इसी प्रश्न का अपने-अपने ढग से उत्तर देते हैं, पर मुझे लगा कि मेरे मन में इनम से किसी के प्रति आकषण नही! अनुराग की तन्त्री पर डोरोथी और वत्सला मूल रही है कत्तव्य की तुला पर अस्पताल का जीवन आपरेशन, बीमारो से पूछताछ आदि ही मेरे जीवन का सरगम' बन गये हैं।

ऐसी ही तन्हाई मे मुझे मम्मी और नीली की याद आती है। वे मुझ से कितनी दूर केवल नौकरी के चक्कर में हजारों मील के फासले पर रह रही है। मन ने निश्चय किया कि मम्मी को लिखू कि अब आप बहुत नौकरी कर चुकी, आपको अवकाश प्राप्त करने में ४ ५ साल ही हैं क्यों न समय-पूर्व अवकाश ले लिया जाय! नीली की पढ़ाई-लिखाई भी समाप्त होने वाली है उसे भी जीवन के एक सुनिश्चित-क्षेत्र में कदम रखना है—इन सब बातों को सोचकर, मैंने तुरन्त उक्त-आशय का एक पत्र लिखा और प्रतीक्षा करने लगा, उसके उत्तर की।

सध्या की डाक से मुझे मिला एक अजीबोगरीब पत्र जिसकी मुझे कतई उम्मीद न थी। एक नीला लिफाफा आया है। उसके ऊपर की हस्तलिपि को मैं पहचानता हूँ। बहुत दिन हो गये इस प्यारी सुघर लिपि के पत्र को प्राप्त किये हुये। सोचता हूँ आखिर ऐसी क्या बात है कि वत्सला प्रकट में मुझसे जो चाहती है नहीं कह पाई उसे पत्र के माध्यम से मुझ तक पहुँचाया है। इन्हीं भावनाओं में डूबा अधीरता के साथ पत्र खोलता हूँ लिखा था

'

आपको क्या कहकर पुकारूँ समझ म नहीं आता, इसी उलझन म सम्बोधन का स्थान रिक्त छोड़ दिया है आप जो भी उचित समझें खाना-पूर्ति कर लें। जैसे सम्बोधन का स्थान लघु शून्य बिन्दुओं से युक्त है वैसे ही मेरा जीवन रूपी आकाश भी एक ही शून्यभावना से आच्छादित हो गया है। कोई मन के इकतारे पर करुणाभरी रागिनी में गाता है

'मन रे तू ही बता क्या गाऊ!
कह दूँ अपने दिल के टुकड़े या आसू पी जाऊ?
जिसने बरबस बाध लिया है इस पिंजरे में बन्द किया है।
कब तक मैं इस पत्थरदिल का जी बहलाती जाऊ!
रात में जब जग सोता है मैं रोती हूँ दिल रोता है।
मुख पर झूठी मुस्कान के कब तक रग चढ़ाऊ!

बहुत दिन से सोच रही थी, आपको कुछ लिखने की, पर वैसा साहस और अवकाश आज ही प्राप्त कर सकी हूँ। आप कहेंगे कि क्या मैं प्रकट म ये शब्द नहीं कह सकती थी तो इसके उत्तर मे सुनिये नहीं कह सकती थी इसीलिये तो पत्र लिख रही हूँ। आपको प्रसन्न देखकर मेरे आह्लाद की भी कोई सीमा नही रहती पर कभी-कभी जब आपकी प्रसन्नता के बीच म से उदासीनता झाक जाती है तो मेरी हृद्-तन्त्री पर भी करुण राग छिड जाता है! मन की

ऐसी अवस्था म, मैं नहीं जान पाती, क्या करू, कहा जाऊ और किससे बात करू ! कभी-कभी प्राणो की नीरवता, इतना घेर लेती है कि शिराओ में प्रवाहित होने वाला रक्त जम जाता है। लगता है जसे, जिन्दगी रुक गई है और अवरोध के शल खड से जीवन धारा टकरा रही है ! क्या क्या सोचा था मैंने और क्या हो गया ! आपने जो कुछ किया, ठीक ही किया, यदि आपके स्थान पर मैं होती, तो मुझे भी यही करना पडता। पर बताइये मैं अब क्या करू ? यही प्रश्न बृहदाकार हो-होकर मेरे अस्तित्व को चुनौती दे रहा है !

आपके दाम्पत्य-जीवन को नई रगीनिया अभिसिक्त करें, नये उल्लास, आपके मन मयूर के पखो को फडफडायें, यही मेरी कामना है। आपसे केवल यही विनम्र प्रार्थना है कि आप मुझे, एक सहकारी का स्नेह, एव मित्र का ममत्व अवश्य देते रहें यदि अभागी वत्सला को यह भी प्राप्त न हुआ, तो उसका जीवन क्षार-क्षार हो जायेगा !

ओ मन के मीत, तुम्हें कुछ भी सबोधन न करके भी, मीत बनाने का मोह न छोड पाई ! तुम जो हमारे मीत न होते, तो ये हमारे गीत न होते !

क्या यह मेरे जीवन का प्राप्य नहीं है ? ओ डाक्टर नीहार, जितना तुम्हें भुलाने का प्रयत्न करती हूँ, उतना ही तुम मेरे मन की अतश्चेतता मे गड-गड़ जाते हो। ऐसा लगता है, जीवन मे तुम्हे भुला पाना सम्भव नही है। तुम से जो कुछ प्राप्त हुआ है, उसी की छाया मे जीवन बीत जाय, यही कामना है।

घर पर मम्मी और नीली को क्रमश मेरा नमस्कार एव स्नेहपूर्ण अभिवादन लिखना और अपनी जीवन-सगिनी तक मेरा उत्कट स्नेह एव अपरिमित शुभकामनायें पहुँचा देना। लिखना तो बहुत कुछ चाहती हूँ, पर आज इतना ही—

— वत्सला

अस्पताल से आज जब लौटा, तो मिला मुझे एक तार कमिंग २०थ मानिंग —नीली।" तार को पढकर मन मयूर नाच उठा, सोचने लगा अब तन्हाई से तो पिंड छूटेगा और पारिवारिक जीवन की मधुरिमा मे डूबने का अवसर उपलब्ध होगा। उल्लास के इन क्षणो मे मैं रेडियो खोलकर उसके साथ-ही साथ गुनगुनाने लगा तुम जो हमारे मीत न होते तो ये हमारे गीत न होते।"

अब मेरी गीत विहगिनी पर फडफडाती हुई मुझ तक आ रही है, उसके पखो की हवा ग्रीष्म के उत्ताप का हरण करेगी, ऐसा विश्वास मन मे लहरा उठा। मैं २० मई के उस प्रात काल की प्रतीक्षा करने लगा, जब मम्मी, नीली और

डौरोथी मेरे आगन मे चुहक रही होगी, तब मेरे बगले की तन्हाई गुजार उठेगी एकान्त की नीरवता पख फडफडा कर सदा-सदा के लिये मुझ से विदा ले लेगी। उन क्षणो को प्राप्त करने मे अब केवल ४ ५ दिन ही तो अवशिष्ट हैं पर ये क्षण मेरी इस तन्हाई मे अनन्त पवत शृखलाओ के पख पसार कर फल गये हैं और मुझे लगता है—५×२४×६०×६०=४३२००० चार लाख बत्तीस हजार सकिंड मुझे चुनौती दे रहे हैं कि हमारे अस्तित्व को कम मत समझो हम तुम्हारे सामने अनन्त महासागर की असख्य उर्मियों के समान लहराते रहेंगे और तब तुम एक दिन देखोगे कि हमारी ही इन चटुल लहरा क बीच म स एक सुदर नौका का उद्भव होगा, जिसमे बठी होगी तुम्हारे प्राणो की चिरया डौरोथी तुम्हारे सुख-दुख मे समान रूप से भाग लेने वाली ममतामयी बहन और इन सब पर अखण्ड ममता के मघो से युक्त स्नेहमयी जननी, अपन नेत्रो के उल्लास से तुम्हार करणीय की ओर सकेत करेंगी और तब तुम सोचोगे कि जिन विरह-क्षणो को मैं इतना वृहदाकार करके सोच रहा था वे ही तो अपनी पीठ पर बिठा कर तुम्हारे स्वप्नलोक को तुम तक लाये है! क्या उस समय भी तुम सूखा धन्यवाद देकर रह जाओगे? क्या तुम्हारी स्नेहपूर्ण चटुल अगुलियाँ हमारी पीठ न थपथपायेंगी? और इसी तन्द्रा म बीत गये पाच दिन। मैं २० मई के प्रातःकाल अपनी कार को पूरी स्पीड पर छोडकर पलक मारते ही स्टेशन जा पहुँचा। यद्यपि समय से दस मिनट पूव मैं आया था पर यहा आकर मालूम हुआ कि गाडी आधा घण्टा लेट है। ये रेलवे वाले भी बड हृदय विहीन हैं कम से कम आज तो उन्हें अपनी हृदय विहीनता का परिचय नहीं देना था! पर मरी कौन सुनता है! प्लेटफाम के अनन्त प्रसार में मैं अपने आपको न खो सका और तभी ए एच व्हीलर के बुक-स्टाल से जुदाई की शाम का गीत' लेकर पढने लगा। उस पढत पढते ही फस्टक्लास के प्रतीक्षालय में जा ही रहा था कि नयनो म शरारत लिय आ गई वत्सला 'डाक्टर नीहार, कहिये आप कसे आये? क्या कोई आ रह या आ रही हैं?

डाक्टर पहले तुम तो बताओ कि कसे तशरीफ लाई हो!"

शायद आप सोचते हैं कि अगर आप किसी बात की इत्तिला न करें, तो वह बात मुझ तक न पहुँचेगी। यहाँ तो खत का मजमू भाप लते हैं लिफाफा देखकर दाखिना सब जान लत हैं कयाफा देखकर।

तो तुम तो शायरा बानू हो रही हो!'

क्या इससे भी महरूम रखेंगे डाक्टर! अब तो यही आसरा है!

"बगाल की लडकी और कविता यह तो वैसा ही है जसे करेला और नीम चढा !"

" तो यह बात है, अब मेरा कडवापन करेले और नीम से होड लेने लगा है !"

"नहीं नहीं वत्सला, यह क्या कह रही हो !"

मैं हैरत मे आखें फाड ही रहा था कि घडघडाती हुइ ट्रेन प्लेटफाम पर आ लगी थी मेरी और वत्सला की निगाहे दौड गइ। उस अनत भीड मे से न जाने कैसे नीली को देख लिया वत्सला ने ! लगभग मेरा हाथ पकड कर मुझे उसी ओर ले चली ह प्रभु ! क्या वत्सला के रूप मे साक्षात् सहायता ही मेर लिए आई है ? और तभी देखा, लाज से गडी हुई एक नव-वधू, रेल के डिब्बे से धीरे से उतर पडी ! उसके सडिल-मज्जित चरणो स मग मे आभा बिखर गई और मेरे लिये तो वह साक्षात् उल्लास एव प्रगाढ अनुभूति की प्रतिमा थी ! वत्सला ने तपाक से मम्मी को प्रणाम किया, नीली को दुलराया और लाजवन्ती डौरोथी को उस भीड मे से उबारती हुई मेरी कार तक ले आई। रास्ते मे सोच रहा था कि यह वत्सला भी छाया सी हर समय क्यो पीछे लगी रहती है, दूसरे ही पल मन ने धिक्कारा 'इतने स्वार्थी न बनो किसी की सहृदयता एव स्नेहकातरता का अपमान न करो !"

कार को ड्राइव करता हुआ मैं यही सब-कुछ सोच रहा था, और लग रहा था कि कही आज एक्सीडेंट न कर बठू ! मेरे मन की ही तरह कार हवा मे उड रही थी। सर्राटे मारती हुई और तेजपुर के बाजार को चीरती हुई। कुछ ही क्षण म हम सिविल लाइस के अपने बगले के सम्मुख थे। आज मेरे बगले का रोम रोम हर्षित हो रहा था, बगीचे के फूल सहस्र लोचन होकर नवागत सदस्यो का अभिनदन कर रहे थे। मेरी गृह-सेविका पोर्टिको की पहली ही सीढ़ी पर मालायें लिये खडी थी, उसके साथ ही कुछ सहकारी डाक्टर भी मेरे परिवार के अभिनदन के लिये प्रस्तुत थे। इन औपचारिकताओ एव भाव-भीने स्वागत के बाद हम सब चाय के प्याले पर गप-शप कर रहे थे।

वत्सला डौरोथी से पूछ रही थी 'कहिये, सफर मे तकलीफ तो नहीं हुई बडा लम्बा सफर है !"

'दिल में जब लगन की लौ लगी हो तो लम्बा सफर क्या खाक करेगा !'— नीली ने डौरोथी के स्थान पर विनोदपूर्ण लहजे म कहा। डौरोथी लज्जानत

होकर गुलाबी रंग से भरपूर हो गई थी और मूक चचल दृष्टि ही हृद्गत भावों को व्यक्त कर रही थी। मम्मी ने वत्सला से पूछा "डाक्टर वत्सला आपकी हम सबको बड़ी याद आती रही और देखिये आप सबसे मिलने हम सब यहाँ आ पहुँचे हैं।" वत्सला हठात् ही हँस पड़ी और हँसी की उन्मुक्त उड़ान में वह प्रांत न केवल मुखरित ही हुआ बल्कि असंख्य सुमनों के सौरभ को लेकर सुवासित भी हो गया।

□ □ □

आज की रात्रि एक नवीन संदेश लेकर आई है। दो बिछुड़े हुये प्राण आज मिलन के लिये तड़फड़ा रहे हैं। सचमुच विरह के बाद संयोग अत्यन्त सुखद प्रतीत होता है यदि विरह का व्यवधान बीच में उपस्थित न हो तो संयोग निष्कटक होने के कारण उतनी प्रगाढ़ अनुभूति नहीं दे पाता, जितनी कि आज मैं महसूस कर रहा हूँ। प्रात से ही मेरी दृष्टि कहीं अटक जाती है और मैं देखता हूँ कि मेरी बचपन की सहचरी, यौवन के प्रांगण में कितनी कमनीय एवं आह्लादक प्रतीत हो रही है! जब भी मेरी दृष्टि डौरोथी पर पड़ती है तो आँखें चार हो जाती हैं, और विरह के शोले उषाकाल के शबनम बनकर, कुछ अद्भुत शोखियें एवं घातें करने लग जाते हैं। ऐसी स्थिति में वे चंचल नयन व्रीड़ानत हो जाते और तभी कक्ष के एकांत में मेरी अंगुलियाँ कोमल अलक-जाल में उलझ जाती और मैं सोचता कि नवनीत के सरोवर में प्रणयानुभूति का कोमल पारिजात उग आया है! डौरोथी का शुभ्र निर्मलवर्ण और उसमें अनुराग की लालिमा कुछ इसी रूप में प्रकट हो रही थी मन्द मुस्कान से कपोलों में बड़े आकर्षक गड्ढे-से पड़ जाते और तब मैं डूब-डूब जाता। वे अनुराग-दीप्त नयन एक मूक निमंत्रण दे रहे थे।

संध्या के बाद रात्रि का शुभागमन हुआ और विश्राम-रूपी चादर समस्त जग पर पड़ने लगी। भोजनोपरान्त परिवार के सभी सदस्य घूमने चले गये थे घर में केवल हम दो ही थे। रात्रि गुलाबी रंगीनियों को लेकर मिलन सुख की अनन्त संभावनाओं के द्वार खोल रही थी। किसी की अंगुलियाँ किसी से उलझ जातीं तो किसी की नजरें किसी से घायल हो जातीं। डौरोथी और नीली ने मिलकर मेरे कमरे को सज्जित किया था। पलंग के ऊपर की मसहरी एक दिव्यलोक का आभास दे रही थी उस पर फूलों के बन्दनवार ऐसे प्रतीत हो रहे थे, जैसे आकाश का कोई खण्ड, जो कि नक्षत्रों से अंकित है मेरे कमरे में उतर आया हो! मैं सोच रहा था कि चन्द्र और ज्योत्स्ना का यहीं मिलन होगा और नक्षत्र जैसे फूल किसी को आमन्त्रित कर रहे हो! इसी भावना से प्रेरित हो मैंने

डौरोथी के सम्मुख कोई मिलन-गीत गाने का प्रस्ताव रखा। वह किंचित् नन्-नच के उपरान्त मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करने की स्थिति मे आ गई और तभी उस मधुर-एकात की अमराई में एक गौर-वर्ण कोकिल गूंज उठी

> आज की रात
> हर दिशा मे अभिसार के सकेत क्यो हैं ?
> हवा के हर झोके का स्पर्श
> सारे तन को झनझना क्यो जाता है ?
> और यह क्यो लगता है
> कि यदि और कोई नहीं तो
> यह दिगन्तव्यापी अँधेरा ही
> मेरे शिथिल अधखुले गुलाब तन को
> पी जाने के लिए तत्पर है ।
>
> और ऐसा क्या भान होने लगा है
> कि ये मेरे पाव माथा पलकें होठ
> मेरे अग अग—जसे मेरे नहीं है
> मेरे वश मे नहीं हैं—बेबस
> एक एक घट की तरह
> अँधियारे मे उतरते जारहे है
>
> —कनुप्रिया भारती

मैं जब गीत की अतिम पक्ति सुन रहा था तभी बगले के आहाते का दरवाजा मम्मा और नीली की आगत-ध्वनि से गूज उठा। नीली ने बताया कि वे लोग काफी दूर तक घूम आई है और मम्मी तो इसी कारण बेहद थक गई थी। डौरोथी ने उन दोनों को मेवा और मलाई से युक्त केसर-सुवासित दुग्ध पान कराया और वे कुछ ही पलो मे खर्राटे भरने लगी। अब डौरोथी भी बड रूम मे आ चुकी थी और आते ही उसने मुझसे किताब छीन ली, कहने लगी 'क्या आज की रात भी किताब ही पढते रहगे, अब तो कामनाओं की एक नई किताब ही खुला चाहती है उसे पढो।'

मसहरी से आच्छादित पलग पर अब चद्र और उसकी ज्योत्स्ना आ गये थे। वहा का वातावरण एक दिव्य आभा से चमचमा रहा था। तृषित कामनाओ के गहन-कान्तार मे दो तृषित प्राण उलझ गये थे अनुभूति के मधुर- आसव से वह मिलन, जीवन की एक निधि बन गया। आँखें चार होकर न जाने क्या-क्या ढूँढती रही कानो मे मिलन की मिश्री घुलती रही, नासिका यौवन की सुरभि

को सूचनी रही, तृषित ओष्ठ आज अपनी प्यास बुझा रहे थे और हाथ तथा परा की अगुलियों को एक नवीन अयवत्ता प्राप्त हुई थी। काल घने वेगों के बीच चन्द्र की ज्योत्स्ना मुस्करानी रही। समस्त ससार निद्रा से परिपूर्ण था, पर दो प्राण एकाकार होकर एक-दूसरे को निहार रहे थ। दाडिम सी स्नावली, कामनाओं के रस से अभिषिक्त होकर बडी भव्य प्रतीत हो रही थी। उस रात्रि, हम विगत जीवन की घटनाओं की अनुभूतिया में विचरण करते रहे और मिलन के आसव को छिक छिक कर पीत रह। तभी रात्रि के सन्नाटे को चीरत हुय तीन का टकार हमारी चेतना पर ऐसा पडा कि आंखो का अजन धुलने लगा और निद्रा की मधुरिमा उन एकाकार प्राणो का अपने प्रगाढ आलिगन में लेकर मिलन की सुखद अनुभूति को परिपूर्णता प्रदान करने लगी। अब कोई अतृप्ति न थी रिक्तता रानि रानि सौन्य से समलकृत हो गई थी और कामनाओं के वन म एक अहेरी अपनी मृगलोचनी भार्या के साथ निद्रालीन हो चुका था।

□ □ □

आज जब ड्यूटी पर स लौटा ता नीरोधी को आकस्मिक रूप स गम्भीर देख कर माथा ठनका। उसके कुशल क्षेम को जानने की दृष्टि से हठात् ही मन से यह प्रश्न मुखरित हो उठा क्या तबियत तो ठीक है न?"

सिर म हल्का-सा दर्द है।

चहर पर परेशानी भी नजर आती है।

नहीं एसी तो कोई बात नहा है।

यहा तो खत का मजमू भांप लत हैं लिफाफा देखकर।

"नहीं आपकी नायगनासिस ठीक नहीं है।"

"अच्छा मम्मी कहा गई है?

' नीलिमा और मम्मी दोनों ही शॉपिंग के लिय गई हैं। कह रही थी कि वही से वत्सला के यहा भी जायेंगी।

अच्छा यह बात है। चिरया अकेली पडी और उदास हो गई! तुम भी उनके साथ क्यों नहीं चली गइ!'

' फिर आप चाय पर इन्तजार जो करत।

' नहीं डार्लिंग तुम अपने आपको इस तरह बांधा मत करो। आजाद परिन्दे की तरह घूमा फिरा!

'आपको खबर भी ता नहीं दी थी।

मैं कहता हूँ, कि हिंदुस्तानी लड़कियों की मुझे यही बात बुरी लगती है। अरे, इत्तिला देकर अगर घूमने फिरने गइ, तो फिर रोमांस क्या ?'

ऐसा तो आप ही सोच सकते हैं !

'अच्छा देखो, चाय के लिये तुरंत मिसरानी को कह दो।

तयार है, वह लाती ही होगी।

डौरोथी से दृष्टि उठाकर देखता हूँ कि मिसरानी चाय और टास्ट ला रही है। व्यवस्थापूवक रखकर फिर चली गई। मैंने अपनी चिरया को झकझोरते हुए कहा

'सच बताओ डौरोथी, तुम आज वसी नजर नही आ रही जसी सदा सवदा आया करती थीं।'

क्या कोई सुर्खाब का पर लग गया है !

उसने चाय को प्यालो मे ढाला और एक प्याला मेरी ओर बढ़ा दिया। हम दोनो चाय पीने लगे। बीच बीच मे हाथ म टास्ट लेकर बातचीत भी करत जाते थे।

एक बात बतायेंगे आप ?'

'अरे एक क्या ग्यारह पूछो।'

नही एक ही बता दो।'

'यहा इकरार ही किसने किया है।'

'सच-मच बताना होगा।

अरे भई कुछ पूछो भी तो।'—मैंने डौराथी की ठोढी उठाते हुय कहा तुम आज नजरें इतनी नीची क्या किये हुय हो। सिर दुख रहा हो, तो दवा दू ?

' पहले आप एक बात बतायें।'

'अरी भाई, पूछती तो हो नही, 'एक बात' की रट लगा रखी है ! यह एक बात है या जजाल है ?'

हा, है तो जजाल ही।

पहेली मत बूझो, रानी ! साफ-साफ कहो, आखिर क्या बात है ?'

अच्छा, तो बतलाइये, वत्सला आपकी कौन होती है ?'

,

देखिये, आपकी बोलती बन्द हो गई ! चार की दाढी मे तिनका ो है !'

तुम इस तिनका कह सकती हो और चोर मैं रही हूँ।' इस बात को मैंने दृढ़ता के साथ कहा था पर परिणाम उसका विचित्र निकला। डोरोथी मेरी गोद में सिर रख कर फफक फफक कर रो रही थी। उसके आँसुओं से मेरे हाथों की अंगुलियाँ भीग गई थीं और मैं अपने रूमाल से उसके आँसू पोंछने की जितनी कोशिश कर रहा था उतनी ही आँसुओं की धारा भी उमड़ रही थी।

रानी तुम्हें क्या हो गया है ? इस प्रकार क्यों जी हल्का करती हो।'

मेरे प्रश्न के उत्तर में उसने अपने ब्लाऊज से एक लिफाफा निकाला और मेरी ओर बढ़ा दिया। यह वही लिफाफा था जो पिछले दिनों वत्सला ने मुझे लिखा था। अब बात कुछ कुछ समझ में आ रही थी कि किस प्रकार दाम्पत्य-जीवन की मधुरिमा की हरियाली में एक सन्देह का सर्प घुस आया है और वह दो दिलों के अरमानों को डस लेना चाहता है। तभी डोरोथी ने हिचकियों के बीच कहना प्रारम्भ किया आपने वत्सला जीजी के साथ अन्याय किया है आपको उन्हीं के साथ विवाह कर लेना चाहिये था। वे आपके अभाव में कितनी दुःखित हैं और किस प्रकार उनका जीवन एक जीवित जाग्रत अभिशाप बन गया है।

बाजी जी दुबल क्यों ? शहर के अन्देशे से। तो डोरोथी तुम भी उस बाजी की तरह दुबली होती जा रही हो, यदि मैंने वत्सला से विवाह किया होता तो तुम्हारा जीवन क्या अभिशाप नहीं हो जाता! बचपन के व घरौंदे भीगी पुरानी स्मृतियाँ क्या विलख न पड़ती!

पर इसलिये वत्सला जी आपका उन्नत चाहती हैं रानी डाक्टर हैं आपकी अच्छी जीवन संगिनी बन सकती हैं।

फिर, उस अरमानों से भरी हुई बालिका का क्या होगा, जिसने अनन्त अरमान अपने दिल में सजोये थे! —मैंने डोरोथी के गालों पर हल्की सी चपत लगाते हुए कहा और दूसरे ही पल अपने अनुराग के उत्तर में और शायद प्रमाण में भी मैंने उसके कपोलों को एक विदग्ध चुम्बन से अंकित कर दिया! कुछ पल हम मौन रहे फिर इस अनुरागमयी मूकता को वाचाल किया डोरोथी ने और वह मेरे घने बालों के बीच अंगुलियाँ फिराती हुई कहने लगी आप बड़े वैसे हैं किसी का दिल उजाड़ते हैं तो किसी का दिल बसाते हैं।

यही तो जिन्दगी है मेरी चिरया! तुम जिन्दगी की सुनिश्चित राह से भटक भटक क्या जाती हो ? यकीन मानो या न मानो वत्सला मेरी मित्र, सहृदय,

सहकारी डाक्टर और चिरपरिचिता ही रही है इससे न एक तिल अधिक, न एक तिल कम।'

और डोरोथी आपकी कौन है?

क्या यह भी बतलाने की जरूरत है। मेरी बचपन की साथिन, और अब जीवन-संगिनी।

'तो क्या मैं यह समझूँ कि बचपन की साथिन को नाराज न करने के लिहाज से ही आपने मुझे जीवन-संगिनी का दर्जा दिया है।

'ऐसी कोई बाध्यता तो न थी डोरोथी। दो दिल अपनी मर्जी से ही एक हुये हैं और उनके बीच यह संदेह का सप रेंगता हुआ अच्छा नहीं लगता।'

नहीं मैं संदेह नहीं कर रही, केवल स्पष्टीकरण चाहती थी और वह मुझे मिला है।'

चाय समाप्त हो चुकी थी और मानसिक परिवर्तन के लिहाज से मैंने यह उचित समझा कि डोरोथी को लेकर कुछ देर घूम आया जाय और तब हम दोनो कार मे बैठे हुये हवा से बातें कर रहे थे।

× × ×

आज सुबह जब हम सब लोग चाय के लिये बैठ ही थे कि तभी डाक्टर वत्सला के साथ वही सरदार फौजी बंगले पर उपस्थित हुआ। वह हम दोनों के लिये सौगात लाया था 'फूलों का सुन्दर गुलदस्ता एक बंगलौरी साड़ी ब्लाउज पीस इत्यादि और भर लिये एक रिस्ट वाच। उसे अकेले आने में संकोच अनुभव हो रहा था इसी लिये आग्रह-पूर्वक डाक्टर वत्सला को लेकर वह यहा आ पहुँचा, यह सब डाक्टर वत्सला ने ही बतलाया था। सचमुच सरदार जी एक अजीब उलझन में थे और वे मूक-रूप मे ही अपनी भेंट प्रदान कर रहे थे। मैंने डोरोथी की ओर उन्मुख होकर बतलाया 'डार्लिंग यही वे फौजी सूरमा हैं जिनका मैंने इलाज किया है और जो तुम्हें देखने के लिये एक लम्बे अरसे से इच्छुक हैं।' यह कह कर मैं शरारत से हँस पड़ा। सरदार जी को काटो तो खून नही, वे पानी पानी हो रहे थे और मौन रूप मे अभिवादन कर रहे थे।

तब डोरोथी ने ही मौन भंग करते हुए उन्हें समझाया कि आखिर इतनी कीमती सौगात की क्या जरूरत थी केवल फूलों का गुलदस्ता ही काफी था। मैंने भी डोरोथी का समर्थन किया, पर सरदार जी थे कि डाक्टर के बंगले की देहलीज पर मत्था टेकने के सिवाय और कुछ नहीं सुनना चाहते थे। उन्होंने

उनके आगे बढा दिया। तब हम सब चाय पीते हुए एक विचित्र अनुभूति से अनुप्राणित हो गये। डाक्टरो ने परिवार का ऐसी भी तो एक सदस्य है, यह तथ्य चेतना में लहराने लगा और तब मैंने एहसास किया कि सचमुच मेरा परिवार कितना विराट है! मेर परिवार के असख्य लोग सनिक के रूप में मेरी मातृभूमि की रक्षा कर रहे हैं। उनके घायल होने पर उनका इलाज करना मेरा कितना पवित्र कत्तव्य है! मैं इन सबको स्वस्थ एव प्रसन्न चित्त देखकर फूला नही समाता हूँ क्योंकि मै जानता हूँ कि मैं एक ऐसी सुदृढ़ इस्पाती पात का निर्माण कर रहा हूँ, जो आवश्यकता पडने पर अपराजेय एव अनुलघनीय होगी। इन्हीं विचारो में डूबा हुआ था कि सरदार जा और वत्सला उठ खड हुय और जाने के लिय इजाजत मागने लगे।

इस पर मैंने वत्सला को कहा 'डाक्टर क्या तुम मम्मी से नही मिलना चाहोगी, वे अभी आती होगी और सरदार जी, मेरी मम्मी आपसे मिलकर बडी प्रसन्न होगी आप भी ठहरें।

डाक्टर साहब साढा इक रिश्तेदार साढ़े-दस बजे आऊ है। इस वास्ते असी इजाजत चाहदे हैं। मम्मी नू साढ़ा मत्था टेकना दसिये, असी फेर कदी उनाद दशन करिये।' —यह कहकर सरदार जी सबको सत-श्री अकाल कहत हुय चल गये और डाक्टर वत्सला अनागत क्षण की कल्पना में डूबी हुई, किंचित् गभीर हो गइ। डौरोथी उसी की ओर देख रही थी। मैंने उन दानो में चाव लढवाने के लिहाज से एक हसी मजाक का डायनामाइट डाला डाक्टर वत्सला डौरोथी तुम्हारी बड़ी प्रशसक हैं। य हर समय तुम्हारे ही गीत गाती हैं।' क्यो नहीं, क्यों नहीं, वत्सला जीजी की तारीफ करना एक बड़ा ही पुण्य है। यदि मैं लड़का होती तो इनसे ही शादी करती। —यह कहकर डौरोथी ने मेरी ओर इस प्रकार देखा, जसे कही वह जरूरत-से ज्यादा तीखी ता नहीं हो गई है।

'फिर डाक्टर नीहार, क्या हुवा फाक कर जीते! आपके बिना ये पल भर भी नहीं रह सकते। यदि इनको इजाजत हो तो आप अमरीका जाकर अपना सैक्स चज करवा सकती हैं।' —वत्सला ने भी नहले पर दहला पटका था।

हाँ, यह खूब रही, आपका प्रस्ताव काबिलेदीद है। बदा ता कुवारा रहने को तयार है!"—मैंने किसी से पीछे न रहने की दृष्टि से कहा।

' पर इन सब परिवतनो मे मेरा क्या होगा। मैं न तो भया को ही छोड़ सकती हूँ और न भाभी को ही अपनी आखो से ओझल कर सकती हूँ।' नीली ने एक अजीब शाखी के साथ अपनी फुलझडी छाडी।

"नीली बहन, तुम्हारे न्ये भाई हो जायेंगे और भाभी का स्थान तो मैं ले ही लूगी, तुम किसी भी तरह घाटे मे न रहोगी!" —वत्सला ने बीच बचाव करते हुये कहा।

हम सभी इन बातो का मजा ले ही रहे थे कि मम्मी आ गई और नीली उन पर भी इस रहस्य को प्रकट करना चाहती थी कि वत्सला ने अपने होठो पर अगुली रखकर उसे मूक सकेत से ही निषेध कर दिया।

ओहो! आज तो डाक्टर वत्सला आई हैं कैसे रास्ता भूल गई आज इधर! —मम्मी ने वत्सला के इतने दिनो बाद आने पर गिला प्रकट की।

'आटी जी क्या बताऊ इधर मौका ही नही मिल पाया कि आपके दर्शन करती। बडी बदनसीब हूँ मैं!'

अरे नीली, तुमने डाक्टर वत्सला को चाय नहीं पिलाई?' —मम्मी ने अपरिमित स्नेह-वर्षा बरसाते हुए कहा।

आपकी गैरहाजिरी मे इतना कसूर मैं कैसे कर सकती हूँ!' नीली ने चिकोटी काटते हुए कहा।

'इसे तुम बेकसूर समझती हो नीली, अब तक चाय न पिलाना बडा भारी कसूर है! अब मैं ही अपनी बेटी को चाय पिलाऊगी। आओ वत्सला मेरे साथ, किचन मे ही चली आओ। वहां बातें भी करते रहेंगे और चाय भी बनती रहेगी।

"नही आटी जी ये सब झूठ बोलते हैं आप नाहक परेशान होती हैं। हम सब चाय पी चुके हैं और डटकर नाश्ता भी कर चुके हैं। आप कहें तो आपके लिये चाय मगवाऊ।'

'नही, मैं तो चाय पीकर ही आ रही हूँ। आज तुम्हारे अस्पताल की अचना देवी के यहा चाय पर बुलाई गई थी।'

अच्छा तो यह बात है! आपके घर किसी और की पार्टी उडे और आप कहीं और वत्सला ने वस्तु-स्थिति को आत्मसात् करने की दृष्टि से कहा।

फिर हम सब वहा से अपने-अपने काम पर चले गये और वत्सला और मम्मी बहुत देर तक बातें करती रहीं। जब मैं अस्पताल जाने को हुआ, तो वत्सला भी मेरे साथ कार मे बैठकर चल पडी।

कार तीव्र-गति से बढ़ी चली जा रही थी। मैं आगे बैठा हुआ ड्राइव कर रहा था और वत्सला पीछे की सीट पर थी। विचारो का तूफान मेरे मन मे था और कल्पना करता हूँ कि ऐसा ही कुछ हाल वत्सला का रहा होगा। एकत्रणी स्नेह-सूत्र से जुडे हुए हम आगे बढ़े चले जा रहे हैं, पर कितने पृथक! शायद

जीवन की कार मे भी हमारा स्थान ऐसा ही पृथक है निकट होते हुए भी हम एक-दूसरे से कितने दूर हैं ! क्या विवाह का व्यवधान, दो आत्माओं और उनके परस्पर-सबधो का विभाजक है। सामाजिक दृष्टि से ऐसा विभाजन है पर वैयक्तिक परिधि म तो हम अब भी एक दूसरे-से उसी प्रकार जुडे हुए हैं, जसे विवाह से पूर्व थे। सामाजिक विधान क्या आत्माओ मे भी अलगाव की खाडी बनादेता है ?—यह प्रश्न मैं अपने आपसे पूछ ही रहा था कि अस्पताल के पोर्टिको में कार रुकी और मैं यंत्र की तरह जड और चेतनाशून्य नीचे उतर पडा । खिडकी खोलकर मैंने वत्सला को उतरने का सकेत किया, वह भी विचारो म खोई हुई थी। खिडकी खुलने से अचानक चौंक पडी 'अच्छा, अस्पताल आ गया !'

उतरकर हम लम्बे लम्बे बरामदो को पार करते हुए ड्यूटी रूम की ओर बढ रहे थे कि तभी वत्सला चिहुँक उठी 'डाक्टर, आज की मुलाकात के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया ! दीदी से कह देना कि मजाक-मजाक मे हम बहुत आगे बढ चुके थे। वे इसे गभीरतापूर्वक न लें मेरा ऐसा कोई इरादा नही है।

"चोर की दाढी में तिनका ! यदि मैं ऐसा कहूँगा, तो वह जरूर इसे गभीरता-पूर्वक ही लेगी ! —कहने को मैं कह गया, पर दूसरे ही पल सोचने लगा कि चोर मैं हूँ या वत्सला !

'अच्छा, तो फिर कुछ न कहियगा' —अपने वाड की ओर जाते हुए वत्सला ने कहा।

आज सारे दिन, काम मे न जाने क्यो, मन न लगा । रह रहकर डौरोथी और वत्सला की बातें मन मे चक्कर काटती रही। मैं सोचता हूँ क्या सचमुच डौरोथी भी वत्सला पर मेरी तरह मुग्ध है ? या उसकी बातो में व्यग्य-व्यजना थी ? या दोनो का विचित्र मिश्रण था ! — हकीकत और व्यग्य व्यग्य और हकीकत ! सचमुच, यह ठीक है कि हमारी अतश्चेतना मे जमी हुई बातें कभी-कभी भेष बदलकर जिह्वा के माध्यम से प्रकट होती हैं। उनमे व्यग्य का परिधान होने हुए भी वास्ताविकता की अ तरात्मा निवास करती है इन दोनो युवतियो की पारस्परिक वार्ता म *यग्य और वास्तविकता का धूपछाँही सम्मिश्रण था* मैं निष्कर्ष पर पहुँच चुका था और उसके साथ ही मन का अवसाद भी शिथिल होने लगा, नयी चेतना का अभ्युदय हुआ और उलझन के दलदल स मुक्ति मिली।

□□

अस्पताल से लौटने पर जब मैं और रोगेवी भाग की र° थ तभी वह अचानक ही बोल पड़ी ... ! मैं भी डाक्टर होती तो कम-से-कम आपके साथ काम करने का अवसर तो मिलता।

मैं उसके उद्‌गारों के मूल को समझ रहा था। उसका आक्रमण मुझ पर निर्दिष्ट था। यदि कोई प्रसंग भारी होता तो इसी बात को लेकर गरम हुआ करती और तब पति-पत्नी में एक महाभारत छिड़ जाता। रोगेवी गुमसुम थी इसलिये उसके उद्‌गारों ने नारीजनोचित ईर्ष्या का एक भव्य रूप धारण कर लिया था। ...वि... का ध्यान म... हुए मैंने उसके उद्‌गारों पर टिप्पणी की 'आखिर तुम्हें डाक्टर बनने की क्या आवश्यकता है? यदि तुम डाक्टर बनना ही चाहती हो तो साहित्य की डाक्टर बनो। यदि हम मियां-बीवी डाक्टर बन जायेंगे तब तो एक दूसरे के ... का इलाज करना बड़ा मुश्किल हो जायगा।

इधर मैं लोग काम के प्रति ... होना चाहती हूँ पर मन न जाने क्यों लग नहीं पाता।

रानी ऐसी क्या जल्दी है? साल डेढ़ महीने तो हम दाम्पत्य जीवन को जीने ही चाहिये। फिर डाक्टरेट ले सकती हो।

पर तब तक मन का विद्यार्थी न जाने किस ओर भटक जाय।

'नहीं, आखिर ऐसी क्या बात है। कुछ सिलसिला तो जारी रखा ही जा सकता है।'

कोशिश तो यही करती हूँ पर जब किताब खोलकर पढ़ने लगती हूँ, तो आपका ध्यान आ जाता है कि आप अस्पताल के वार्ड में राउण्ड ले रहे होंगे, ऑपरेशन थियेटर में होंगे या वत्सला जी से बात चीत कर रहे होंगे।

'सच बताओ रानी वत्सला और हमारे सम्बन्धों को लेकर तुम क्या-क्या सोचती हो।'

"नहीं ऐसी तो कोई बात नहीं है। मैं सोचती हूँ कि नये युग की पत्नी को मानवीय सम्बन्धों में काफी उदार होना ही चाहिये। यदि आपके पूर्व-सम्बन्ध रहे हैं तो उन्हें एकबारगी ही समाप्त कैसे किया जा सकता है।

"तुम ठीक कहती हो, पर तुम्हें पत्नीत्व की मर्यादा निभाने में क्या कोई तकलीफ हो रही है ?"

" नहीं, ऐसी तो बात नहीं है, मैं सोचती हूँ वत्सला और आपके बीच आकर मैंने ठीक नहीं किया !"

"नहीं इसके लिये तुम कतई उत्तरदायी नहीं हो मैं स्वयं सम्पूर्ण स्थिति का जायजा ले चुका हूँ और मैंने बहुत सोच-समझ कर निर्णय लिया है। तुम नाहक परेशान होती हो रानी !"

'आप बड़ कैसे हैं, क्या वत्सला का दिल न दुखता होगा ?'

'बडी हमदर्द बन रही हो वत्सला के लिये, उसका उद्धार तुम्हीं कर दो न, जैसा कि तुम मजाक-मजाक में कह रही थीं कि अमेरिका मे लिंग परिवर्तन हो सकता है !'

'ओ हो, आप तो बात का बतंगड बना रहे हैं। क्या मैं आपको अकेला छोड़कर ऐसा करना पसद करूंगी ?'

तब मैंने ही सधि प्रस्ताव के रूप मे डौरोथी को अपने निकट खींचकर उसके बालो मे अगुलियां फिराते हुये एव हल्की सी चपत जड़ दी और कहा तुम क्या क्या सोचा करती हो ? यह सब मत सोचा करो। दिक हो गई, तो मुझे इलाज करना होगा।'

नहीं, इसमे दिक होने की क्या बात है ! एक ख्याल आया और उसे आपके समग्र प्रकट कर दिया। कहे तो आगे से कुछ न कहा करूं !'

अरी मेरे प्राणो की चिरया तुम सब कुछ कह दिया करो, दिमाग मे जहर इकट्ठा होना अच्छा नहीं है उसकी कथारसिस" (विरेचन) होती रहनी चाहिये।"

अरे आप जहर की कल्पना भी करते हैं, यह तो अमृत है अमृत ! दाम्पत्य-जीवन पर ऐसे अमृत की वर्षा होती रही तो मैं अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक रहूँगी।

हां एक भारतीय पत्नी के नाते तुम्हे ऐसा ही सोचना चाहिये और ऐसा ही करना भी चाहिये।

अच्छा, एक बात बतायें कि आप वत्सला के बारे मे क्या-कुछ सोचते हैं !"

यही कि वह मेरी मित्र है, सहकारी डाक्टर है और सुन्दरी युवती है।"

और मेरे बारे मे क्या सोचते हैं ?"

"यही कि डोरोथी मेरी बचपन की साथिन, मधुर भार्या और सुसंस्कृत एवं कमनीय युवती है।"

आपके वक्तव्य से निष्कर्ष निकालने की आवश्यकता ही क्या है, वह तो स्वयं ही निकल चुका है और उसी के परिणामस्वरूप तुम मेरी जीवन-संगिनी और वत्सला मेरी मित्र है। उसके कारण तुम्हारी स्थिति एवं जीवन पर कोई आंच नहीं आ सकती। यह वह है और तुम, तुम हो! तुम्हारा स्थान सुरक्षित है, उसी का जीवन अधर में लटक रहा है!

वत्सला दीदी, विवाह क्यों नहीं कर लेतीं?

विवाह करना क्या अनिवार्य है? आजकल तो अनेक युवक एवं युवतियाँ स्वतन्त्र रह कर अपने व्यक्तित्व के विकास में सहायक होते हैं।'

तो क्या आप विवाह को व्यक्तित्व के विकास की बाधा समझते हैं?'

नहीं नहीं ऐसा तो मैं नहीं सोचता! विवाह व्यक्तित्व के विकास में सहायक हो सकता है और यह गौरव की बात है पर देखना तो यह है कि ऐसा कितने व्यक्तियों के जीवन में सम्भव हो पाता है! यदि इसके आंकड़े इकट्ठे किये जायें तो यही परिणाम निकलेगा कि अधिकांश विवाह असफल सिद्ध हुये हैं और ऐसे ही विचारों से प्रेरित होकर वर्तमान युग के युवक एवं युवतियां स्वच्छन्द जीवन पसंद करने लगे हैं।

"स्वच्छन्द जीवन की जहाँ कुछ अच्छाइयाँ हैं वहाँ कुछ उसकी सीमायें भी हैं। वत्सला के चरित्र को लेकर लोग उंगलियाँ उठाते हैं।

हाँ हमारे समाज का अधिकांश रूढ़ि के दलदल में फँसा हुआ है और वह इसके सिवाय सोच ही क्या सकता है!

ऐसे प्रवादों में प्रायः लोगों के मन की अपनी विकृतियाँ भी रहा करती हैं और वे उन्हें इस रूप में प्रकट कर अपने मन की निकाल लेते हैं।

हाँ, तुम्हारा कहना ठीक है। ईर्ष्या को प्रकट करने का यह भी एक मार्ग है। जिसने स्वयं स्वच्छन्द जीवन नहीं बिताया वह भला यह कैसे पसन्द कर सकता है कि कोई दूसरा, उसी की आँख के सामने उससे भिन्न प्रकार के जीवन का अनुगमन करे।

आप ठीक कहते हैं। मनुष्य अपनी अनुभूति की मर्यादा में ही बंधा रहना चाहता है और नये प्रयोगों के लिये उसका मन स्वभावतः अनुदार होता है।

सच सच बतलाओ डोरोथी इस प्रकार के स्वच्छन्द जीवन को तुम कैसा

समझती हो ? क्या तुम्हार मन मे किसी नये रूपवान युवक को देखकर कोई कोमल प्रतिक्रिया नही होती, उस पल क्या तुम यह नही सोचती कि इससे बात की जाय और इसके साथ कुछ क्षण विताये जायें।'

आप जो कह रहे हैं, वह ठीक हो सकता है, पर ऐसी वृत्तियों को उन्मुक्त छोड़ना मैं अनुचित समझती हूँ।'

'उचित-अनुचित की बात तो विवेक द्वारा परिचालित होती है। यदि मन मे कोमल प्रतिक्रिया होती है, तो वह स्वाभाविक है और उससे हमें नही डरना चाहिये। हा, विवेक के द्वारा हम उसके औचित्य को नियन्त्रित कर सकते हैं, पर एक हकीकत को टाला नहीं जा सकता, यदि टाला जायेगा, तो वह दूसरे रूप में प्रकट होगी।'

'अच्छा छोड़िये भी इस बहस को। नोली कह रही थी कि आज रात्रि को 'मेरे महबूब' देखने चला जाय वे लोग आया ही चाहती हैं। आप कुछ विश्राम करलें, तब तक मैं भी बाहर चलने के लिय तयार हुई जाती हूँ।'

यह कहकर डौरोथी ड्राइग रूम से बाहर चली गई और मैं काउच पर लेटा हुआ आज की बातचीत का विहगावलोकन करने लगा। ऐसी ही मन स्थिति म मुझे कुछ विश्रान्ति भी मिली और मैं सोचता रहा कि हमारे वैवाहिक जीवन की धारा कैसे कसे उपकूलों को स्पर्श करती हुई आगे बढ़ रही है। वहां अनुराग की मधु मधुरिम छाया है तो कुछ आशकायें भी हैं। एक ओर पूर्ण-समर्पण है और दूसरी ओर चेतना की आँखें उस समर्पण-मधु मे ही भीगकर समाप्त नहीं होना चाहती और उन्मुक्त उडान के लिये डने फडफडाती हैं।

☐ ☐ ☐

मेरे महबूब' देख आये हैं और रात को सोने की तयारी कर रहे हैं कि तभी डौरोथी का कवि मन बरस पडता है सच कहिय, मेरे महबूब' पिक्चर आपको कसी लगी ?'

'बहुत ही अच्छी। गीता से लबालब और प्रणय की रगीनियो से भरपूर!
'साधना के लिए अमिता ने बडा भारी त्याग किया है।

क्यो, क्या तुम भी वसा ही त्याग किसी के लिए करने की सोच रही हो ?'

ना बाबा मैं तो ऐसा त्याग नहीं करूगी।'

क्यों ? पर उपदेश कुशल बहुतेरे जे निज आचरहिं ते नर न घनेरे!'

नहीं प्रशसा करना और बात है, स्वय अपने जीवन में चरितार्थ करना और

यात है। एक आदर्श है और दूसरा यथार्थ। यथार्थ की विवशताएँ भी होती हैं।

'हाँ, तुम ठीक कहती हो पर जिसकी प्रशंसा की जाती है, उस पर आचरण भी करना चाहिए। प्रशंसा, एक प्रकार का मानसिक प्रयत्न है उसे साकार स्वरूप देना ही उसकी पूर्ण परिणति है!'

यह तो प्रयत्न साध्य ही होगा हमारे स्वार्थ की परिधि कभी-कभी हमारे पर पकड़ लेती है!'

'फिर तुम्हें प्रशंसा करने का कोई अधिकार नहीं है।'

आप इसे भी छीनना चाहेंगे ?

छीनने का सवाल नहीं है सवाल है अपने विचारो के प्रति निष्ठा का।

' तो समझ लीजिए मुझमें ऐसी निष्ठा का अभाव है।

स्पष्ट कथन के लिए धन्यवाद! तुम्हारे उत्तर में एक नारी का हृदय बोल रहा है। नारी एकाधिकार चाहती है।'

क्या पुरुष नहीं चाहता ?

'चाहता है।

फिर नारी पर ही यह लाञ्छन क्यों ? एक बात तो बताइये प्रणय मे हम एकाधिकार क्यों चाहते है ?

इसलिए कि जिसे हम चाहते है भरपूर चाहते है, और नहीं चाहते कि उस पर कोई अन्य अपना अधिकार जतलाय। यही प्रणय का स्वभाव है। एकाधिकार का मतलब है प्रगाढ़ प्रणय, पर इस एकाधिकार की भी एक परिधि होती है और वह यह कि समाज म एक व्यक्ति अनेक से जुड़ा होता है किसी का पुत्र होता है किसी का भाई होता है किसी का मित्र होता है। एसी स्थिति मे एकाधिकार की एक सीमा होनी चाहिए।'

तो इसका मतलब यह हुआ कि यद्यपि एकाधिकार प्रणय का स्वभाव है, फिर भी उस विवेक और औचित्य द्वारा नियन्त्रित होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होगा तो अनर्थ की सम्भावना है।

हा, तुम ठीक समझी हो इसमें इतना और जोड लो कि मानवीय सम्बन्धो के सन्दर्भ म हमे अधिकाधिक उदार होना चाहिए। यही हमारे मनुष्यत्व की कसौटी है।

ऐसी स्थिति म तो मनुष्यत्व बड़ा महगा पडगा क्योकि इसके लिये जो ईर्ष्या की मूल एव जन्मजात भावना है, उसी की बलि चढानी होगी।'

' तभी तो मनुष्य का चरित्र निखर सकता है हमारे चरित्र का निर्माण कुछ नकारात्मक एव सकारात्मक प्रवृत्तियो से हुआ है, इनमे से कुछ को विकसित करना पडता है और कुछ को समाप्त करना पडता है।'

किन्तु ऐसा करना आसान नहीं।'

'मैं यह कब कहता हूँ यदि ऐसा करना सरल होता, तो फिर इसकी विशिष्टता ही क्या रहती । किन्तु डौरोथी, आज तुम्हें हो क्या गया है। क्या आज सारी रात यही अनन्त चर्चा चलेगी ? अरे भई यह यूनिवर्सिटी का सेमिनार रूम नही है यह एक डाक्टर का बड रूम है और अब मैं बहस समाप्त करने की रूलिंग (आदेश) देता हूँ। मेरे महबूब' देखने का यह उल्टा असर क्यो ?' —मैंने डौरोथी की अगुलियो को हल्के-से सहलाते हुये कहा। उसकी आँखो मे शोखी और शरारत दोनो ही एक साथ उदित हुइ और उनमें जो मधुमय निमन्त्रण था उसे मैं न टाल सका।

सोचता हूँ, मिश्री में जसे फांस होती है, वसे ही दाम्पत्य-जीवन की मधुरिमा में इस प्रकार की बहसें हुआ करती हैं। इस बहस ने हमे एक दूसरे के निकट लाने में और पृथक दृष्टिकोणों को समझने मे बड़ी मदद दी। प्रगाढ अनुभूति के वे प्रेरणादायी पल जीवन की एक ऐसी निधि बन गये हैं कि जिन्हें मैं अपने ववाहिक जीवन का शीर्ष बिन्दु कह सकता हूँ।

वे अरुणिम कपोल, अनुरागदीप्त नयन और कामनाओं से परिप्लावित हृदय, एक ऐसी अनुभूति छोड गये हैं, जो कभी विस्मृत नही की जा सकती। मैं सोचता हूँ कि क्या यही पूर्णत्व है। क्या इसी को आत्म-तृप्ति एव आत्म साक्षात्कार कहा जा सकता है ? आस्तिक भी ब्रह्मानन्द की अनुभूति तक पहुँचने के लिये इस भौतिक अनुभूति की उपेक्षा नही कर सकते। यह अनुभूति कला और साहित्य की तो प्राण है। मीरा, जयदेव और विद्यापति के गान क्या इसी अनुभूति से अनुप्राणित नही हैं ? क्या क्रिश्चियाना रोजटी और कीटस के गीतों में इसी ऐन्द्रियता की प्रतिध्वनि नहीं है ? मैं साहित्यानुरागी अवश्य हूँ, पर इस प्रकार की समस्याओ का समाधान स्वय नही कर पाता। इसीलिये, इस प्रकार की समस्या के समाधान में साहित्य की विदुषी डौरोथी के निष्कर्ष को, मैं अधिक महत्त्व देता हूँ और मुझे प्रसन्नता है कि इस सम्बन्ध मे डौरोथी मुझसे सहमत है और उसने स्पष्टत यह भी कहा है कि भौतिक प्रेम, आध्यात्मिक प्रेम का प्रथम सोपान है। भौतिक प्रेम के अभाव मे हम आध्यात्मिक प्रेम की कल्पना नही कर सकते। अपने पडोसी को प्यार करो, इन्सानियत को प्यार करो, और ऐसा करने से ईश्वर नाराज नही होगा, अपितु प्रसन्न ही

वत्सला आज अस्पताल मे उदास दीखो। मैं पूछ बठा 'तबियत तो ठीक है न ?
'नहीं, सिर भारी है।
फिर डयूटी पर क्यो आई हो ? जाओ आराम करो।'
पर घर पर मक्खियाँ मारने के सिवाय और क्या करूगी ! बोर होने के डर से ही डयूटी पर आ गई हू। यहा काम मे मन लगा रहेगा।'
'अच्छा सरिडन ले लो। चाय पीओगी ?'
'यह तो रोज का ही धधा है सरिडन कब तक लूगी ! हा, चाय जरूर पी सकती हूँ।
तभी मैंने सिस्टर से चाय की फर्माईश की। उन्होने तुरन्त ही भिजवाने का आश्वासन दिया और चली गइ।
वत्सला को मैंने अपने कमरे मे आने का सकेत किया और तब हम इधर उधर की गप शप में लग गये।
'डाक्टर वत्सला, तुम अपनी सेहत का ध्यान क्यो नही रखती ?
'ध्यान रखकर क्या करना है ?'
'क्यों, अब कोई आकाक्षा शेष नहीं है ?'
हा ऐसा ही समझिए !'
'वत्सला, यह तुम क्या कह रही हो !'
'ठीक तो कह रही हूँ। मैं अधिक जीकर क्या करूगी ?'
'ओ-हो, तो आप सन्यासिनी होने जा रही हैं !'
'यह भी हो सकता है।'
'वत्सला मैं ऐसी बातें सुनने के लिए तयार नही हूँ।'
चाय की ट्रे रखकर एक नर्स चली गई। बहुत मना करने पर भी, आज मैंने स्वय चाय को उसके प्याले में ढालकर उसकी ओर बढाया।
'आप तो महिलाओ के अधिकार भी छीन सकते हैं !'
इस समय तुम महिला नहीं हो रोगिणी हो।'

अगर रोगिणी को इसी प्रकार का डाक्टरी इलाज मिलता रहे, तो वह चिर-रोगिणी हुआ चाहती है।

'धत् पगली!—इसी सम्बोधन के साथ हाँ न जाने क्यों मैंने एक हल्की-सी चपत वत्सला के लगाई। उसके दोनों कपोल तो तप्त अंगार थे, ज्वर की उष्णता से उसका चेहरा तमतमाया और न जाने वह कैसा-कुछ अनुभव करने लगी। मैंने भी मन में सोचा मैं यह क्या कर बैठा!

'वत्सला तुम्हें फीवर (ज्वर) है चलो घर छोड़ आता हूँ।

चलिए!'

कुछ ही क्षणों में हम वत्सला के बंगले पर पहुँच गए। वह सोफे में निढाल हो गई उसने मुझे सामने के सोफे पर बैठने का संकेत किया।

'फिजिशियन हील दाई सेल्फ!' (हकीम जी पहले अपना इलाज करो!)

आप कहिए न।

'अच्छा पर इन्स्ट्रक्शन्स मानना (निर्देश-पालन) करोगी?'

जरूर।

आराम से लेटो और मैं चलकर दवा भिजवाता हूँ।

आराम से ही लेटी हूँ। आप कुछ और देर नहीं बैठ सकते!—उसके अबोध नयनों में याचना थी। उस याचना को टालने का सामर्थ्य मुझमें नहीं है। कहा 'बैठता हूँ।' और तब मैंने उसके पैरों पर कम्बल डाल दिया।

सोचता हूँ इस मरीज़ के बारे में मर्ज़ शायद शरीर का उतना नहीं है जितना दिल का है! पर मैं इसके लिए क्या कर सकता हूँ? 'उफ वत्सला! क्या तुम मुझे माफ न करोगी? तुम्हारी इस हालत के लिए मैं ही जिम्मेदार हूँ मैंने ही तुम्हारे सपनों को उजाड़ा है! पर मैं मजबूर हूँ!

'आप नाहक परेशान होते हैं। देखिए, मैं ठीक हूँ। माथे पर हाथ रखिये।'

वत्सला के मस्तक पे हाथ रखा तो सचमुच वह बहुत ठण्डा था। मैं हाथ उठाने लगा तो उसने कहा 'कुछ देर रखे रहिए, मुझे अच्छा लगता है!

'उफ वत्सला! तुम्हें यह क्या है! पाँच मिनट पूर्व तुम तप्त-अंगार थीं अब हिम-शीतल हो!

'मैं कह रही हूँ मैं बिल्कुल ठीक हूँ। आप आराम से बैठें।

'अच्छा तो इजाजत दो? द्रौपदी इन्तजार कर रही होगी।

'आपकी मर्जी है पर मेरा तो मन, अभी कुछ और बातें करने को था।'

अच्छा बठता हूँ, कहिए।'

कहूँ ? सुनेंगे ?'

जरूर।'

तब उसके मन मे न जाने क्या सुरसराहट हुई कुछ पल मौन रही फिर चेहरे पर एक अपूव आभा दीप्त हो उठी। होठ फडके जीभ हिली पर वह बीच मे ही लडखडा गई।

अच्छा, आप जाइये फिर कभी कहूँगी आज इतना ही।'

मैंने लक्ष्य किया वत्सला के मन मे एक अजीब तूफान है मर्यादा और रूढ़ि के दलदल मे भीगा उसका मन कुछ कहना चाहता है पर नहीं कह पाता नहीं कह पाता। मैं जोर देकर कहना चाहता हू वत्सला। कहो रुको मत *जब तक तुम नहीं कहोगी मैं नहीं जाऊगा नहीं जाऊगा।'*

यही तो मैं चाहती हूँ आप रहिये यहा आराम से। एक रात क्या आप वत्सला के साथ नहीं रह सकते ? मैं दीदी को फोन करवा देती हूँ कि आप देहात मे एक सीरियस केस (गम्भीर रोगी) अट ड करने गये हैं।'

कौडी तो बडी दूर की मारती हो।'

हा, ऐसे मौकों पर दिमाग बडा तेज चलने लगता है।

पर वत्सला आज जाने दो फिर कभी आ जाऊगा। खुदा के लिए आज माफ कर दो।

वह कान्तिपूर्ण व्यक्तित्व अचानक ही बुझ गया जसे १००० वाट के बल्ब के स्थान पर जीरो पावर का बल्ब जल रहा हो। 'आप जाइये न मैं कब रोकती हूँ।'

पर पहले वह बात तो बताओ उसे सुने बिना कसे जा सकता हूँ।'

मेरी जिज्ञासा का सूय वत्सला के नयनो के आकाश मे ढलने लगा।'

नही, वह बात तो फुरसत में ही कहूँगी भागा दौडी में ऐसी बातें नहीं होतीं।

'अच्छा बाबा, तुम राजी रहो, फोन करवा दो। —मैंने पराजय स्वीकार करते हुए कहा।

देखो, इसके लिए पशेमान न होने दूगी। मेरी जोर-जबरदस्ती नहीं है, आप अब भी जा सकते हैं ?

'सकता मार भी और रोने भी न दे !'

'नहीं डाक्टर आप मेरे चिकित्सक हैं और मैं आपकी रोगिणी हूँ इसी हैसियत से रहने को कहती हूँ। आपको नामंजूर हो, तो अब भी जा सकते हैं !'

नहीं भई तुम्हारी हालत तो यही है कि सहते हैं पर हाथ में नंजर नहीं !'

तब वत्सला ने नौकर को आवश्यक निर्देश देकर फोन करने को कहा और लौटते हुए ड्यूटी रूम से मेरा स्लीपिंग गाउन लाने का भी आदेश दे दिया।

इस पल तो तुम पूरी योजना मंत्री बनी हुई हो !

हां कभी-कभी ऐसा भी करना होता है। अच्छा यह तो बतलाओ कि डिनर में क्या-क्या पसन्द करोगे ?

वत्सला पागल तो नहीं हो रही हो। खाना घर से या होटल से मंगवा लेंगे।'

नहीं, आज मैं अपने हाथ से बनाकर खिलाऊंगी।

आता भी है ? यह कोई ऑपरेशन थोड़े ही है जो तुम कर लोगी !

खूब कही हिन्दुस्तान की लड़की और खाना बनाना न जाने ! अरे जनाब हिन्दुस्तानी लड़की कोई चाहे जहां पहुंच जाय पर उसे खाना बनाना तो आना ही चाहिए !

अच्छा तो यह बात है। बनाइये और खिलाइये इतना खाऊंगा इतना खाऊंगा कि तुम्हारा दिवाला निकल जाये !

डाक्टर साहब ! वत्सला अन्नपूर्णा है आपने क्या समझा है ?

अच्छा तो मैं अन्नपूर्णा रेस्टोरेन्ट में हूँ यहां तो सेल्फ सर्विस (स्वयंसेवा) चलती है बन्दा भी हाथ बटायगा।

मंजूर है। वो आप तो चेहरे पर रौनक आ गई यो समझें बीमार का हाल अच्छा है !

देखो वत्सला ! तुम फिर धोखा दे रही हो !

धोखा देने का काम औरत का नहीं मर्द का है।'

उसी का तो प्रायश्चित कर रहा हूँ।

खूब करिये और भरपेट करिये। देखिये कुछ कसर न रह जाय !'

आनन फानन में वत्सला ने खाना तयार कर लिया। आज उसके शरीर में न जाने कहां की दैवी स्फूर्ति आ गई थी ! चरण बिद्युत रहे थे हाथ की लम्बी लम्बी उंगलियां, मुद्दत के बाद स्टोव और टिफन के बीच चक्कर काट रही थी

नयन अनचीन्हे अरमानों को लिए किसी अनागत भविष्य में झांक रहे थे। पहले उसका प्रस्ताव था कि वह बनाती जाये और मैं खाता जाऊं पर मैंने साथ खाने का इसरार किया। इस पर यह तय हुआ कि पहले सब चीजें बना ली जायें, फिर साथ बैठकर खाया जाये। पूरियां सिक गई थीं, सब्जियां तैयार करके 'पौट' में भर दी गई थीं, सलाद बन गया था, सूप तैयार हो गया था। अचार, मुरब्बे और जली आलमारी से निकल आये थे। नौकर को दौड़ाकर कुछ मिठाई और पान भी मंगवा लिये गये थे। गरज यह कि वत्सला ने आज अपने मेहमान की खातिर में कुछ उठा न रखा था।

'डाक्टर! आज आपको मालूम है, मेरा बर्थ डे (जन्म दिन) है।' वत्सला ने कुछ अजीब सी शोखी अपने नर्गिसी नयनों से बिखेरते हुए कहा।

जन्म-दिन मनाने का यह ढंग तो बहुत अच्छा है! पहले बीमार बनो फिर किसी को कैद करो, उसे इतना भी मौका न दो कि वह कोई 'प्रजेन्ट' (भेंट) ला सके।

अरे प्रजेन्ट तो आपके पास है उसके लिए कहीं बाहर नहीं जाना होगा। —उसने फिर तीखा मर्मबधी तीर छोड़ दिया।

'यह ढंग, यह अन्दाज, ये शोखियां तो नायाब हैं!'

नवाजिश है बन्दा किस काबिल है! आइये पहले खाने से निबट लें।'

डाइनिंग टेबिल पर सब चीजें करीने से लगा दी गई। हम दोनों खाने के लिए बैठ गये। फिर वत्सला ने रसमलाई का एक टुकड़ा चम्मच में लेते हुए इसरार किया हम आपको खिलायेंगे!

और, हम आपको!'

'मंजूर है।'

इस प्रकार हम घण्टे भर तक खाते रहे, खिलाते रहे। तभी मुझे एक शरारत सूझी देहात में डाक्टर की यह मेहमानवाजी तो खूब हो रही है! जी चाहता है, रोज ऐसी खातिर मयस्सर हो!'

मैं दीदी को सिखा दूंगी वे आपकी रोज ऐसी ही खातिर करेंगी।

क्या कान खिंचवाने का सरंजाम कर रही हो?'

'सच कान भी खींचती हैं?

अरे कान क्या, पूरी उठक बैठक लगवाती हैं। पूछती हैं डाक्टर वत्सला ने

फेर म कही मत ग्रा जाना !' पर तुम हो कि आज गिरपत मे ले ही लिया। अब तो खुदा ही परवरदिगार है जान बचे तो लाखो पाये !'

'सच दीदी बडी सख्त है लगती तो बडी भोली भाली हैं।

अर्या नही-नही खालाजान की सुपुत्री जी अब और क्या बाकी है ? ववाहिक जीवन तो घोर कुभीपाक नरक है ? टाइम से आग्रो, टाइम से जाग्रो, समय पर खाग्रा समय पर सोग्रा वक्त पर बात करो वक्त पर अखबार पढा ग्रवसर देख के सास लो मौका देख के जम्हाई लो ! खालाजान की सुपुत्री जी, यह भी कोई जिन्दगी है ? एसी जिन्दगी से तो चुल्लूभर पानी म डूब मरना ग्रच्छा !

पर ग्राप कुभीपाक नरक में तो गामा पहलवान हो रह हैं फिर स्वग म क्या दहाडीसिंह बनेंग !

ग्रजी दहाडीसिंह क्या मुर्गासिंह बनेंगे !

'ग्रब समझ म ग्राया यह गालो की सुर्खी उन्ही की दी हुई है।

क्या आलादिमाग पाया है नखरेवाली ने उडती चिडिया को भाप जाती हैं !'

नखरेवाले के आग नखरेवाली ने तो हथियार डाल दिय !

'सच, क्या खूब ! इस सादगी पर तो हलाल हो जाते हैं सक्डा !

इसी प्रकार का हास्य विनोद घण्टो चलता रहा और हम जमीन से उठकर ग्रासमान की सर करने लगे। इतने उड इतने उड कि पख थक गय और नीद की जम्हाइया ग्राने लगी। इस पर वत्सला बोली अच्छा ग्रब आप सोइये, ग्रापका पलग तयार है।

पलग पर दूधिया सफेद चादर बिछी थी। रेशमी तकिये लगे थे सुदर मुलायम कम्बल पताने रखा था। सिरहाने की गोल मेज पर वीनस की भव्य प्रतिमा विराजमान थी प्लट से ढका हुआ पानी का जार और गिलास रखा था।

ग्रौर तुम ? मैंने उत्सुकतापूवक पूछा। मेरा तात्पय था कि वत्सला कहा सोयगी, क्योकि उसके पलग पर तो मैं विराजमान था।

मरी चिता मत करो मैंने इतजाम कर लिया है।'

कहा ?

साथ वाले कमरे म।

चारपाई और कपडा की व्यवस्था है ?'

सब है।

िन भर का थका मादा, डटकर भोजन किया हुआ, मैं पलग पर पडते ही सो गया। नीद का पहला दौर समाप्त होने पर मैं उठता हू और सिरहाने रखे हुए जार म से पीने के लिए पानी लेता हूँ कि तभी ख्याल आता है वत्सला कहा सोई होगी ?' मेरा प्रश्न मुझे साथ वाले कमरे की ओर ले गया। देखा एक आराम कुर्सी पर पैर पसारे और कम्बल ओढे वत्सला साई हुई है। कुछ पल उस सुप्त नीरव निस्प द सौंदय को देखता हूँ कि तभी वत्सला करवट लेती है और उसकी आखे अद्ध-उन्मीलित सी हो जाती हैं। वह बठती है पूछती है क्यो नीद नही आई ? नई जगह है न ! कही पलग मे खटमल तो नही हैं ?

खटमल-मटमल कुछ नही हैं पर तुम एसे कसे सोई हो ?

'नहीं मुझे तो ऐसे म ही नीद आ जाती है। तुम सोओ मरी फिक्र न करो।'

देखो तुम पलग पर चली जाओ। मैं आराम-कुर्सी पर सोने का आदी हूँ !

इस पर उसने मुझे ठेलकर पलग पर भेज दिया और मेरे कमरे का कु डा भी बाहर से ब द कर दिया।

इस प्रकार वत्सला के द्वारा कैद होकर मैं पलग पर जा लेटा। पलग पर लेट तो गया, पर मनोवेगो की तीव्रता के कारण नीद नही आ रही थी। सोच रहा था मैं दुहरी क़द में हूँ, एक तो वत्सला के द्वारा उसी के क्वाटर मे बदी हूँ दूसर उसने कु डा बाहर से ब द कर मेरी रही-सही आजादी को भी छीन लिया है। अब सिवाय करवटें वदलने के और कोई चारा न था। मन मे विचारो का तूफान उठ रहा था और शरीर में परवशता की लहर !

तभी मुझे क्या सूझा कि मैं वत्सला के कमरे मे चहल क़दमी करने लगा। कुछ पल मैं रवीन्द्र के कलात्मक मित्र की ओर एकटक देखता रहा, उनके ठीक सामने शरत् बाबू का चित्र था। मेज पर एक छोटे फ्रेम मे एक रेखाचित्र था, जिसके भाव अत्यन्त मुखर थे। प्रथम-दृष्टि मे यह तो स्पष्ट हो गया कि यह कोई नारी-आकृति है, पर मैं वहा पर उसके गरिमामय अस्तित्व को न समझ पाया, इसी कारण उसे हाथ मे उठा कर देखने लगा। उस चित्र के नीचे लिखा था शेष प्रश्न' की नायिका कमल ! इस चित्र की चित्रकार थी कनिका सान्याल और उसने यह चित्र वत्सला को भेंट किया था। तो 'शेष प्रश्न' की नायिका वत्सला और कनिका दोनो को ही प्रिय है मेरी कल्पना के तुरग अनुमान के पथ पर दौडे और तब मैं अनायास ही कमल और वत्सला की तुलना करने लगा। कमल मे विद्रोह वास्तविकता और प्रगल्भता है, किन्तु

वत्सला म अनुरागपूर्ण समरस हास्य विनोद और नारीमनोचित सहज सवेदना है। ये दोना पृथक आधारा पर अवस्थित हैं फिर भी इन दोना म कुछ समानता जरूर है तभी तो वत्सला ने अपनी मज पर उसे प्रमुख स्थान प्रदान किया है।

दूसरे पत्र मैं उस कमरे म किताबा की आलमारी के पास चला जाता हू और कुछ पुस्तकें उलट-पुलट कर देखता हूँ। बगला अग्रजी और हिन्दी का बहा साहित्य वहा विराजमान है। मन इनमें भी न रम पाया तब पैड उठाकर पत्र लिखने की सोचता हूँ। काउच पर बठकर आराम से पत्र लिखने के लिय ज्या ही पड खोलता हूँ त्योंही उसम से दो पत्र निकल पडते हैं। सौजन्य के नाते मुझे उन्हें नहीं पढ़ना चाहिये था पर मन न माना और मैं उन्हें खोलकर पढ़ने लगा। पहले पत्र म लिखा था

मेरे आराध्य

मेरे मन म आज एक बडा तूफान मच रहा है। आप से दूर होने का जितना ही सोचती हूँ उतना ही आपके निकट पहुँच जाती हूँ। आपके व्यक्तित्व म सम्मोहन म कुछ ऐसा चुम्बकत्व है कि मैं लोहे की नन्ही कील की तरह खिंची चली आती हूँ। ऐसा क्या होता है मेरे प्रिय?

अनेक बार सोचा कि तजपुर के फौजी अस्पताल को छोड दू और पुन कलकत्ता जाकर प्रैक्टिस करने लगू। अनेक बार मनसूबे बाधे किन्तु मन न माना और न जाने किस अनागत की प्रतीक्षा म मैं यहा रुकी हुई हूँ। एक बार आपसे जी खोलकर बात करना चाहती हूँ। अपने को आप तक पहुँचाना चाहती हू और आपके मन की उन्मुक्त भावनाओं को हृदयगम करना चाहती हूँ। पर क्या ऐसा अवसर आयेगा? मैं उसी की प्रतीक्षा म हूँ। मेरी प्रतीक्षा के फलवती होने के अनेक अवसर आये, पर मुझ में इतना विवेक ही न रहा कि मैं उनका उपयोग कर सकू।

आपको भुलाने की बडी चेष्टा करती हूँ पर मेरे मन और हृदय म एक विराट महाभारत छिड जाता है। हृदय किसी एकात प्रदेश में बठकर आपकी सुमिरनी जपता है और दूसरे ही पल मन विद्रोह करता है। जिसे अपना न बना पाई उसके लिये यह तडपन क्यो? इस प्रश्न का मेरे पास कोई समुचित उत्तर नहीं है इस मन मे किसी दूसरे पुरुष के लिये स्थान नही हो सकता यह तो तुम्हारा ही है ठुकराओ या प्यार करो!

यह पत्र मैंने इसलिये नहीं लिखा है कि मैं इसे आप तक पहुँचाऊ पर इसे लिखकर मन को शान्ति मिली है। यही इसका अंतिम आवाश्य है। इसे

डाकखाने की हवा न लगेगी न कोई डाकिया कभी अपने थले म बन्द कर इसे किसी को पहुँचायेगा ! इसको लिखने वाली एक अभागिनी है और वह अपने मन के जहर को इसे लिखकर प्रकट कर कर देना चाहती है। ए मेरे पत्र, तुम कहीं नही जाओगे ! तुम एक ऐसे पहाडी झरने के समान हो जिसका जल आस पास की पहाडियो मे बिखर कर अपना अस्तित्व खो बठता है जो किसी नदी का रूप धारण नही करता और जिसे सागर सगम का सौभाग्य कभी प्राप्त न होगा। तुम मेरे आराध्य जरूर हो पर मैं तुम्हारी कुछ हूँ यह भला मैं कसे सोच सकती हूँ ! ऐसा दुस्साहस मैं कभी नही करूगी ! कभी नही करूगी !

तुम्हारी
जो भी और जसा भी तुम समझो !

इस पत्र को पढकर तन बदन सिहर गया। उफ, कितना कुलिश पाषण हूँ मैं ! मैं उस चट्टान की तरह हूँ, जिसके चरणो म एक निझरिणी शत-सहस्र धाराओ में अपने आपको समर्पित करती है, पर सगदिल चट्टान उससे लशमात्र भी प्रभावित नहीं होती। उसकी कठोरता और निखर जाती है और वह जैसे उन कामनाओ की धाराओ से खिलवाड करने लगती है। क्या एसा ही हूँ मैं ? असह्य वेदना से निश्चेतन होकर माथा पकड लेता हूँ और लगता है कि नीहार के लिय यह ससार शून्य होकर क्षार-क्षार हुआ जा रहा है ! एक कुलिश पाषाण ने एक नवनीत-पुत्तलिका को कितना हैरान किया है ! मन के उमडते हुये भावो को तनिक समेट कर दूसरा पत्र पढता हूँ

ओ निष्ठुर

तुम्हें लेकर कभी कसे कसे अरमान सजोये थ, पर अरमानो का आगिया उजड गया। एक एक तिनका, घास फूस के छोटे छोटे खण्ड सब बिखर गये ! ऐसे बिखरे कि उन्हें सभालने वाला भी कोई नही।

ओ मेरे मन के अहेरी ! तुमने काया की कचन-मृगी को अपनी मधुर-दृष्टि के एक ही तीर से घायल कर दिया और तब वह कचन मृगी नितान्त अवश होकर मूर्च्छित हो गई। पर इसमें तुम्हारा कुछ अपराध है ऐसा तो मैं नही कह सकती। मैं जानती हूँ कि तुम विवश थे, वचनबद्ध थे और बचपन के गहरे धागे अज्ञात रूप में तुम्हारे भविष्य का निर्माण कर रहे थे। सब कुछ जानते हुये भी मैं तुम्हारे मोह से अपने आपको न बचा सकी ऐसी स्थिति में तुम्हें निष्ठुर कहने का भी मुझे अधिकार नहीं है, फिर भी कहती हूँ, चाहे यह मेरा दुस्साहस ही क्यो न हो !

तुम सुखी हो, तुम्हारा चमन बहारा से लबरज है ऐसे म मेरी कलुषित छाया, तुम पर नही पडनी चाहिये। मैं कलकिनी हूँ। मुझे किमी के बस-बसाय घर मे सेंध लगाने की कोई जरूरत नही ! पर मैं ग्रपन मन का क्या कर इसे लाख समझाया, ताडना दी पर यह तो नटखट बालक की तरह मचलता ही जा रहा है। जसे एक बालक किसी दूसर बालक के खिलौने को अपने हाथ मे लकर उस पर ग्रपना ग्रधिकार जतलाने लगता है उसी तरह मैं भी दूसरे की चीज को ग्रपना समझने की व्यथ चेष्टा क्या करती हू !

तुम किमी के हा पर मेरे क्या काई नही हा ! कोई नही हो ? सच कहना क्या कभी मेरी याद तुम्हे नही ग्राती तुम्हारे नयना का ग्रावाहन मुझे दिग्भ्रान्त कर देता है और तुम्हारी चचलतापूर्ण वार्ता मेरे विवेक को झकझोर देती है। एमी स्थिति म यदि मैं कुछ पल के लिये भ्रमित होकर तुम्हें ग्रपना समझने लगू तो इसम मेरा क्या कसूर है ? मन रे तुझे कितना समझाया उस घर न जा वहा तेरा प्रवेश निषिद्ध है पर तू तो उस नटखट बालक के समान है जो थाली में चद्रमा का प्रतिबिम्ब देखकर चद्र खिलौना लेने के लिए जमीन ग्रासमान एक कर देता है ! न न, मैं तुझे रोकती हू तू मत बिछल कहा मान न र मेरा तू मैं तेरी जननी हू। नही मानेगा क्या ?

—एक भ्रमिता

तो वत्सला क ससार को उजाडने वाला मैं ही हूँ मैं ही हूँ !

पर मैं अपना क्या करू ? मने कभी वत्सला के हृदय को आघात लगाने की चेष्टा नही की क्या यह उसी का परिणाम है ? वत्सला तुम्हें कसे समझाऊ कि मैं विवश हूँ किसी का हो चुका हूँ उसका जो बचपन से मेरे मन म ग्रा बठी थी। अब तुम्ही बताग्रो मैं क्या कर सकता हू ! म तुम्ह उदासीन नहीं देख सकता तुम्हारी वेदना मे मरा हृदय टूक-टूक हुग्रा जाता है !

मैं तुम्हारे लिये जो भी कर सकता हूँ उसके लिए प्रस्तुत हू, सदव तत्पर ! ग्राज्ञा तो दो सकेत तो करो यह नीहार तुम्हारे लिए क्या नही कर सकता ! पर तुम हो कि जड हा गई हो मुझे पराया समझने लगी हो ! यह उसका ग्रन्याय है जो दूसरे को अकारण ही निष्ठुर समझ बठी है। मेरे हृदय को चीर कर देखा वह कसा नवनीत कोमल है !

तुम्ह भुलाने की लाख चेष्टाए की पर क्या तुम भुलायी जा सकी ? तुम्ह भुला पाना सरल नही है उस आजानु प्रलम्बित केशराशि को क्या कभी भुलाया जा सकता है जिसमे स सौरभ की शत सहस्र धाराए उच्छल होकर उमडती

हैं। उन लोचनो के श्वेत कोयो को कभी विस्मृत नही किया जा सकता जिनमे अनुराग की रक्तिम शिराएँ फूटती है। उस स्वर के मादव से मेरा रोम रोम पुलकित हो जाता है उन क्रियाशील चचल चरणो को अविस्मरणीय ही कहा जायेगा जो कत्तव्य के पलो मे निरतर मेरा सहकार करत रहे हैं। उन उल्लासदीप्त कपोलो की अरुणिमा को, मेर सौदयचेता मन ने सौदय का अक्षय एव अनन्त आगार समझा है। मृगलोचनी तुम्हे भुला पाना तो है असम्भव, है असम्भव !

कुछ इसी आशय का पत्र मैंने उस पत्र युगल के प्रत्युत्तर मे लिख दिया। कह नही सकता कि कौनसी अज्ञात शक्ति उस वक्त मेरे मन पर हावी हो रही थी कि मैं यह सब लिख बैठा। लिखकर उसी पैड म चुपके से रख दिया और धीमे धीमे चहलकदमी करने लगा कि अकस्मात् मुझे द्वार पर किसी की पग ध्वनि अनुभव हुई। मैं आहिस्ता से उचक कर पलग पर लेट गया, करवट बदली और कम्बल ऊपर ले लिया। तभी मुझे कुडा खुलने की हल्की-सी आवाज हुई, मैं भी तन्द्रालिप्त हो सा गया और खर्राटे भरने लगा।

दूसरे ही पल मैंने महसूस किया कि वत्सला चुपके से कमर मे आई है और मेरे पताने आकर उसके कदम रुक गये है। कुछ देर मैं उसकी उपस्थिति को इसी प्रकार अनुभव करता रहा तभी कुछ कोमल, नवनीत सा कोमल मेरे चरणो को छू गया और दूसरे ही पल एक आसू की बद मेरे परो को पखार रही थी। वह शीतल अश्रु बिन्दु कुछ तप्त सा प्रतीत हुआ चरण जस झुलस गय हो मैं हडबडा कर उठ बठा और पूछा 'वत्सला यह क्या है? क्यो जी छोटा करती हो? मैं तुम्हारा हू केवल तुम्हारा!

वे विस्फारित लोचन सहसा बरसने लगे। उसकी घिग्गी बध गई, अश्रु-प्लावित अस्फुट शब्दो म उसने प्रकट किया तुम मेरे हो केवल मेरे झूठ मत बोलो, जिसके साथ तुमने परिणय की परिक्रमा ली हैं क्या वह तुम्हारी कोई नहीं है?'

क्या तुम्हारा होने के लिए समस्त ससार स विच्छेद करना होगा? ऐसा तो तुम भी नही चाहती हो, यह मुझे विश्वास है। डोरोथी पत्नी है, और तुम प्रेयसी। दोनो म कोई टकराहट नही होनी चाहिए। कल को मेरे मरीज समूचा का समूचा मुझे मागने लगे, तो बताओ मैं क्या करूगा। क्या उनका डाक्टर होने का यह मतलब है कि मैं किसी का कुछ नही हू। किसी का पुत्र हूँ किसी का भाई, किसी का पति और किसी का प्रेमी, यह अन्तिम विशेषण किसी से कम महत्व का है क्या वत्सला?' मैं उसकी आखो की गहराइयो म झाँक कर कहने लगा। देख रहा था कि मेरे उद्गारो का उस पर क्या असर

होता है, वह आखें मूंदकर मेरी बातें सुन रही थी। हठात् उसके उन्मीलित लोचन खुले क्योंकि मेरा भाषण समाप्त हो चुका था। उन्हीं उन्मीलित नयनों को मिचमिचाते हुए उसने कहा 'डाक्टर! कह जाओ, मैं सब सुन रही हूँ तुम्हारी बातों से मेरी आत्मा के घावों में मरहम जो लग रहा है! इस नये गौरव का अस्फुट बोध तो मुझे बहुत पहले से हो रहा था, पर मन दुविधाओं के जंगल में आकांक्षाओं के झाड़ झंखाड़ में फँसा हुआ रो रहा था। आज उसको एक आधार एक अभिव्यक्ति मिली है और सच कहती हूँ नीहार आज मैं निहाल हो गई हूँ, मेरे जीवन का प्राप्तव्य मुझे मिल गया है। मैं अपनी मंजिल पर पहुँच चुकी हूँ और अब जिन्दगी नया मोड़ चाहती है।

यह नया मोड़ क्या होगा मेरी प्राण!

बस अभी अव्यक्त ही रहने दो नीहार मैं अपने आप में अधिक स्पष्ट नहीं हो सकती हूँ। समय आने पर सब मालूम हो जायगा।

नारी की यह रहस्यमयता ही मेरे लिए एक विकट पहेली है। इस बुझाओ न!

उषा की अरुणिमा प्राची में फैल गई थी। वत्सला का अनुराग ही उसमें छलक रहा था, प्रणय का कपोत पंख फड़फड़ाकर उड़ चुका था उन्मुक्त आकाश में। अनन्त आकाश के प्रसार में महा अन्तराल में वह खग विलीन हो गया और तब मैं देखता रहा निनिमेष नयनों से प्रणय की उस अरुणिमा को, वत्सला की रक्त-रंगीन निराशा में जो कि उसके लोचनों को विलक्षण भव्यता प्रदान कर रही थीं!

न जाने मन में कैसा विचार स्फुलिंग उदित हुआ कि अनायास मैं ही वत्सला की ठोडी पकड़ उसके उन अनुराग-दीप्त लोचनों में अपनी प्रतिच्छवि देखने लगा। उन नयनों में न जाने क्या था कि प्यास बुझती ही न थी अतल गहराइयों में मन डूब-डूब जाता था और उस भाव से उन्मुक्त होने की कोई संभावना नहीं प्रतीत हो रही थी। वह भी लजीली-वधू के समान आरक्त-कपोला हो नितांत भावुक हो गयी थी और ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे आज उसे अपने अस्तित्व की सार्थकता की अनुभूति हो रही हो पर मेरी एक सीमा था मर्यादा थी, उससे आगे मैं न बढ़ सकता था और न ही वत्सला इतनी अनुदार हो सकती थी कि वह किसी अन्य के कोमल क्षेत्र में हस्तक्षेप करे! वे अनुभूति से उच्छल भावपूर्ण क्षण अपने आप में एक विलक्षण परितृप्ति लिये हुए थे यही उसके लिये काफी है ऐसा उसने प्रकट किया। अपनी और वत्सला की इस निरीहतापूर्ण विवशता पर पहले वत्सला के नयन सजल हुए और उनमें न भावनाओं के अमूल्य मोती छलक पड़े दूसरे ही क्षण मेरे पौरुष का अहं द्रवित

हुआ और मैं भी उसी के साथ टपा-टप आँसू बरसा बठा ! न जाने कसी विवशतापूण जड़ता हम दोना के व्यक्तित्व को घेरे हुये थी कि हम दाना अलग हो बिसूर बिसूर कर रोने लगे।

जब मन कुछ हल्का हुआ तो मैंने वत्सला से चाय की माँग की। 'ओह डाक्टर, मैं तो बिल्कुल भूल ही गई थी ! सुबह की किरणें न जाने कब स धरती पर उतर आई हैं और मैं हूँ कि चाय की सुध बुध भी न रही ! बस, अभी पाँच मिनट मे सब तयार हुआ जाता है।' यह कह कर वह दूसरे कमरे म चली गई और मैं अनागत भविष्य म झाँकता हुआ न जाने क्या-क्या सोचता रहा ! डौरोथी की मुझे याद आई और लगा कि वही मैं उसके प्रति अन्याय तो नही कर रहा हूँ, पर उसके प्रति अ याय यदि हो भी गया है तो कुछ क्षण के लिये वत्सला के प्रति भी तो याय होना ही चाहिय। किसी एक के प्रति याय, दूसरे के प्रति अ याय बन जाता है। हाय री पुरुष की नियति, कसे अनात रहस्यमय सूत्रा स तरा निमाण हुआ है और तने पुरुष के व्यक्तित्व को भी कसे आत्मविरोधी अवयवो से सम्पन्न किया है !

वत्सला चाय की ट्रे लेकर लौट आई थी और अपने स्नेह पूण हाथा से मेरे लिये प्याले मे चाय ढाल रही थी लगा जसे जीवन की उष्णता और मनोवेगा की तरलता ही ढालकर, वह मुझे चाय के रूप मे पिलायेगी। दूसर ही क्षण चाय का प्याला मेरे सम्मुख था और मैं उसे उठाऊ कि इसस पूव ही वत्सला ने वह प्याला अपने कोमल करो मे ले लिया और कहने लगी 'आज तो मैं आपको अपने हाथ से चाय पिलाऊगी। क्यो मजूर है न ?

दूसरे ही क्षण गम गम चाय मेरे होठो को स्पश कर रही थी और मैंने भी इसरार करते हुय दूसरा प्याला वत्सला के होठो से लगा दिया। यह कसा अद्‌भुत भाव विनिमय था, चाय-पान हमारी अनुभूति रजित प्रगाढ भावनाओ का प्रतीक बनकर, मन मे अनचीन्हे भावो को जगा रहा था, अवचेतन मन उपचेतना के विचित्र तटा से टकरा कर क्षार-क्षार हुआ जा रहा था ! हम बहुत देर तक इसी प्रकार चाय पीते रहे, और चाय पीते रह और चाय के प्याले न जाने कब 'भर भर के जाम पिलाये जा' के रूप मे परिणत हो गये, और तब हम एक उन्माद-से मे आ गये। सहसा वत्सला चिहुँक उठी 'आज का यह प्रात, अपनी विलक्षण अनुभूति के कारण, बडा प्रेरणादायी एव अविस्मरणीय बन गया है !'

'क्यो कल की रात, क्या कम अविस्मरणीय है जब किसी को 'कद होने पर मालूम हुआ कि यह 'कद' तो आजादी से भी अच्छी है !'

सच कहते हो डाक्टर, या मेरी भावनाओ की खिल्ली उडाते हो !'

हाँ, खिल्ली उडाने मे ही तो आसू टपका करते है !' —मैंने अपने वक्तव्य को आत्मीयता की पुट दी ।

'नही, मैं अविश्वास थोड ही कर रही हूँ ! अच्छा, एक वात वतलाओ यह प्रेम क्या हो जाता है !'

प्रेम एक सक्रामक रोग है और इसका बुद्धिजीवियो मे बडा प्रचलन है। जहा मन को आजाद छोडा कि वह कही-न-कही फँस जाना है यह फसना उसका स्वभाव है। इसके लिए कोई तकसगत आधार होना आवश्यक नही है।

अच्छा तो तुम्हारे मन म मरे प्रति यह भाव कब स पदा हुआ ?

यह वता पाना तो वडा कठिन है ! वल्कि आरम्भ मे कह सकता हू कि एसा कोई भाव मर मन मे नही आया था पर धीरे धीरे तुम्हारा निकट सम्पक और कलात्मक स्वभाव एव मार्जित रुचि मुझे अपनी ओर खीचन लग। मैं अनुभव करन लगा कि कुछ है जो चुम्बक की तरह मरे मन को खीचता है ! वत्सला, इसे अपना दुभाग्य कहूँ या तुम्हारा कि तुम मरे जीवन म तब आइ जब कोई इस दिल म घर कर चुका था ! कभी-कभी इसी भाव से मैं तुम्हार प्रति कठोर हुआ हू पर दूसर ही पल इस 'कठोरता की प्रतिक्रिया हुई है और तब मैंने अपन निश्चय का परिमाजन किया है। डौरोथी को मैं अब भी कम प्यार नही करता हूँ और उसके प्रति किसी बेवफाई का ख्याल मुझे भी सह्य नही है। पर मैं सोचता हूँ कि हमारी भावनाओ की इयत्ता क्या पत्नीत्व या पतित्व मे ही है क्या उससे परे मानव-जीवन की कोई गति नहीं है ?

है क्या नहीं तभी तो वत्सला और नीहार आज मिल रह हैं और बात कर रह हैं ! दीदी के प्रति आपके जो भाव हैं उनकी मैं कद्र करती हूँ और उनक भाग्य से एक मधुर ईर्ष्या भी होती है, पर मेरा कोई भी इरादा तुम दोनो के बीच आने का नही है। मैं तुम दोनों के पवित्र सबधो की रक्षा चाहती हूँ।

यही तो वह बात है जिसके आगे श्रद्धानत होने को मेरा मन उमड रहा है ! तुम कितनी निर्दोष और भव्य हो वत्सले !'

'मुझे इतना ऊचा न उठाओ डाक्टर मैं नारी हूँ अपनी सारी कमजोरिया और बुराइयों के साथ। ऐसे विचार मानस मन्थन के नवनीत हैं इन्हें मैं बड़ प्रयास के उपरान्त ही उपलब्ध कर सकी हूँ। इन्हें सहजलभ्य न समझो डाक्टर ! कहते-कहते उसके माथे पर पसीने की बूँदें झलक आई थी लग रहा था जसे उन बूदो म उसका मानस मथन प्रतिबिम्बित हो रहा हो !

मैंने उसे आश्वस्त करने की दृष्टि से अपने रूमाल से उन स्वद बिन्दुओं को पोंछ दिया और तब वत्सला सहसा ऐसी प्रमुदित हुई, जैसे सूय के ऊपर से बदली छंट गई हो और वह मुस्करा कर अपनी अनन्त किरणों की राशि को यत्र-तत्र सवत्र बिखेर रहा हो।

'तो अब तो इजाजत होगी डाक्टर घर की भी कुछ खबर लू और तब *हास्पिटल मे तो हम मिलेंगे ही।'*

'जान को मैं कसे कहूँ, मेरा काम बुलाना था और आपका काम जाना, सो आप अपने तई ही जा रहे है!'

तब भारी कदमो का लेकर मैं वत्सला से इजाजत लेकर चल पडा। वह मुझे कुछ दूर तक छोडने भी आई। चलते समय उसने आभार की भावना मे परिप्लावित नमस्कार किया। न जाने उस नमस्कार मे कसी व्यथा थी कि मन कचोट गया, मुझे लगा कि पार्थक्य के साथ ही जैसे मेरा व्यक्तित्व परिवर्तित हो गया है पिछले कुछ घटो का नीहार कुछ और था, और अब इस पल से जो नीहार अपने गतव्य की ओर गतिशील है वह पृथक व्यक्तित्व का धनी है। रास्ते भर सोचता रहा कि डौरोथी क्या सोच रही होगी, मम्मी और नीलिमा किस प्रकार चिंतित होगी और जब मैं डौरोथी को वास्तविकता बतलाऊगा तो वह क्या कुछ सोचेगी! मम्मी और नीलिमा को तो वास्तविकता बतलाने का प्रश्न ही नही है। इन्ही विचारो मे डूबा हुआ बगले के आहाते तक पहुँच गया। नीलिमा आहाते के बगीचे म गुलदस्त के लिये ताजे फूल तोड रही थी। मुझे देखते ही बरस पडी *'भया, कल रात तो हम बडी देर तक आपका* इतजार करते रहे, मम्मी और भाभी बडी परेशान हुइ और आप हैं कि अब चले आ रहे हैं!'

तो क्या अब भी न आऊँ! अरे भई मरीज देखने चला गया था, वहा से तुरत लौट पाना सभव न था इसलिये सोचा कि एक रात घर से बाहर रहकर भी देख लिया जाय।

आँगन म कदम रखते ही मम्मी मिली मुझे देखत ही उनकी चिंता के बादल छट गये और व डौरोथी की ओर उन्मुख होकर कहने लगी *'मैं कह न रही* थी कि सुबह होते ही नीहार आ जायगा! डाक्टरो की जिन्दगी तो ऐसी ही होती है!' मम्मी ने जो ढाल मेरे लिये प्रस्तुत की थी, उसी की आड लेकर सोफे पर बठते हुए अखबार की सुर्खियाँ देखने लगा। डौरोथी से चार आँखें करने का साहस न हो रहा था। सोच रहा था, सब कुछ उस रात मे ही

वताऊगा, अभी तो जसी स्थिति बनी हुई है उसी का लाभ उठाया जाय।

'आप अस्पताल कब जाइयगा' वसे मैं तो साच रही हूँ कि रात के थके-हार हैं इसलिय छुट्टी क्या नही ले लेते।

'नही, एमी क्या बात है, अस्पताल जाऊगा, पर कुछ दर से।'

यह सुनकर वह आवश्यक व्यवस्था हेतु रसोईघर म चली गई और मैं भी स्नानादि से निवृत होने के लिय बाथरूम म।

□□

२८

सुबह की पहली किरण के साथ ही एक टक्सी मेरे बगले के पोर्टिको मे आ लगी। उसमे से तपाक् से निकले डाक्टर प्रकाश गुप्ता और श्रीमती सुधीरा सायाल जैसे मेरे इगलड प्रवास का जीवन उन दोना के रूप मे, प्रात आविर्भूत हुआ हो ! दौडकर गले मिला मैं अपने अनन्य मित्र गुप्ता से और दूसरे ही पल श्रीमती सायाल नमस्कार की मुद्रा मे चचलता बिखेर रही थी ! इन दोना को साथ लेकर जब ड्राइग रूम मे आये, तो डौरोथी मम्मी और नीलिमा ने इन दोना का स्नेह-तरल स्वागत किया। पूछा 'क्यो बेटा, अच्छे तो हो ! बहू को तो मैं पहली ही बार देख रही हूँ हालाकि इसके बारे मे बहुत कुछ सुन चुकी हूँ इसलिये एसा तो नही लगता कि मैं किसी नई बहू को देख रही हूँ, पर फिर भी तुम दोना को आज देखकर मेरी प्रसन्नता का कोई ठिकाना नही है बूढे और स्नेहतरल हाथ नव-वधू पर आशीवचनो मे ढरकने लगे और उधर डौरोथी और सुधीरा इस तरह से मिली जैसे बरसो की बिछुडी हुई सखियाँ मिल रही हो।

'मालूम होता है आप लोग तो एक-दूसरे से पहले से परिचित हैं !' —मैंने ठिठोली करते हुये कहा।

'हाँ यार जब दोस्तो के दिल जुडे हुये हैं तो बीविया अलगाव कसे महसूस करेंगी, हम दोना की जान पहचान, इज इक्वलटू इन दोना की जान-पहचान !'

'सो तो है ही।' —नीलिमा ने अपनी दोना भाभिया को सरक्षण देते हुये कहा और वह दौड कर चाय की व्यवस्था के लिये चली गई।

मम्मी प्रकाश गुप्ता से बात कर रही थी तथा सुधीरा डौरोथी से। इसी सिलसिले मे सुधीरा ने डौरोथी को छेडा आपके साहब हरदिल अजीज हैं इन्हे जरा सभाल कर रखना। इनका इग्लैन्ड का जीवन बडा रोमान्टिक रहा है !'

इससे पूर्व कि डौरोथी कुछ उत्तर दे मैं बीच मे ही सफाई देने लगा 'रोमास ही तो जिन्दगी का दूसरा नाम है ! आप देखेंगी कि मैं यहाँ भी कम रोमान्टिक नही हू। तभी प्रकाश गुप्ता हम दोनो की बातो मे कूद पडा अरे भाई इस रोमास की लूट मे कुछ हिस्सा हमारा भी है कि नही ?'

भच्छा ता भाप लाग लाग सामान सहित और हम ता य भर ! —सुधीरा का हाथ पकडो हुए कहा डोगया । ।

'मरे भाभी यह मुगीरा क्या ना रही हो भाजकल का सामान ता सविता के साथ ही चलता है ! प्रसन्न मुसा न हाना पर जोम फेरा हुए कहा ।

खूब छनेगी जब मिल बठेंगे दीवाने दो गा यहाँ तो दीवाना के साथ दीवानियाँ भी हैं !

कहना था और नीम चढ़ा ! —भरे ताने का जवाब दम्त से दिया ।

तब तक गृह सविता के साथ नौनिमा चाय का ट्रे और खाने-पीने का सामान लेकर था गई थी ।

वठा भाभी यहाँ जा रही हो ? तब चाय पान के बाद घन्टा स हँसी मजाक चलता रहा और म मन-ही-मन मानता रहा कि य लाग भी कस विकट मोड पर माये हैं । लाल की दाढी म तिनका है भौर उस तिनके का निशान बात भी भा गय हैं पर प्रकट म मन गुप्ता से यही कहा गुलाबो ल्यिर कसी कट रही है ?'

बस मत पूछो यार दिन में दूध की नदियाँ बहती है भौर रात मे शहद की । जिन्दगी पुरनम चान्नी है । तुम भी यार यहाँ भा कर हा तजपुर अस्पताल मे ऊबड खाबड इलाका दुश्मन का भगर जसे इस धरती पर अब भा भूत बना नाचता है !

भमा यह क्या कह रहे हो ! इस इलाके की कीमत ता हम अब नये सिर से जानने लगे हैं पहल जिसे साधारण भौर बजर इलाका समझा जाता था वहा अब राष्ट्रीयता की नई फसल उग भाई है ! मुल्क के पहरेदार हैं हम भौर हम हरदम सावधान रहना है ।

तो पहरेदारा की बदूक से मुझे तो डर लगता है अगर युद्ध हुआ ता मैं तो तुम्हारे अस्पताल में दुबक जाऊगा । —गुप्ता ने ठहाका मारते हुय कहा हाँ यार तुम्हारी फ्रेंड का क्या हाल चाल है ?

भबे साँस ता लेने दे या सब एक ही साँस मे पी जायगा ! —मेरी नाटकीय मुद्रा पर डोरोथी और सुधीरा ने स्लाइस का टुकडा काटा भौर बीच म ही जोर से हस पड़ीं जसे कह रही हो कि इन लोगो दोस्तो की भी खूब घुटती है !

फ्रेंड की बात को दरअसल म टालना चाहता था पर प्रकट मे यही बोला

फ्रेंड को बात बीबियों के सम्मुख नहीं किया करते। इन्हें सन्देह होने लगेगा।'

'अच्छा, तो यहां भी आपकी क्प में सुर्खाब का पर है!'

'नक्करखोरे से कहीं शक्कर छूट सकती है!'

'भाभी, जरा सुधीरा को लेकर दूसरे कमरे में चली जायें, हम जरा प्राइवेट बात करना मांगता है।' —प्रकाश गुप्ता ने उन दोनों को धकेल दिया, मम्मी और नीलिमा पहले ही जा चुकी थीं।

'अरे यार तुम इतने बसब्र क्या हो? अभी आन की देर नहीं हुई और छेड़ बैठे फ्रेंड की बातें!'

'फ्रेंड की ही तो बातें कर रहा हूँ, दुश्मन के बारे में तो नहीं पूछ रहा। प्रकाश गुप्ता ने सफाई देते हुए कहा।

नहीं आजकल दुश्मन की बातों में अधिक दिलचस्पी लेनी चाहिए!'

दुश्मन की बातों में दिलचस्पी लेने के लिए तो सारा जहान है अपन तो फ्रेंड की बातें ही करेंगे। हाँ डाक्टर वत्सला का आजकल क्या हाल है?'

तब मुझे इधर के सारे उतार चढाव प्रकाश को सविस्तार बताने पड़े जिन्हें सुनकर उसने इस प्रकार टिप्पणी की अरे डाक्टर तुम हो यार पूरे चुगद! जमाना कितना बदल गया है, पर तुम अब भी वही दकियानूसी विचार सीने से चिपकाये चलते हो। उस बेचारी को क्या तड़पाते हो? उसे निहाल कर दो ना बख्श दो उसे उसकी मोहब्बत!

' और फिर डौरोथी का क्या करूं? क्या उसके प्रति अन्याय और गरवफादारी न होगी?

' आ हो, बड़े न्यायी और वफादार बने फिरते हो! ऐसा सुनहरा मौका आया और तुम निकल आये जल में से कमल की तरह! हो तुम पूरे अफलातून। मैं होता तो उसे निहाल करके ही आता!'

अच्छा यार, तो यह भी तुम्हारे लिए छोड़ता हूँ, तुम भी क्या कहोगे कि मिला था कोई!'

हाँ तो हम जिन्दगी भर झूठे दोने ही चाटते फिरेंगे ना मियां ना अपना बला खुद सभालो!

जिसे तुम 'झूठा दोना बताते हो वह तुम्हारी कसम परम-पवित्र गंगाजल है, अपने मित्र पर यकीन करो पर हां, हम किसी के बारे में ऐसी हल्की बातें नहीं करनी चाहिएं।

'क्या खूब बिल्ली सबका चुहिया मारकर चली हज्ज करने !'

'रहम करो गुप्ता, रहम करो न यह बिल्ला है न भूरा दाना ! यह तो नवनीत पुत्तलिका है।'

जरूर दाल में कुछ काला है यह भक्ति क्या उमड रही है ? भाभी से शिकायत करनी होगी।

तुम शिकायत करो या न करो तथ्य को पलटा नहीं जा सकता।

यही तो मैं कह रहा हूँ।

अच्छा यार छोडो भी इस विषय को तुम अपना हाल बताओ।

तब गुप्ता ने विस्तार से विगत डेढ़-दो साल का इतिवृत्त बताते हुये अपने वक्तव्य को इन शब्दों के साथ समाप्त किया नीहार नारी स्वभावतः शंकाशील होती है वह सम्पूर्णतः पुरुष के व्यक्तित्व पर हावी होना चाहती है। सुधीरा भी इसका अपवाद नहीं है।

चूंकि मुझे ड्यूटी पर जाना था इसलिए अधिक विवाद में न पडते हुए मैंने केवल इतना ही कहा *नारी के इस स्वभाव के लिए बहुत अधिक अंश तक* हमारी पुरुष-जाति ही उत्तरदायी है। हम स्वयं अपने आप में कहीं अधिक स्वतन्त्रता या स्वच्छन्दता का उपभोग करना चाहते हैं और यही बात नारी को अखर जाती है।'

□ □ □

रात को जब शयन कक्ष में प्रविष्ट हुआ तो सचमुच नये गुल खिल रहे थे। डौरोथी ने आज नित्य की तरह स्वागत नहीं किया उसके व्यवहार में कुछ काठिन्य कुछ तनाव लक्षित हुआ। वह मुंह फुलाये बैठी थी लगता था कि उसके कान भर दिये गये हैं। अब रूठी रानी को मनाना भी होगा कुछ इसी भाव से मैंने डौरोथी से पूछा क्या तबियत तो ठीक है न ? आज ऐसी-कैसी बैठी हो ?

जरा सर में दर्द है और कोई बात नहीं ! उसने जवाब दिया। मैंने उसके सर पर हाथ लगाया तो मालूम हुआ कि वह सचमुच ही बडा गर्म था। मैंने कहा डाक्टरनी होकर भी तुरन्त इलाज क्यों नहीं किया ? चलो एक गिलास पानी ले आओ मैं अभी दवा देता हूँ। —यह कह कर मैंने उसे कोडोपाइरिन की टिकिया दे दी और हल्के हाथ से उसका माथा सहलाने लगा। देखता हूँ कि वह फफक फफक कर रोने लगी और मेरे माथा सहलाने का भी प्रतिकार करने लगी।

'आखिर बात क्या है रानी, किसी की बात से इस प्रकार नहीं भभक उठते हैं। मुझे भी तो कुछ बताओ।' मैंने इसरार किया।

नहीं आपको क्या बताऊं मेरी ही तकदीर का दोष है।'—वह फिर बिसूर-बिसूर कर रोने लगी।

'पहेली मत बनो रानी तकदीर को क्या हो गया है? मुझे बताओ तो'

इस बार उसने हिचकियो के बीच जो कुछ बताया, उसका आशय यही था कि प्रकाश गुप्ता और सुधीरा दिन भर ऊटपटांग बातें करते रहे हैं उन्होंने मेरे चरित्र को लेकर भी कुछ बातें कही हैं जिसके कारण डौरोथी के कच्चे दिल को बड़ी चोट लगी है। अपने विवरण के आखिर मे उसने जिज्ञासा की उस रात आप डाक्टर वत्सला के साथ रहे और हमें यही बताया गया कि देहात में मरीज़ देखने गये हैं। आखिर यह माजरा क्या है? क्या मैं इतनी पराई हो गई हूँ कि मुझसे हकीकत तक छिपाई जाय! मैं कौनसी रोकती हूँ अगर आपको वहां तसल्ली मिलती है तो रोज जाया करें!—उसकी बात में व्यग्य भी था और वास्तविकता जानने की उत्कट आकांक्षा भी अब मैं उसके मन्तव्य को पूरी तरह भांप गया था इसीलिए मैंने स्पष्टीकरण के लिहाज से कहा रानी अब यह मैं कैसे तुम्हें बताऊं कि मैं स्वयं तुम्हें सब-कुछ बताने को उत्सुक था पर घटनाएँ कुछ इस तेजी से घटी कि मैं तुम्हें बताने का अवकाश ही न प्राप्त कर सका और बात का बतगड़ बन गया!—तब मैंने उसे विस्तार से सब बातें कह सुनाईं और कहा कि अब तुम ही मेरी जज हो कातिल को चाहे जो करो! इस पर उसके सन्देह के बादल छँट गये और फिर वही प्रमुदित आभा उसके आनन पर खेलने लगी। इतना ही नहीं बल्कि वह भी मेरे ही साथ वत्सला के प्रति संवेदनशील हो गई और उसके दुर्भाग्य पर दुःखी होने लगी।

मैं सोचता हूँ, यह नारी का हृदय कैसा विचित्र है कुछ पल पूर्व जिसके प्रति सापत्य भाव था अब वही करुणा से उमड़ा पड़ रहा है! नारी, संभवत अपनी सुरक्षा चाहती है जहां वह निरापद है वहां वह मानवीय है और जहां उसका अस्तित्व संकट-ग्रस्त होता है वहीं वह भूखी बाघिन की तरह दहाड़ उठती है अथवा बिसूर बिसूर कर रोने लगती है। दोनों स्थितियों में स्वरूप का अंतर अवश्य है पर मूल मनोवेग एकसा-ही है।

उस रात डौरोथी के समर्पण मे विचित्र स्वाद और अनुभूति थी कुछ दिवस और रात्रियों का पार्थक्य हमें और नज़दीक ले आया था जैसे बादल छँट गये हों और अनुराग का उष्णतापूर्ण आदित्य अपनी प्रखर रश्मियों के

साथ शरद् के उस सुन्दर प्रभात को राशि-राशि आलोक से समुज्ज्वल कर रहा हो। उस मिलन म कसी प्रगाढ़ता थी, कसी दिव्य अनुभूति यह शब्दो द्वारा नही प्रकट किया जा सकता, दो प्राणो के बीच अन्तर का जो झीना आवरण था वह मिट चुका था और हम भिन्नगात्र होते हुए भी यह अनुभव कर रहे थे कि हम दोनो एक इकाई हैं और ससार की कोई शक्ति हम अलग नही कर सकती। कभी-कभी एक कृत्रिम बाधा या अवसाद भी दो प्राणो को अत्यत निकट खीच लाता है यह घटना इसका एक ज्वलत उदाहरण थी।

अगले दिन प्रात मैंने गुप्ता को चाय पर बताया कि उसकी हल्की फुल्की बातो ने क्या गजब ढा दिया है और मैं किस भयकर मुसीबत म फस गया हूँ। मैंने उसे तोड़-फोड की कार्यवाही के प्रति आगाह भी किया और समझाया कि बिगाडना जितना आसान है, उतना ही बनाना कठिन है। वह पहले तो मेरी तकरीर का आशय ही नही समझा और जब समझा तो ठहाका मारकर हँसने लगा।

भाभी इतने कच्चे दिल की हैं, मुझे नही मालूम था, मैं तो आदतन वसी बातें करता रहा था, मेरा कोई गभीर आशय थोडे ही था'—उसने सफाई देते हुए कहा।

जब डौरोथी सुबह का अखबार लेने वहा आई, तो गुप्ता ने उसे आडे हाथो लिया वाह भाभी सब बातें जड दी न आपने, आई डिड नाट मीन दट' (मेरा यह आशय नही था!)

अब आपके आशय अनाशय का तो थर्मामीटर मेरे पास नही है!' —डौरोथी ने किंचित् व्यग्य से कहा।

वाह भाभी, आखिर तो डाक्टर-पत्नी हो, ऐसा थर्मामीटर तो आपके पास होना चाहिए हम जसे मरीजो का आशय-ज्ञान उसके बिना कैसे सभव होगा!' —गुप्ता ने फिर फुलझडी छोड दी। फुलझडी छोडकर ही बस नही किया बल्कि जोर से हँसने भी लगा। मेरे इस मित्र मे बस यही बीमारी है किसी भी चीज को गभीरता से नही लेता। डौरोथी कोई जवाब न पाकर भाग खडी हुई।

अच्छा तो डाक्टर अपनी फ्रेंड से कब मिलवा रहे हो? अमा, हम कोई रोज तो आने से रहे, अब आये हैं तो चलो उनसे भी मिलते चलें!'

ना बाबा न कान पकडता हूँ। पत्नी को भडका दिया तो लेने के देने पड गये कही फ्रेंड तुम्हारे झटके पर चढ गई तो उसकी तो हड्डियाँ पसलियाँ ही टूट जायेंगी!'

कैसी बातें करते हो डाक्टर, मैं इतना बेरहम नही हूँ। यदि तुम नही बताओगे, तो हम कनिका से पता कर लेंगे। वह तो सुधीरा और वत्सला दोनो की रिलेशन (सबधी) है।'

'हा, यह बात मजूर है, पर जरा जबान को वश मे रखना और यदि सभव हो, तो मेरा प्रसग न छेड़ना।

' दखो, कोशिश करेंगे पहले से कैसे कमिट कर दें! (वचन दे दें!) फिर घडी के ६ बजाने पर मैं उठ खडा हुआ और अस्पताल जाने की तयारी करने लगा। नौ-साढ़े नौ बजे मैं सर्जीकल वार्ड म राउन्ड ले रहा था, वत्सला और कुछ सहकारी डाक्टर मेरे साथ थे। हर बेड के पास जाकर, वत्सला रोगी की स्थिति से अवगत कराती मैं सहकारी डाक्टरो को आवश्यक निर्देश देता और बढ़ जाता। अब वार्ड मे उतनी भीड-भाड न थी क्योकि अधिकाश घायल अच्छे हो चले थे या अच्छा होने के क्रम मे थे।

□□

आज डिनर के समय गुप्ता ने बताया कि वह वत्सला से मिल आया है और संयोग भी देखो कैसा कि जब हम कनिका के घर पहुँचे तो वत्सला वहां पहले से ही मौजूद थी। जब कनिका ने परिचय कराया तो वह प्रयास-पूर्वक ही अपनी हँसी रोक सका था और अपने मन के यह भाव कि वह तो कनिका से वत्सला का अता पता पूछने आया था बड़ी मुश्किल से दबा सका था। 'सो देखा डाक्टर, अपना तकदीर कितनी सिकन्दर है!' उसने अपने वक्तव्य के मध्य कहा था 'यार चीज़ बड़ा लाजवाब है!' 'तुम हो तकदीर के पुरे, तुमसे डाह होती है। —उसने अपने कथन के अन्त में जीभ का तरल होठों पर फेरा और मेरा आँखों में वत्सला की छवि ढूंढ़ने लगा।

क्यों लार टपकाते हो जो प्राप्य है उसी से सन्तुष्ट होओ। —मैंने नसीहत के लहजे में कहा।

डाक्टर बड़ी कलात्मक छवि है उन आयताकार नाचनों की जान कर-कर से भावों के मध-स्रोत उन नयनों में तरते हैं! यह कहकर उसने पूरा रसगुल्ला मुंह में रख लिया और बाद में प्लेट में बचे हुए रस को भी चाट लिया। मुझे याद हो आए वे दिन जब हलवाई की दूकान पर सकोरे में बचे हुए सारे रस को गुप्ता बड़ी बतकल्लुफी से पी जाता था! आज भी उसके स्वभाव में अधिक अन्तर नहीं आया है। विद्यार्थी जीवन से ही वह बड़ा रोमंटिक है लड़कियों की बातों में उसकी गहरी दिलचस्पी रहती है सो भला वत्सला उसकी नज़रों में क्यों न चढ़! सच सुन्दरता आँख पकड़ती है जैसे बन ठन के वह रही हो -लो हमें भी देख लो कैसे लगे हम? —इस प्रश्न का माकूल उत्तर प्रायः गुप्ता देता रहा है। पर वत्सला के सौन्दर्य में एक गाम्भीर्य है एक वेदना है, जिसने उसके रूप को एक अजीब निखार दिया है। गुप्ता ने वत्सला को देखा तो सम्मोहित हो गया पर वहां प्राप्यता के वातायन अवरुद्ध थे, मन मारकर रह गया!

क्यों सुधीरा से मनस्तृप्ति नहीं हुई?'—मैंने गुप्ता पर कटाक्ष किया।

यार तुम भी पूरे बौडम हो! पत्नी से कहीं इश्क होता है वह तो आवश्यकता उपयोगिता की वस्तु है, फिर उसकी सहज प्राप्यता उसके प्रति आकर्षण का

मद कर देती है। इश्क के लिए तो महबूबा चाहिए जो अप्राप्य हो जिस तक पहुँचने में काँटो का एक पूरा जगल पार करना पडे।'

'तुम हो बडे व्यवहारवादी, मैं तो पत्नी मे ही प्रेयसी ढूढता रहा हूँ। क्या पत्नी प्रेयसी नही हो सकती ?'

'हो क्यो नहीं सकती। पर ऐसा जरा कम ही होता है, दिन रात का निरतर सम्पर्क उसके आकर्षण को कम करता है और जब पत्नी माता बन जाती है तो बस मत पूछो, फिर तो पति उसके लिए 'सैकण्डरी (गौण) हो जाता है। सन्तान के बीच घिरी हुई वह पति की ओर ध्यान नही दे पाती और पति उसके लिए पूज्य-सम्माननीय अवश्य होता है, पर प्रेमल नही!

'बात तो तुम गहरी कह रहे हो गुप्ता पर तुम्हे य सब अनुभव कहा से हो गये ? अभी तो पिता भी नहीं बने हो!'

कोई आवश्यक नही है कि इस प्रकार के अनुभव वयक्तिक रूप में ही हो, दूसरो के अनुभवो से भी हम बहुत-कुछ सीखते हैं। मैं ऐसा बुद्धू नहीं हूँ कि इतनी जल्दी पिता बन जाऊ। बलिहारी है, तुम्हारे वैज्ञानिक साधनो की, जिन्होंने अभी तक तो बचाये रखा है। आगे की भगवान जाने!'

'अच्छा तो यह बात है, हाँ पत्नी और प्रेमिका में और क्या अतर होता है ? मैंने उसके विचारो को झकझोरा।

'सच, तुम जानना ही चाहते हो, तो कान खोलकर सुन लो एक वास्तविकता है और दूसरी कल्पना-मनोमुग्धकारिणी और रसवती। दोनो का अपना अलग अस्तित्व है और महत्त्व भी। जो आज प्रेयसी है, वह कल पत्नी बन सकती है, पर पत्नी प्रेयसी हो सकती है यह आज तक नही सुना गया। इन दोनो मे मौलिक अतर है।'

'तुम तो दोस्त इसी पर 'रिसर्च' (शोध) करो, तुम्हारे विचार सचमुच क्रांतिकारी हैं'—मैंने चुटकी लेते हुए गुप्ता की तारीफ की।

जब तुम किसी विश्वविद्यालय के वाइसचासलर हो जाओगे, तो बन्दे को आनरेरी डॉक्टरेट दे देना, तुम्हारे गुप्ता दौडे-दौडे आयेंगे।'—गुप्ता ने मजाक किया, पर उसकी मजाक मे भी हकीकत झाक रही थी।

हा तो बात मौलिक अन्तर की चल रही थी।'—मैंने गुप्ता को याद दिलाया।

पत्नी एक आवश्यकता है और इसी के आधार पर विवाह-सस्था टिकी हुई है। पर पुरुष की कामनाओं की यह इति' नहीं है। पुरुष का मन भटकता है।

जब कभी चौदहवीं का चाद दिखाई दे जाता है तो उसे एक ताजगी, एक दिव्य स्फूर्ति अनुभव होती है और वह उसी के पीछे दीवाना हुआ फिरता है। यह प्रवृत्ति सब लोगो मे समान रूप म नही पाई जाती कुछ दब्बू और कायर होते हैं कुछ दिलेर और पौरुषमय। कुछ अपने मन की भावनाओ को परवान चढाते हैं, पर अधिकाश कोल्हू के बल की तरह जिन्दगी भर आँखो पर पट्टा बाँधे एक ही घेरे मे चक्कर काटते रहते हैं।'

लेकिन यह बात तो पुरुष पक्ष की है कुछ नारी-पक्ष के बारे म भी बताओ महात्मन्।'—मैंने अपने डाइनिंग रूम के महात्मा का प्रबोधन किया।

'हा यह प्रवृत्ति नारी म भी बीज रूप म पायी जाती है पर वह तो पुरुष से भी अधिक कायर होती है। उसके मन पर धर्मशास्त्र नतिकता और सतीत्व का इतना बोझ रहता है कि वह प्राय इससे उबर नहा पाती! पर जो नारी निभय और उन्मुक्त होती है वह इन शिलाओ को अपनी छाती पर से उतार फेंकती है पर जानते हो उसे हमारा समाज क्या कहता है विलासिनी कलंकिनी, कुलागार और न जाने क्या-क्या। समाज पुरुष की उच्छृंखलता को सहन कर सकता है पर नारी के सम्मुख तो उसने ऐसी लक्ष्मण रेखा खीच रखी है कि उसके उलांघते ही अपयश और कलक का रावण उसका अपहरण कर लेता है और तब समाज खूब नमक मिर्च लगाकर और प्रच्छन्न रूप में खूब रुचि लेते हुए ऐसे मामलो का विरद चहुँदिशि मे मुखरित कर देता है। यह पुरुष का स्वभाव है और नारी उसी का अन्धानुकरण करती है।

'क्यो करेगी नारी किसी का अन्धानुकरण क्या उसकी बुद्धि का दिवाला निकल गया है? —सुघोरा ने हमारी शास्त्र चर्चा म परमाणु विस्फोट किया।

नहीं महारानी जी गलती माफ हो, मैं जरा बहक गया था।'—गुप्ता के इस रूप को देखकर मैं हँसी न रोक सका और प्राय खिलखिलाते हुये बोला 'हाँ, कहो न यार, आई डिड नाट मीन दट। (मेरा यह आशय नहीं था।) और उसे धौल मार कर सोने के लिए भेज दिया।

☐ ☐ ☐

अपने बड रूम म आकर देखा तो डौरोथी पलग पर लेटे हुए ही कोई पुस्तक पढ रही थी। मेरे कमरे म कदम रखते ही बोल पडी आज तो बडी घुट-घुट के बातें हो रही थीं, आखिर ऐसा मधुर प्रसग क्या था?''

'अरे गुप्ता को तो तुम जानती हो वह पत्नी और प्रेयसी की व्याख्या कर रहा था!

और आप रस ले-लेके सुन रहे थ। उसका निर्व्याज कटाक्ष अचूक था।

'हा, सो तो है ही, मेरे स्थान पर कोई भी होता तो उसकी बातो मे रस ही लेता। तुम भी एक दिन उसकी बातें सुन लो तो उपन्यास पढ़ना भूल जाओगी।'

'भगवान् बचाये उन बातो से वे तो सक्स, रोमास और एडवें चर के अलावा कुछ बोलते ही नही। ऐसी बातें तो आपको ही मुबारक हो।'—उसने फिर प्रच्छन्न व्यग्य किया।

'सच बताओ डार्लिंग तुम्हें ऐसी बातें कतई पसन्द नही ?

पसन्द क्यो नही है, पर उनकी मात्रा और अवसर भी तो देखा जाना चाहिए।'—इस बार उसके कथन में आक्रोश था क्योकि उसकी सजल दृष्टि घडी पर केन्द्रित हो रही थी, जिसमे कि ११ बज कर १० मिनट हो चुके थे।

' डार्लिंग, ऐसे अवसर कौन से रोज रोज आते हैं, ऐसी मुलाकातें तो साल छह महीनो में कहीं हो पाती हैं।'—मैंने डौरोथी का प्रबोधन किया।

' तो क्या दिन मे आपकी बातें नही हो सकती ?'

'अब यह तुम्हें कैसे बताऊ कि बातें रात म ही जम पाती है अच्छा छोडो इस विवाद को, आओ कुछ प्यार कर लें।'—यह कहकर मैंने उसके अरुणिम कपोलो पर एक चुम्बन जड दिया और उसे प्रगाढ आलिंगन-पाश मे बाध लिया। समर्पण की उस वेला मे उसका आक्रोश प्रतीक्षाजन्य जडता और विवादी प्रकृति—सब शान्त हो गये थे, और हम निद्रा की गुहा मे न जाने कब निश्चेतन हो सो गये!

□ □ □

सुबह जब मैं वार्ड में राउन्ड लेने के लिए जाने का ही था, तभी चपरासी ने एक एक्सप्रेस लिडिवरी लाकर दी यह वत्सला का पत्र था, क्योकि लिफाफे के कोने पर बडा सा 'वी' बना हुआ था। पुन अपने कमरे मे गया और लिफाफा खोलकर पढने लगा

डाक्टर साहब,

उस रात्रि के मधुर सम्पर्क के लिए मैं अनेकश आभारी हू। मुझे स्वप्न मे भी विश्वास न था, कि ऐसा भी हो सकता है। मुझे अपने जीवन का प्राप्य मिल गया है और साथ मे दिशा दर्शन भी। मैंने निश्चय किया है कि अभी दो माह की छुट्टी लकर अपने घर कलकत्ते चली जाऊँ और दो माह बाद यदि आपको मेरा त्यागपत्र मिले, तो आश्चर्य न कीजियेगा!

यहा, न जाने क्यो मन उचट गया है और अब परिवतन चाहने लगी हूँ। इस अवधि मे आपसे जो माग दशन स्नेह और सीख मिली है उसके प्रति आभार व्यक्त करन को मरे पास शब्द नहीं हैं। मैं इतना ही कह सकती हूँ कि आप से जो कुछ सीख पाई हू उसका शतांश भी यदि जीवन में चरिताथ कर सकी, तो अपने आपको कृतकृत्य समझूगी।

मरी कामना है कि आपकी सदिच्छाएँ, मरे माग का आलोक बनें और आपकी मानवता, परदुखकातरता एव कत्तव्यपरायणता से यदि मैं कुछ लाभ उठा सकी तो अपने जीवन को धन्य समझूगी। साथ का आवदन अपने अनुमोदन क साथ कृपया कार्यालय मे भिजवाने का कष्ट करें।

दीदी को स्नेह, मम्मी को सादर प्रणाम और नीली का ढेर सारा प्यार और आपको भी क्या-कुछ मैं दे सकती हूँ ? शायद नहीं पर अभी इतना ही ग्रहण कीजिए।

खुश रहो अहलेवतन हम तो य चले अलविदा !

आपकी

वत्सला।

वत्सला क पत्र ने एक डायनामाइट की तरह मरी समग्र अत प्रेरणा शक्ति और उल्लास को झकझोर दिया और मन मे अनायास ही ऐसा आलोडन विलोडन होन लगा कि मैं निश्चय नहीं कर पाया कि आगामी पलो मैं क्या कुछ होन वाला है। भविष्य क विचित्र स्वप्न चेतना के तट पर उदित हाने लग और मैं उस बीहड जगत में ठीक उसी तरह खो गया जसा कि एक हिरन शिकारी से बचन के लिये बीहड अनजान जगत में खो जाता है !

उफ ! वत्सला के प्रति अनजाने रूप से जो अन्याय मुझसे बन पडा है उसकी अन्तिम परिणति क्या यही है ? मुझे लग रहा था कि उसका त्यागपत्र मर लिये आश्चय नहीं होगा क्योंकि इन सभी घटनाओं की स्वाभाविक परिणति उसके चिर विच्छेद में ही होती है। इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं सोचा जा सकता कभी-कभी मन इतना अवश और पराधीन हो जाता है कि हम चाहत हुये भी कुछ नहीं कर पात। क्या ऐसी ही मानसिक स्थिति मे मैं इस क्षण बन्दी नहीं हूँ ! जल्दी जल्दी अपने काम को निबटाया और एकात प्राप्ति के उद्देश्य से आज समय से कुछ पहल ही अपने बगले पर लौट आया। मन की उधेडबुन चेहरे पर स्पष्ट परिवर्तन हो रही थी क्योंकि डोराथी से जब मरा साक्षात् हुआ तो वह अचानक ही पूछ बठी थी आज आपको क्या हो गया ? चहर पर हवाइया क्यो उड रही हैं ? तबियत तो ठीक है न ?

उत्तर में मैं क्या कहता, सिर्फ इतना ही कहा 'हाँ, तबियत कुछ नासाज है, तुम चाय के लिये कहकर जल्दी ही मेरे पास आ जाओ।' और तब निढाल होकर सोफे पर लेट गया। कुछ ही पलो मे डौरोथी लौट आई और मेरे गर्म माथे पर हाथ फेरने लगी, उसकी चचल अँगुलियाँ मेरे बालो मे कपन उत्पन्न करने लगी जैसे वह मेरी सम्पूर्ण वेदना को उन बालो के माध्यम से निकाल देना चाहती हो। कुछ प्रकृतिस्थ होने पर मैंने कहा 'डार्लिंग, आज एक बडी घटना घट गई है और उसी का यह असर है।'

कहिये न, आप तो पहेलिया बुझा रहे हैं, आखिर बात क्या है?'

'कहना तो चाहता हूँ, पर कह नही पाता हूँ! सोचता हूँ, न जाने तुम क्या-कुछ सोचोगी।'

'आप बड़े वसे हैं आप इसकी चिन्ता ही क्यों करते हैं कि मैं क्या सोचूगी? जल्दी से कह क्यो नही देते?'

'सच।' और तब अनायास ही मेरे मुह से निकल पडा 'अच्छा सुनो, सुनाता हूँ। दिल को काबू में रखना।'

'आप कहिये भी, परिणाम की चिन्ता बाद मे कर लीजियेगा।'

' वत्सला यहा की सर्विस से त्यागपत्र देना चाहती है, उसका मन उचट गया है, और वह कलकत्ता चली गई है।'—इस सूचना के भाष्य के रूप मे मैंने वत्सला के पत्र को डौरोथी के हाथ मे पकडा दिया।

जब वह उस पत्र को पढ रही थी तो उसके चेहरे के चित्र विचित्र भाव उसी तरह टिमटिमा रहे थे, जसे आकाश मे तारे! कभी कोई भाव बुझ जाता, तो दूसरा चिनगारी की तरह भभक उठता, उस समय उसका मुख और उसकी भाव भगिया निश्चय ही मनोवैज्ञानिक अध्ययन की श्रेष्ठ उपादान थीं।'

पत्र पढकर वह बोली ' अच्छा तो यह बात है, आपकी सहायिका जो मझधार मे छोडकर कलकत्ता चली गई हैं।'

मैं समझ नहीं पाया कि इस वाक्य मे व्यग्य था या सहज भाव से प्रकट की गई एक चपल-उक्ति। जो कुछ भी हो, मैंने उस समय डौरोथी को 'कान्फीडन्स' (विश्वास) मे ले लेना चाहा और कहा 'डार्लिंग, तुम्हें ईर्ष्या हो सकती है और होनी भी चाहिये, पर यह बात सच है कि वत्सला के इस प्रकार चले जाने से मैं अपने अस्पताल के सामाजिक जीवन मे एक बडी भारी कमी महसूस कर रहा हूँ और यह कहने मे भी मुझे कोई हिचकिचाहट नहीं कि एक प्रकार से किंकर्तव्यविमूढ हो गया हूँ।'

'यह तो स्वाभाविक ही है और इसमें भला मुझे क्या ईर्ष्या होने लगी ! मैं डाक्टर बनकर आपका साथ तो दे नहीं सकती, आपने सचमुच मेरे से विवाह कर एक बड़ी भारी गलती की है आपकी जीवन-संगिनी तो कोई लेडी डाक्टर ही हो सकती थी ! अब भी समय है, परिमार्जन कर लीजिये !

हम नाना बातों में इतने विभोर थे कि हम यह भी याद नहीं रहा कि चाय ठंडी हुई जा रही है और उस समय पर पी लेना चाहिये। जब अनायास ही केटली डौरोथी की अँगुलियों की पकड़ में आ गई और वह प्याले में चाय को ढालने लगी तो मैंने महसूस किया कि अरे अभी चाय भी पीनी है ! यह घटना इस बात का प्रमाण थी कि मैं कितना हत चेतन हो गया था !

' डौरोथी तुम गलत समझ रही हो।'—मैंने चाय की एक घूट पीते हुये कहा, तुम अपने स्थान पर हो और वत्सला अपने, दोनों में कोई संघर्ष क्या अनिवार्य है ?'

नहीं संघर्ष की अनिवार्यता मैं कब कहती हूँ और वास्तव में यह है भी नहीं, पर कभी कभास यदि ऐसा विचार उभर भी आये तो क्या अनुचित होगा ?' —उसने प्रश्नवाचक दृष्टि से मेरी ओर देखा और टोस्ट के कुछ स्लाइस मेरे मुँह में देते हुए बोली आप भूलते हैं कि डौरोथी एक नारी है और यदि उसमें कभी कोई चिनगारी भड़क उठे तो यह सर्वथा स्वाभाविक ही समझा जाना चाहिये ! अभी तो मेरे में ऐसी चिनगारी नहीं भड़की है पर यदि भड़क जाय तो आश्चर्य नहीं करना चाहिये !'

'ओ रहस्यमय नारी, तुम क्या हो ? ईर्ष्या का ज्वलित-पुंज नहीं नहीं, ईर्ष्या की अग्नि पर तरल जल कणों की वृष्टि करने वाली श्यामल कादम्बिनी नारी का व्यक्तित्व कुछ ऐसे विरोधी तत्त्वों से बना है कि उसे किसी एक तथ्य के आधार में देखना उसके प्रति अन्याय होगा।

आप ठीक कह रहे हैं नारी के व्यक्तित्व की गरिमा और सजलता इसी में है कि वह आवश्यकता पड़ने पर प्रचण्ड ग्रीष्म की ज्वाला के रूप में भभक उठे और दूसरे ही पल उसके व्यक्तित्व के तरल जल-कण अश्रु बिन्दुओं के रूप में उस ज्वाला को बुझा भी सकते हैं।'

'डौरोथी तुम वास्तव में कवयित्री हो, और इसे मैं अपने जीवन का सौभाग्य समझता हूँ । यदि और कोई होती, तो न जाने मेरे बारे में क्या-कुछ सोचती !

आप इस तरह की मीठी बातों की घूस देकर मन मत बहलाइये। मैं जो कुछ हूँ सो हूँ आप अपनी बात कहिये।

मैं क्या वहूँ तुम सब समझती हो, और मेरा सकेत ही पर्याप्त है नारी का हृदय पुरुष के मन की बात को बिना बताये ही ताड लेता है। क्या मा अपने बच्चे की बात को नही ताड लेती क्या बहन अपने भाई की शरारत का नहीं समझ सकती, और क्या कोई प्रेयसी अथवा पत्नी अपने प्रिय की बात का अनुमान नही लगा सकती ?'

' तो आप भी कवयित्री के साथ कवि होते जा रहे हैं।' और यह कहकर वह मेरे माथे को इतनी जोर से सहलाने लगी कि मैं सचमुच कुछ उन्निद्र-सा हो गया और नारी के प्रेमल आलिंगन मे आबद्ध न जाने कब सो गया।

□ □

अस्पताल जाता हूँ, जसे हर चीज पुकार-पुकार कर कहती है वत्सला नही है वत्सला नही है।' प्रत्येक रोगी का चेहरा, ऑपरेशन थियेटर के औजार और सरकारी कर्मचारियों के मुखमण्डल पर मुझे एक प्रश्नवाचक चिह्न दिखाई देता है वत्सला क्यो नहीं है वत्सला क्या नही है ? वत्सला ने अपने अभाव से अपनी महिमा को शत-सहस्र रूप मे वृहदाकार कर लिया है और जसे इस अस्पताल का प्रत्येक कण यह महसूस करता है कि उसके भाग्य का प्रदीप आचल मे छिपाये, एक फ्लोरेस नाइटिंगेल (दी लेडी विथ दी लम्प) कही चली गई है कही दूर चली गई है ! मन को अनेक प्रकार से समझाता हूँ पर जितना समझाता हूँ उतने ही अगणित प्रश्न चिह्न अग्नि-शलाकाओं के समान मेरे मानस-सरोवर को आलोडित विलोडित करने लगते हैं। एक जादुई चिराग था जो इस अस्पताल की रोशनी को अपने मे समेटे हुय था और अब वह उससे विलग हो गया है, तो हम सब अपने आपको निपट अंधेरे मे महसूस कर रहे हैं।

'डाक्टर वत्सला कब आयेंगी ?'—एक रोगी मुझसे पूछता है।

'वे दो महीने की छुट्टी पर हैं। छुट्टी खत्म होने पर आयेंगी।'—कहने को मैं कह जाता हूँ पर मैं जानता हूँ कि वह नहीं आयेगी, वह स्वाभिमानिनी नारी अपने इस्पाती निश्चय को बदल नहीं सकती, और यदि वह आ गई तो यह ससार का सबसे बडा आश्चय होगा।

अन्तश्चेतना के तट पर कोई जोर-जोर से चिल्लाता है 'वह नही आयेगी !' मन की इसी उद्विग्न अवस्था में घर आया तो डोरोथी की परिचर्या से मन कुछ हल्का हुआ पर जब आँखें चार हुइ, तो वही शाश्वत प्रश्न और वही उसका शाश्वत उत्तर हम दोनों की आँखो मे लरज गया। वह कुछ देर मेरी

आँखों में आँखें डाले रही और तत्काल ही बोल उठी 'आप इतने खिन्न क्यों रहते हैं ? मैं वत्सला को बुला लाऊँ व मरा कहना नहीं टाल सकतीं ! मरीज की पुकार सुनकर उन्हें आना ही होगा।'

क्या बचपना करती हो द्रौपदी, आज तक जाने वाला क्या कभी लौटा है ?

'अच्छा लगाइये दाव इसी बात पर यदि वे मेरे साथ आ गईं तो आपको मेरी माँग पूरी करनी होगी और यदि वे न आईं, तो जो आप कहेंगे सो मैं करूँगी।

द्रौपदी तुम बड़ी उदार हो मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि यदि तुम्हारा कोई प्रेमी हो, तो क्या ऐसा ही उदार आचरण मैं भी कर पाऊँगा ? भई मुझे तो पूरा संदेह है मैं तो शायद उसका सिर फोड़ दूँ!

नर और नारी का यही तो अन्तर है एक त्यागमयी है तो दूसरा विस्फोटक ! आप नाहक मुझे इतना ऊँचा चढ़ा रहे हैं मैं जो कुछ हूँ एक नारी के नाते हूँ न एक तिल ज्यादा न एक तिल कम !

तुम बावन तोले पाव रत्ती ठीक कह रही हो !

'एक बात बतायेंगे ?

'पूछो।

'नहीं पहले वचन दीजिए।

अरे कह तो रहा हूँ कुछ कहो भी।

क्या आप बता सकते हैं कि वत्सला की तुलना में ऐसी क्या चीज है जो मैं आपको नहीं दे पाती ? यह मत समझियेगा कि मैं यह प्रश्न किसी ईर्ष्याभाव से पूछ रही हूँ यह तो एक स्वाभाविक जिज्ञासा है।'

'द्रौपदी काश ! तुम्हारा भी मेरे अतिरिक्त कोई प्रेमी होता तभी तुम इस तथ्य को समझ सकती थीं ! ऐसे प्रश्नों का हम बुद्धि द्वारा समाधान उपस्थित नहीं कर सकते।

'पर तब तो आप उसका सिर ही फोड़ देते !'

इसी प्रकार के कहकहों, व्यंग्य विनोदों और वास्तविकताओं के बीच वह दुपहरी डूब गई और हम जिस 'मोती' के लिये गोता लगा रहे थे वह हाथ में पड़-पड़ कर भी फिसल जाता था ! न जाने, जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ वाली स्थिति कब आयगी ! कदाचित् मेरे गहरे पैठने में अभी कसर है, इसी लिये मन के मोतों की खोज अभी अधूरी ही है। मैं मन के किनारे पर पड़ी असंख्य चमचमाती सीपियों को खोलकर देखता हूँ कि किसी सीपी में ईप्सित मोती मिल जाये पर घोंघों के सिवाय हाथ कुछ नहीं लगता ! □□

ग्राज दुपहर की डाक से मुझे वत्सला का पत्र मिला। एक विशेष रंग के लिफाफे ग्रौर उस पर मोती-सी लिखावट देखकर मैं फौरन ताड जाता हूँ कि पत्र की लेखिका कौन होगी। धडकते हुए दिल से उसे खोलता हूँ ग्रौर जल्दी में पहले सारे पत्र को सरसरी निगाह से पढ जाता हूँ ग्रौर फिर धीरज के साथ, उसके मनोवैज्ञानिक सदर्भ को समझते हुये दुबारा पढता हूँ

'ग्रादरणीय

बहुत दिनों से आपको लिखने की सोच रही थी पर वसी मानसिक ग्रवस्था प्राप्त न कर पाने के कारण, यह सभव न हो सका। ग्रापको सुनकर विस्मय भी होगा और प्रसन्नता भी कि मैंने कलकत्ता की एक मजदूर-कालोनी मे लेबर-क्लीनिक' के नाम से एक नई उपचार-सस्था खोल दी है ग्रौर उसी को ग्रपने शेष जीवन का मिशन बना लिया है। मन को जब किसी प्रकार शांति न मिल पाई तब एक सखी के कहने पर यही धधा सूझ बठा ! मुझे विश्वास है कि जब कभी ग्राप इसे देखेंगे, तो ग्रापको भी बडी प्रसन्नता होगी। चिकित्सा करने में मन को बडा सुख मिलता है जसे अतीत के घावो पर कोई ग्रनजाने-ग्रनचीन्हे मरहम लगा रहा हो !

इस बीच ग्रापको भुलाने की बडी चेष्टा की पर जब भी खाली होती हूँ तो ग्रापके मधुर सपर्क की स्मृतियाँ मन मे तरने लगती हैं ग्रौर तब मन की ठीक वही ग्रवस्था हो जाती है जसी कि ग्रनेक मछलियो के जल मे इकट्ठा होने और किसी के द्वारा चने डाल देने पर जैसी छीना झपटी मचती है ठीक वसे ही मेरे मन मे भी परस्पर विरोधी भाव जगते हैं ग्रौर एक दूसरे से उन मछलियो की तरह हा वे छीना झपटी करते हैं। बहुत बार सोचा कि एसा क्या था, जिसने मेरे हृदय पर ग्रमिट छाप डाल दी है और क्या यह सभव हो सकेगा कि मैं उस ग्रमिट छाप को धो-पाछकर विस्मृति के जल मे प्रवाहित कर सकू ? ग्रनेक बार ऐसे प्रयत्न करती हू, किन्तु जितनी भी बार मैंने यह प्रयत्न किया, वह चित्र वे स्मृतिया ग्रौर भी ग्रधिक मन मे उभर ग्राइ ग्रौर तब मेरे लिये इसके सिवाय और कोई चारा न रहा कि अपने मन के फफोला का इस पत्र मे फोडू ग्रौर कुछ हल्की होऊ !

ज्यों ज्यों अपने मन में भावों को तुम पर व्यक्त करती जा रही हूँ त्यों त्यों मन को एक अपूर्व सान्त्वना मिलती जा रही है। कहिये, आपको भी कभी मेरी याद आती है! डोरोथी जीजी के क्या हाल-चाल हैं? माता जी तो प्रसन्न होंगी और नीली शायद अपनी भाभी से ही उलझी रहती होगी। इन सबको मेरा स्नेह प्यार एवं ममता लुटा देना और कहना कि कभी-कभी तो वे इस अभागी को भी याद कर लिया करें।

आपकी जिन्दगी कैसी चल रही है? अस्पताल की कोई नई बात? कोई रोगी तो मुझे नहीं पूछ रहा था—आदि आदि अनेक जिज्ञासायें मन में उठती हैं क्या आप इनका हल कर सकेंगे? कभी कलकत्ता आयें, तो लेबर क्लीनिक' को विजिट करना न भूलें!

आपकी जो भी समझें
वत्सला!

पत्र को पूरा पढ़कर मेरा सम्पूर्ण व्यक्तित्व सिहर गया। मैं एक ऐसी हिरनी की कल्पना करने लगा जो किसी निर्दयी व्याध के तीर से घायल हो चुकी है और अनन्त मरुस्थल में किसी बीहड़ और अनजाने प्रदेश में आहत होकर गिर पड़ी है और देखिये ताज्जुब भी कैसा कि वही व्याध उस हिरनी को सहला रहा है, जैसे उसके क्षत विक्षत शरीर को अपनी स्नेहपूर्ण दृष्टि से स्वस्थ कर देगा। मैं विकट उलझन में हूँ और अपने आपको ठीक उसी दशा में पाता हूँ जिस दशा में सहस्रों वर्ष पूर्व अभिमन्यु ने अपने को चक्रव्यूह में पाया था! अभिमन्यु जैसी निष्ठा एवं सामर्थ्य मुझ में नहीं है, फिर भी अपने आपको आततायी शत्रुओं से घिरा पाता हूँ। क्या हमारी सामाजिक रूढ़ियाँ एवं मान्यतायें इन्हीं आततायी शत्रुओं के समान नहीं हैं? जीवन की स्वाभाविक धारा में न जाने कब से एक पाषाण खण्ड उलझ गया है और धारा का जल पल भर के लिये अवरुद्ध होकर उस पाषाण खण्ड की छाती को विदीर्ण करता हुआ आगे बढ़ जाता है और मैं सोचता हूँ कि क्या गतिशील जल जैसी सामर्थ्य मुझ में भी कभी आ सकेगी! हाय री नियति! तूने मेरी जीवन-पुस्तिका में गूढ़ लिपि में न जाने कैसे अबूझ लेख लिख दिये हैं! इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था कि नीली दौड़ती हुई आई और कहने लगी 'भय्या, भाभी बुला रही हैं।' और दूसरे ही क्षण नीले लिफाफे पर दृष्टि डाल कर पूछ बैठी 'किसकी चिट्ठी आई है?

मैंने उसे किसी तरह आश्वस्त किया कि वत्सला ने उसे बहुत बहुत याद किया है और वह जल्द ही चाहती है कि नीली अपने जीवन में किसी मांगलिक

अवसर पर उसे बुलाये। एक शरारत भरी निगाह से मुझे देखती हुई वह आरक्त-कपोला, मेरी युवती बहन वहा से अदृश्य हो गई। उसी के पीछे पीछे मैं भी डाइनिंग रूम की ओर चल पडा, जहाँ पर चाय पर मेरा इन्तजार हो रहा था। मम्मी ने मुझे परेशान-सा देखकर पूछ ही तो लिया क्यों नीहार, चेहरे पर हवाइया कसी उड रही हैं? तबियत तो ठीक है न! मैं कितनी बार तुझे कह चुकी हूं कि अपने बूते से ज्यादे काम न किया कर और तू है कि मानता ही नही!

'हा अम्मा, ये न जाने कसे खोये-खोये से रहते हैं कभी हँस कर बोलते ही नहीं, जसे कोई चिन्ता इन्हें भीतर-ही-भीतर साल रही हो!' डोरोथी न जले पर नमक छिड़क दिया।

बताता क्यों नहीं रे नीहार? वह को दिक क्यो कर रखा है? न समय पर खाना खाता है और न समय पर सोता है। मालूम होता है, तुम जसे ही किसी डाक्टर को देखकर किसी ने यह मुहावरा बनाया होगा फीजिशियन हील दाई सल्फ! (डाक्टर पहले अपना इलाज खुद करें!)'

नही अम्मा कोई ऐसी बात नही, तुम लोग नाहक ही कल्पनाओ मे डूब गई हो।' तनिक झुंझलाहट के साथ वहा पर मन मे जो चोर था, वह वास्तव म परेशान किये हुये था और उसे मैं भला कसे छिपा सकता था! एक निर्जीव यन्त्र के समान मैंने चाय पी एक दो बिस्कुट मुह म रखे और अखबार की सुर्खियों पर निगाहें दौड़ाने लगा अरे यह क्या! लेबर क्लीनिक की सचालिका अपनी उल्लेखनीय सवाओ क कारण राज्य सभा की सदस्या मनोनीत की गई हैं!' इस समाचार को मैंने कुछ जोर से ही पढा था और नीली तथा डोरोथी इसे सुनते ही मरे हाथ से अखबार छुडाकर पूरे समाचार को पढने लगीं। लिखा था 'डाक्टर वत्सला ने उपचार-सेवाओं मे एक उल्लेखनीय रेकार्ड कायम किया है। पिछले माह उनके अनवरत प्रयत्न के कारण मजदूर बस्ती की काया ही पलट गई है! कोई बालक बालिका या कोई स्त्री पुरुष इससे पूव कि गहरी बीमारी का शिकार हो, उनके द्वारा आरम्भिक स्थिति म ही चिकित्सा सेवाओ से लाभान्वित हुआ है और यही कारण है कि जो बस्ती बीमारियो की गढ थी, वहा स्वास्थ्य की पताका बड शान से फहरा रही है! उनकी इन्ही उल्लेखनीय सेवाओ के उपलक्ष्य मे बगाल के राज्यपाल के अनुरोध पर उन्हें राष्ट्रपति ने राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया है।

गुनत ही मम्मी ने समयोचित गनाह के रूप में मुझे निर्देश दिया कि मैं एक बधाई का तार तत्काल ही वत्सला के पते पर भिजवा दूं।

□ ◌ ◌

कनिका सायाल के परिवार में उसके बड़े भाई का विवाह है। इस मांगलिक अवसर पर प्रकाश गुप्ता भी सुधीरा सायाल के साथ आया है। उसने फोन से मुझे सूचित किया है कि वह आज रात्रि को मुझसे मिलने आ रहा है। मैं उसी की प्रतीक्षा में बैठा हूँ। अखबार के पन्ने पलट रहा हूँ कि चौक में कार के आने की आवाज गूंजती है। तुरन्त ही उन लोगों के स्वागत के लिए मैं और डोरोथी बरामदे में आते हैं। एक ठहाके के साथ गुप्ता मुझे जकड़ लेता है और सुधीरा सायाल विनम्र मुस्कान के साथ नमस्कार करती है। इस बार उसमें स्पष्ट ही एक परिवर्तन लक्ष्य किया : वह माता जो बनने वाली है! इसी निमित्त हम लोगों ने उसे बधाई दी और उस दिन की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करने की इच्छा प्रकट की जब वह पितृत्व के गौरव को अपने चंचल व्यक्तित्व पर ओढ़ेगा। सुधीरा में अवश्य परिवर्तन हुआ था पर प्रकाश गुप्ता वैसा ही चंचल हसोड़ और जीवनमय था! इस बार मुझे उसमें काम की व्यग्रता भी आभासित हुई जरूर हजरत की आँखें किसी से लड़ गई हैं! उसकी बातों से मैंने कुछ-कुछ ऐसा ही भाँपा और इसी को लक्ष्य कर मैंने उसे कहा क्या हजरत इधर कौन से नये गुल खिल रहे हैं!

जरा धीरज रखो सब्र का फल मीठा होता है तुम्हारे लिए ताजवाब समाचार लाया हूँ।

कुछ सुनाओ भी।—यह कहकर मैं उसके कंधे पर हाथ रखकर उसे अपने अध्ययन-कक्ष में ले गया। नीनी को निर्देश दिया कि हम लोगों की चाय वहीं पहुंचा दी जाय बाकी लोग डाइनिंग-रूम में ही चाय पीयेंगे। वह आँखों ही आँखों में हम दोनों की इस भेदभरी शरारत को समझ चुकी थी और तब उसने गहरी नजर के साथ स्वीकृति-सूचक सिर हिलाया।

कुछ ही देर में चाय अध्ययन-कक्ष में आ गई थी और हम चंचल गति से सर्राटे के साथ अपनी बातों की डगर पर अग्रसर हो रहे थे। सहसा गुप्ता ने मेरी पीठ पर धौल जमाते हुए कहा यार बड़ी मीठी मुसीबत में फंसा हूँ! न छोड़ते बनता है, न ग्रहण ही कर पा रहा हूँ! मुझे आये तीन चार दिन ही हुए हैं पर कनिका सायाल—बंगाल की लता मंगेशकर—मेरी बातों से इस कदर प्रभावित हुई है कि अपना दिल ही मुझे सौंपने को तैयार है! या निकट की

रिश्तेदारी है, इसलिये उसे ग्रहण करने मे एक मुसीबत अनुभव कर रहा हूँ, पर महसूस करता हूँ कि जादू वह है, जो सर पर चढकर बोले ।'

'बडे सौभाग्यशाली हो गुप्ता तुम, कनिका का सगीत तो अब कभी-कभी मेरे कानों में भी गूज जाता है । उसे जितनी मधुर एव सरस आकृति मिली है, उतना ही मधुर कठ भी ! तुम्हारे भाग्य पर ईर्ष्या होती है ।'

'तुम तो निरे बौडम हो, अच्छी-खासी चिडिया हाथ मे फँसी थी, सो उसे फुर से उडा दिया ! यहाँ तो देखो, कुछ ही दिनो मे चित लाते हैं । सकल पदारथ हैं जग माहीं भाग्यहीन नर पावत नाहीं !'

' हाँ यार, अपने राम तो कुछ ऐसे ही हैं । नीति और सदाचार का सारा गट्ठर अपने ही सिर पर लदा है ।'

'भ्रमा, तुम्हें किस बुद्धू ने डाक्टर बना दिया, शरीर विज्ञान की मामूली सी बात भी नहीं जानते सक्स इज ए बायलोजिकल अर्ज। (यौन चेतना शारीरिक आवश्यकता है ।)'

अब तुम चाहे जो कुछ कहो, यहा तो स्वभाव ही कुछ ऐसा जनाना पाया है कि एक घेरे को पार नही कर पाते !'

'तुम्हारे सिर पर कैसी कमबख्ती आई ! अच्छी-खासी लडकी को कलकते भगा दिया, और उसकी भी तक्दीर देखो कसी सिकन्दर निकली कि वह राज्यसभा की मम्बर नॉमीनेट हो गई । अमा अब वह बहुत बडी हस्ती हो गई है, उसकी कृपा-कोर के लिये बड-बडे मिनिस्टर और अन्य अनेक नेता हरदम प्यासे रहते हैं पर वह भी है तुम्हारी तरह बुद्धू ! वह तुम पर क्या कुर्बान हुई, बस सब कुछ खो बठी ! बडी तपस्विनी है वह ।'

' वह भी लाखो मे एक है विधाता ने उसे फुरसत में घडा है, उसका तन-मन सब विलक्षण हैं । मैं अब तक यह भी नहीं तय कर पा रहा हूँ कि मैंने उसके साथ अन्याय किया या न्याय ।'

तुम हो पूरे ढपोरशख, कहा की ईथिक्स ले बठे ! हम तो बहती गगा में हाथ घोना जानते हैं और उसको काठ का उल्लू समझते हैं जो घर आई गगा का तिरस्कार करे ! अक्सर वत्सला मेरे मडिक्ल कॉलेज म मजदूर-कालोनी के 'सोरियस केसिज' लेकर आती है । खद्दर की घोती उसी का ब्लाउज पर फिर भी उसकी खूबसूरती उन कपडों में भी नही समा पाती ! यह जरूर है कि उसकी हसीन आँखो से एक मायूसी झलकती है । तुम आखिर उसे निहाल नहीं करोगे !'

'अच्छा गुनामो, तुम्हारी कनिका के क्या हाल चाल हैं !'

वह तो खिला हुआ कमल है, मुझ भौंरे को फाँस लिया है।

वह लाचार बन रहे हो कमल ने भौंरे को फांसा है या भौंरे ने कमल को। इसका इंसाफ तो हसीन की अदालत में ही हो सकता है।'

गरजती हुई आवाज़ कांपता हुआ जवानी का दरिया बरबस दावत देता है कोई प्यार की किश्ती आये और इस जल को सनाथ कर जाये !

अच्छा तो उस दरिया में आपकी किश्ती पहुंच चुकी है बड़े खुशकिस्मत हो तुम कि अथाह जल की तरी और गहराई तुम्हारे ही पल्ले पडी है।

अरे यार क्यों सीटियों पर पछाड़ियाँ मारते हो यहाँ किस काबिल हैं हम तो तुम्हारा ही दिया खाते हैं !

तेल को देखो तेल की धार को देखो य मुँह मसूर की दाल तुम हो सचमुच बड़े हरफनमौला—यह भी मेरा वह भी मेरा भानुमती ने कुनबा जोड़ा !

क्या बतायें डाक्टर सुधीरा तो माँ बनने वाली है इसलिये एक लम्बे अरसे तक हमारे काम की नहीं इसलिये दिल बहलाने को कुछ तो चाहिये !

अच्छा तो यह बात है एक बात तो बताओ कि चिरया फँस कैसे गई !

अरे यार इसका गुर तो हमसे सीखो। हम इस आर्ट में एक्सपर्ट हैं, उड़ती चिड़िया को वह तीर मारते हैं कि बेचारी घायल होकर हमारी गोद में गिर पड़ती है। बात या हुई कि कनिका ने एक दिन दर्द भरा गीत सुनाया हमने उसकी भरपूर तारीफ की।'

हाँ तो यह राज है आपकी कामयाबी का और वैसे भी तो आखिर तुम्हारी साली ही है कहते हैं कि साली आधी बीवी होती है।

अब तुम चाहे जो कुछ कहो चिरया अपनी गोद में है और पर फड़फड़ा रही है बड़ी शोख और रंगारंग पसन्द है। हर वक्त फुलझड़ी की तरह बरसती ही रहती है। उसका मोम सा मन और कसा हुआ तन किस नौजवान को घायल नहीं करता ! बहार में किसी वाटिका को देखा है ? बस ठीक वैसी ही हालत है उस हसीना की। फूलों का पराग, जवानी की रल-मेल और तमन्नाओं की बांसुरी, हर वक्त उसके कंठ में गूंजती रहती है उसके चुम्बन और आलिंगन में उन्माद है एक मदहोशी है बला की नाज़नीन है वह।

अरे यार तुम तो शायर होते जा रहे हो !

हुस्नपरस्ती का आखिरी अंजाम यही है ! हमने अपने मन की किश्ती के

पाल बाँध दिये हैं और काँपते हुये जवानी के दरिया मे लगर डाल दिया है !

हमारी बातें न जाने कब तक चलती, कि नीली ने आकर सूचना दी कि सुधीरा भाभी, भया का याद कर रही हैं, और तब हम उस वार्ता को स्थगित करने के लिये विवश थे।

☐ ☐ ☐

मैं जब सोने के कमरे म गया, तो डौरोथी सो चुकी थी। मैंने भी एक किताब उठाई और उसे पढने का उपक्रम कर ही रहा था कि डौरोथी अचानक उठ खडी हुई और मेरे पास आकर बोली कहिये, आपके मित्र क्या-क्या नेकी बघार रह थ, पूरे शेखचिल्ली हैं।'

' अरे यह क्या तुम तो सो रही थी, अचानक उठ कसे बठी ?'

'सो कहाँ रही थी आपका इन्तजार करते-करते आँख लग गई थी और ज्योही कानो को कुछ आहट मिली कि मैं उठ खडी हुई हा तो गुप्ता जी बडी दूर की हाकते हैं क्या-कुछ कह रहे थे ?

'क्या बताऊ ? एक बात ता है नही वहा तो दुनिया भर की बातें हुइ पर मुख्य बात यह थी कि हजरत कनिका से आख लडा बठे हैं और उसी को लेकर जमीन आसमान के कुलावे मिला रहे थे।'

'उनके पास इसके सिवाय और बात करने को कुछ और नही है क्या ?' —डौरोथी ने कुछ तीखी आवाज मे प्रश्न किया, जसे वह उत्तर की प्रतीक्षा न कर रही हो, और केवल शाब्दिक बमबारी ही उसका उद्देश्य हो।

'तुम नाहक खफा होती हो, उसकी बातें सुनो, तो तुम्हे भी बडी दिलचस्प लगें।'

'अच्छा तो यह बात है। आप भी अप्रत्यक्ष रूप से उससे सहानुभूति रखते हैं कुछ आपका भी इरादा उस राह पर जाने का हो रहा है क्या ?'

'अरे, वह राह हम जैसो के लिये बन्द है उस पर तो गुप्ता जसे-ही जा सकते हैं।'

' पर उनके मिशन (?) के साथ आपकी हमदर्दी तो पूरी है।'

'अब चाहे जो कुछ कहो, उसकी बातें बडी मिच ममालेदार होती हैं।'

कुछ हमे भी सुनाइये देखें वह चटनी हमें कसी लगती है !

'अब तुम्हें क्या बताऊ कभी खुद ही सुन लेना। यह कहकर मैंने प्रसग बदलने का सकेत किया।

☐ ☐ ☐

अगले दिन प्रात जब मैं अस्पताल के लिये तैयार हो रहा था, तो देखता हूँ कि पोच म आकर एक कार खडी हुई है और कनिका सान्याल, गुप्ता के साथ उतर कर इधर ही आ रही है।

स्नेहपूर्ण अभिवादन के बाद उसने बतलाया कि कल सध्या को सात बजे, ब' भाई के विवाह के उपलक्ष म प्रीतिभोज है और हम सबको उसमें उपस्थित होना है।

कहो कनिका आजकल क्या हाल-चाल हैं? तुम्हारा सगीत का कार्यक्रम भी चलेगा ना?'

वे गायें चाहे न गायें पर इनके गीतो के रेकाड उपयुक्त समय पर लगाना मेरा काम है और मैं तुम्हें आश्वासन दे सकता हूँ कि किसी भी रूप म तुम मायूस नहीं होओगे! कनिका के स्थान पर गुप्ता ने ही जवाब दिया और तब हम सब खिलखिला कर हँस पडे।

यह भी खूब रही तब तो बेचारी कनिका को बडा सकोच अनुभव होगा!

नहीं ऐसी क्या बात है दूसरों के रेकाड के साथ यदि एकाध मेरा भी रेकाड लग जाये, तो इसमें आश्चय ही क्या है!'—यह कहकर कनिका गुप्ता की आँखों में झाँकने लगी, जसे कोई शरारत खोज रही हो।

तो यहा भी बुलबुलें चहक रही हैं'—मैंने मन म अपने आप से कहा और उन्हें छेडने के ख्याल से कुछ जोर से बोला एक आध हाथ तुम भी दिखा दो गुप्ता इग्लड में तो तुम अक्सर गाया करते थे!—मैंने अपने कथन की समाप्ति क साथ ही गुप्ता के हाथ को झटक दिया। मैंने अनुभव किया कि उसके सम्पूर्ण शरीर में एक विचित्र प्रकार की अनिवच लहरें दौड रही थीं। उसका मुह लाल हो आया और अपनी झेंप मिटाने की दृष्टि से ही उसने कहा यहा भी किसी से पीछे न रहेंगे, मौका तो आने दो!

तब कनिका डोरोथी से मिलने अन्दर चली गई थी और मैंने गुप्ता की अगुलियाँ भींचते हुए कहा आजकल तो गहरी छन रही है, पाँचो अगुलियाँ घी मे है बधाई हो तुम्हें!—यह टिप्पणी करते हुये, मैं अस्पताल जाने के लिये कमरे से बाहर निकला और गुप्ता मम्मी से बात करने के लिये अन्दर चला गया।

□□

मैं पिछले दस-बारह दिन से एक गहरी उलझन मे पडा हुआ हूँ, जब भी एकान्त पाता हूँ तो वत्सला का पत्र अपने उत्तर के लिये मुझे प्रेरित ही नही करता बल्कि एक प्रकार से तीव्र आग्रह भी करता है और आज उसी स्थिति से मुक्ति पाने के लिये, मैं उसे लिखने बैठा ही था कि उसका दूसरा पत्र भी आ गया। काँपते हाथो से उसे खोलकर पढा

'ओ निष्ठुर,

जिस पल से तुम्हें पत्र डाला था उसी क्षण से उसके उत्तर की प्रतीक्षा कर रही हूँ किन्तु लम्बे-लम्बे दस दिन बीत गये और तुम्हारा कोई उत्तर नही मिला। क्या मैं उत्तर देने योग्य भी नही रही हूँ? तुमसे कम से-कम ऐसी उम्मीद तो न थी! खर अब तुमसे आग्रह नही करूगी, तुम्हारी इच्छा हो तो लिखना, और न हो तो नही! तुम्हारा उत्तर मुझे इसी रूप में ग्राह्य होगा।

यह बीमारी जो अब मेरी एकमात्र सगिनी है और भी अधिक घनीभूत हो गई है। हल्का हल्का ज्वर रहने लगा है और कह नही सकती किस दिन बिस्तर पर पड जाऊ! मैं अपना उपचार कर सकती हूँ, पर नही करूगी नही करूगी!

वह, जो प्रतीक्षा करते करते
मायूस हो गई है, वत्सला!

इस पत्र ने मेरी सम्पूर्ण चेतना को झनझना दिया लगा कि मैं तप्त-तवे की बूद हूँ जो मनझनाकर समाप्त होना ही जानती है। मेरे मन के आँसू सूख चुके थे किन्तु आँखें कुछ गीली-सी हो गई थीं और अब उस पत्र के उत्तर को और अधिक समय तक टाल पाना मेरे बस की बात नहीं रही थी। मैं सोचने लगा कि अब केवल पत्रोत्तर ही पर्याप्त नही होगा अब तो मुझे स्वय ही वहा जाना होगा। एक रोगिणी के बुलावे को मैं कसे टाल सकता हूँ! डाक्टर हूँ ना आखिर मैं, पर क्या मैं उसका उपचार कर सकूगा?—जैसे दूर कोई डक मार कर मुझसे प्रश्न पूछ रहा हो।

डौरोथी को विश्वास मे लिया और उसकी सलाह भी मांगी। उसने भी मेर ही

देखते ही पहचान गई थी, क्योंकि रोगिणी के सिरहाने के चित्र से वह भली भांति परिचित थी।

इस क्षण मेरी चेतना जम गई है और निर्णय नहीं कर पा रहा हूँ कि अब क्या किया जाय ? इस सारी स्थिति के लिये मैं ही दोषी हूँ और तब सचमुच मुझे अपने आप पर बड़ी खीझ आई ! मुझे आखिर क्या हक था कि मैं किसी की जिंदगी को इस प्रकार बिगाड़ ! तभी मुझे निष्ठुर सबोधन का वास्तविक अभिप्रेत आभासित हुआ और मैं दो चुल्लू पानी में डूब मरने को आतुर हो उठा किन्तु इस सारे चिन्तन और रोदन के लिये अब समय कहा था ! मैंने परिचारिका को आवश्यक निर्देश दिये और रोगिणी की चिकित्सा का भार भी अपने ऊपर ले लिया। डौरोथी को भी सारी स्थिति से अवगत कराया और उसे आने के लिये ताकीद कर दी। एक दूसरे पत्र के द्वारा दो माह के अवकाश के लिये आवेदन कर दिया। तभी खाना लेकर वत्सला की माता जी आ गई थीं और मुझे वहा देखकर दग रह गई थी। छूटते ही बोली डाक्टर, जिस तरह तुमने कभी मुझे बचाया था उसी तरह मेरी वत्सला को नहीं बचाओगे ?''—यह कहकर वे अनायास ही फूट पड़ी।

मा जी आप दिल छोटा क्यों करती हैं, सब कुछ ठीक हो जावेगा आप मुझे मौका तो दीजिये !' बड़ी कठिनाई से उन्हें धीरज बधाया और प्राणपण से वत्सला के उपचार में जुट गया।

☐ ☐ ☐

टालीगज के फ्लैट में सुबह की चाय ले रहा हूँ। वत्सला के माता पिता यहीं रहते हैं।

डाक्टर आपका क्या ख्याल है, वत्सला की सेहत में कुछ तरक्की हो रही है या नहीं ? —मुखर्जी साहब ने चाय के प्याले को अपने होठ से अलग करते हुये कहा।

कुछ तरक्की तो मालूम दे रही है, पर मामला इतना आगे बढ गया है कि मनचाहा सुधार जल्द हो सकेगा, ऐसा नहीं लगता !' —मैंने टौस्ट काटते हुये उत्तर दिया।

'तो क्या इसे किसी सेनीटोरियम में भेजना उचित रहेगा ? इसकी मम्मी का तो कुछ ऐसा ही विचार है।'

देखिये एक सप्ताह और देखता हूँ, यदि तब तक आवश्यक सुधार न हुआ, तो किसी सेनीटोरियम में ले चलेंगे।'

हम बातें कर ही रहे थे कि वत्सला की मम्मी भी आ गईं और वे उसके स्वास्थ्य के बारे में गहरी चिन्ता प्रकट करने लगीं 'पता नहीं कौन सा घुन इसके शरीर को अन्दर-ही अन्दर खाये जा रहा है ! विवाह के लिये अच्छे-से-अच्छे प्रस्ताव आये पर एक को भी इसने स्वीकार न किया। मेरी अक्ल हैरान है कि अब क्या तजवीज करूं !'

उनकी इस टिप्पणी पर मैं सचमुच अपने को अपराधी महसूस कर रहा हूँ। वह घुन मैं ही हूँ, जिसने वत्सला की हड्डियों को खोखला कर दिया है। यद्यपि कभी यह मेरा ईप्सित नहीं रहा, पर मेरे अनजाने ही यह सब क्या हो गया ! मुझे सुदूर अतीत के एक सन्ध्या-काल की याद आती है मैं जयपुर में वत्सला के बगले पर था उसकी कुछ सहेलियां भी आई हुई थीं। एक शरारती सहेली ने मुझे छेड़ने के लिहाज से वत्सला से पूछा था 'ये तुम्हारे कौन होते हैं ?

इस पर वत्सला कुछ देर मूक रही थी, फिर मेरी ही ओर सकेत कर कहने लगी इन्हीं से पूछो !'

तो आप ही बताइये कि आप इनके क्या लगते हैं ?'—यह कहकर उस मुँहफट सहेली ने अपना होठ काट लिया था।

मुझे ऐसे प्रश्न की कतई उम्मीद न थी पल भर के लिये मैं विचलित हो गया था और कुछ भी उत्तर न दे पाया था बाद में साहस बटोर कर मैंने कहा था क्या कुछ लगना आवश्यक है ? हां य मेरी मित्र होती हैं !'

यह तो बड़ा वाहियात सबध है। इसे तो जिधर चाहो, उधर मोड सकते हो। उस मुँहफट युवती ने अपनी टिप्पणी अनायास ही प्रकट कर दी थी।

'आपका मतलब क्या है श्रीमती जी ? मैंने उसके प्रश्न को निरस्त करते हुय कहा था।

मुझे ठीक तरह याद है वत्सला को कुछ बुरा लगा था, पर प्रकट मे वह कुछ न बोली थी केवल उसके आरक्त कपोलों पर व्रीडा की गहरी लालिमा दौड़ गई थी ! देखता हूँ आज वही प्रगल्भ युवती, कितनी निस्तेज हो गई है, जसे सतत् वृश्चिक-दश के कारण उसका शरीर रक्तहीन हो गया हो ! क्या प्रेमजन्य विफलता की यही चरम परिणति है ? मैं इन्हीं विचारों में खोया हुआ था कि मुखर्जी साहब ने नीचे से आवाज दी आइये डाक्टर, वत्सला को देखने चलते हैं।'

☐ ☐ ☐

भाग में मैंने मुखर्जी साहब से पूछा कि वत्सला को घर लाना क्या उचित न रहेगा, तब वे शून्य मे दृष्टिनिक्षेप कर कहने लगे 'कौन माता-पिता ऐसा होगा, जो अपनी बेटी को घर पर रखकर उपचार न करना चाहेगा। मैंने इसके लिये वत्सला पर बहुत जोर डाला था, पर वह नहीं मानी नहीं मानी। कहती है—'लेबर-क्लीनिक के पास ही रहूंगी, यहाँ से कुछ देख भाल ही होती रहेगी।' इस बीमारी मे भी उसे अपने क्लीनिक' की चिन्ता है। उसने इस क्लीनिक के लिये अपने आप को होम दिया है दिन को दिन नही समझा, और रात को भी आराम नहीं किया। चौबीसो घन्टे जाने कसी धुन इसे लग गई थी कि मजदूर बस्ती को स्वर्ग बनाने के लिये तुली हुई थी।' कहती थी 'यहाँ किसी को बीमार न होने दूंगी। मजदूरों मे बडी लोकप्रिय हो गई थी, सब इसे डाक्टर-दीदी कहा करते थे मुझे तो शक है वहीं कहीं से यह बीमारी ले बठी है। —यह कहकर मुखर्जी साहब ने एक गहरी श्वास ली और कुछ पल के लिये विश्राम कर फिर कहने लगे इसे न जाने कैसा जुनून छाया था कि पल भर को भी विश्राम नहीं लेती थी मनुष्य-शरीर आखिर कोई यन्त्र तो नहीं है, यन्त्र को भी तेल की जरूरत होती है पर वह तो दवी काय शक्ति लिये हुए निरन्तर खटती रही खटती रही। और उसका जो कुछ भी परिणाम हो सकता था वह आज आप देख रहे हैं।'

हम वत्सला के बगले पर आ गये हैं। नर्स से मालूम हुआ कि उसे कोई आध घन्टे पूर्व ही खून की उल्टी हुई थी और तब उसने एक पल के लिए नीहार को याद किया था। मैंने तुरन्त उसकी स्थिति का निरीक्षण किया और कुछ इन्जक्शन लिखकर मुखर्जी साहब को बाजार भेज दिया।

मैंने वत्सला के माथे पर हाथ रक्खा वह गर्म तवे की तरह जल रहा था। वह शून्य दृष्टि से मेरी ओर ही निहार रही थी। मुझे किसी उर्दू कवि की पंक्ति याद हो आई 'बीमार को देखकर चेहरे पर जो रौनक आई उसे देखकर वो कहते हैं कि हाल अच्छा है।' कुछ एसी ही रौनक मुझे देखकर वत्सला के चेहरे पर आ जाती थी और विश्वास होता था कि वह ठीक हो सकेगी, पर दरअसल वह जिन्दगी और मौत के बीच जूझ रही थी और दिन प्रतिदिन उसे बचा पाना कठिन हो रहा था। मैंने मन मे निश्चय किया कि उसे भुवाली सेनीटोरियम ले जाया जाय, उसके सिवाय और कोई चारा नही है। मुझे लगा कि मैं उसका इलाज नही कर सकूंगा कोई डाक्टर अपने प्रियजन का इलाज नहीं कर सकता क्योंकि वह अपने आपको ही उसमे देखता है और इस प्रकार वह तटस्थता नही रह पाती जो कि एक डाक्टर और मरीज के बीच आवश्यक

है। इसी बात को मन मे उधडते बुनते हुय मैंने वत्सला से पूछा पहाड पर चलागो ? हवा पानी बल्लन स तबियत अच्छी हो जायगी। उस आश्वासन दिया कि मैं भी उसके साथ रहूगा पर वह पहाड पर चलने को किसी भी रूप म तयार न थी। कहन लगी वहा चलकर क्या करूगी मैं अच्छा होना नही चाहती, अब कोई इच्छा शेष नही है।'

उसके इस निश्चय पर अनायास ही मेरे नेत्रो स दो पानी की बूदें उसक कपोलो पर ढुलक पडी उनकी तरलता का अनुभव करते हुए और उन्हे पोंछते हुए वह बोली यह क्या है आप मद होकर रोते हैं मैं यही ठीक हा जाऊँगी आप रोना तो बन्द कीजिये।

उफ वत्सला, तुम्हे यह क्या हो गया है तुम इतनी विरक्त तो कभी भी दिखाई न दी थीं जीवन के प्रति ऐसा निर्विकार एव निस्सग भाव इसस पूव पहले कभी न दखा था।

सहसा मैं अपनी अगुलिया से उसक बालो को सहलाने लगा, उसे बडा अच्छा लग रहा था बीमार क चेहरे पर रौनक आ रही थी और वह एक अपरूप प्रभा से उज्ज्वल थी कि तभी उसे फिर एक बेहोशी का दौरा आया और ढेर-सारा खून उसके मुह से निकल पडा। उसकी कुछ बूदें मेरे कपडो पर भी पड गई थी। मैंने उसके माथे पर हाथ फेरते हुए कहा वत्सला दिल छोटा नही करते तुम ठीक हो जाओगी तुम्हे पहाड पर चलना ही होगा।'

सच क्या मैं क्या मैं ठीक हो जाऊँगी ?—वह विस्फारित लोचनो से यही प्रश्न मुझसे पूछ रही थी जो कि अपने शत सहस्र रूप म मरे कानो म निरन्तर गूजता रहा निरन्तर गूजता रहा।

मुखर्जी साहब के आ जान पर मैंने अपना निश्चय उन पर प्रकट किया और जल्दी ही भुवाली सेनीटोरियम जाने का सकेत किया। उन्होन जल्दी से जल्दी ऐसी व्यवस्था करने का वचन दिया और तब वे अपनी बेटी के सिरहान बठकर उसे बहुत देर तक समझाते रहे। मैं पास के एक स्टूल पर बठा हुआ पिता व पुत्री के इस गम्भीर वार्तालाप को सुनता रहा सुनता रहा कि तभी वत्सला की आखें झपक गइ।

☐ ☐ ☐

भुवाली सेनीटोरियम की एक सध्या। वत्सला का दाखिला विधिवत् करवा दिया है और सेनीटोरियम के अधिकारियो से आवश्यक परामर्श हो गया है। श्रीमती मुखर्जी उसके पास रहगी। मुखर्जी साहब भी प्राय आते जाते रहगे

और यह तय हुआ कि मैं भी महीने-दो-महीने में रोगिणी की स्थिति देखता रहूगा।

सचमुच यहा का वातावरण बडा विचित्र है, प्राय एक मायूसी-सी यहाँ के वातावरण से टपकती है। अधिकाश रोगी धैर्यपूर्वक मृत्यु की प्रतीक्षा कर रह हैं, उनका जीवन-दृष्टिकोण भी वैसा ही बन गया है। कुछ कम उम्र के रोगी भी हैं और उनमे हम भविष्यत्-जीवन की तमन्ना को स्पष्टत देख सकते हैं। वत्सला यद्यपि इसी आयु वर्ग में आती है पर फिर भी न जाने क्यो वह बडी अधीरता से मृत्यु की प्रतीक्षा कर रही है। प्राय स्वप्नावस्था मे वह मौत के कदमो की आहट सुन लिया करती है और चौक पडती है। यदि वह अपने मन को प्रफुल्ल रख सके, तो इस बात की हर सम्भावना है कि वह रोग-मुक्त हो सके किन्तु इस काय मे उसका अपना योग नही के बराबर हो है।

यहा आने पर उसकी स्थिति म कुछ सुधार हुआ और पौष्टिक भोजन के कारण उसके चेहरे पर भी कुछ आब आने लगी, पर उसके मन में जो कीडा बठा है, वह उसे चन नही लेने दता। वत्सला टूट गई है और उसे जोडने का हर प्रयास जिन्दगी के कपडे म थेगडी लगाने के समान है। मैंने उसे अनेक बार समझाया कि उसे अपना दृष्टिकोण बदलना चाहिये और और किसी के लिये नही तो अपने क्लीनिक के हित मे ही वह स्वास्थ्य-लाभ करे। जब एक प्रात मैं उसे ढाढस बधा रहा था, तभी वह गमगीन होकर कहने लगी डाक्टर किसके लिये जीऊँ ? मेरा जीवन निरर्थक है, उसे कब तक सार्थकता प्रदान करती रहूँ ? अब अधिक मुझसे नही सहा जाता और अब जीकर करूगी भी क्या! मेरी कामनाओ की इति-श्री हो गई है, मुझे जीवन में जो कुछ पाना था, वह मैं पा चुकी, मुझे किसी के प्रति कोई गिला नहीं! सब ठीक है और जसे जीवन चल रहा है उसे उसी रूप मे चलने देना चाहिये। जीवन की इस धारा मे मुझे कोई भी व्यतिक्रम सह्य नही होगा।' यह कहकर वह सूनी आखो से मेरी और देखने लगी।

इतनी विरक्ति, इतना अनासक्ति योग और ऐसी जीवन की पूर्णता, मेरे लिये अननुभूत थी इसीलिए मैं भौंचक्का रहकर सोचने लगा कि अच्छी-खासी वत्सला को यह क्या हो गया है और तब किसी अज्ञात प्रेरणा के वशीभूत उसकी उन्मुक्त केश राशि मे अपनी अंगुलियाँ डाल, कहने लगा 'वत्सला, तुम ठीक हो रही हो और वह दिन दूर नही है जब तुम भली चगी होकर, पुन अपनी क्लीनिक मे काय करोगी।'

मैंने देखा कि मेरा प्रबोधन, उसके गले के नीचे नही उतरा है और तब मैं

उससे विदा लेने के भाव से कहने लगा 'वत्सला, यदि तुम्हारी इजाजत हो तो, मैं कल तेजपुर चला जाऊँ और फिर तुम्हें देखने जल्दी ही आ सकूंगा।' यह कहकर मैं उसके माथे पर हाथ फेरने लगा।

'आप जायेंगे हाँ आपको जाना ही चाहिये लेकिन क्या जल्दी लौट सकेंगे ? सबको देखने को बड़ा जी करता है डौरोथी, नीली, मम्मी, कनिका आदि आदि।' अचानक न जाने उसे क्या हुआ कि उसके नेत्र गीले हो गये और वाणी निश्शब्द।

'कोई चिंता की बात नहीं है वत्सला, मैंने सब व्यवस्था कर दी है और यदि हो सके तो मुझे अपनी सेहत के बारे मे लिख देना या लिखवा देना। बोलो वचन देती हो।'

'कोशिश करूंगी पर आप जल्दी लौटियेगा।'

अगले दिन प्रात सारी व्यवस्था, श्री और श्रीमती मुखर्जी को समझाकर डाक्टरों को आवश्यक निर्देश देकर मैं तेजपुर के लिए रवाना हो गया।

३२

डौरोथी ने लौटने पर बताया कि सुधीरा सायाल और प्रकाश गुप्ता मेरे पीछे आये थे। सुधीरा से बहुत-बहुत बातें हुई हैं। वह वेचारी बडी दुखियारी है। एक ओर उसे मातृत्व का बोझ उठाना पड रहा है तो दूसरी ओर प्रकाश गुप्ता की तरफ से वह सुखी नही है। इस अर्से म प्रकाश गुप्ता और कनिका सायाल के सम्बन्ध बहुत आग बढ़ चुके थे और कहा नही जा सकता था कि इनकी अन्तिम परिणति क्या होगी! चारों ओर उन्ही की चर्चा थी, लोग तरह-तरह की बातें बना रहे थे, किसी के मुह को पकडा नही जा सकता किन्तु सबसे मजे की बात यह है कि प्रकाश गुप्ता चिकना घडा बना हुआ है और उस पर इन सब बातो का कोई असर नही है वह तो इसे नितान्त स्वाभाविक और अनिवाय समझता है।

' तो अब समझ मे आया कि हजरत स्वच्छन्द प्रेम की इतनी वकालात क्या करते थे!'—मैंने अतीत की घटनाओं एव वार्ताओ में डुबकी लगाते हुये कहा।

'ये बातें अच्छी तो नही कही जा सकती, इसका मतलब तो यह हुआ कि हम पुन मनुष्यत्व से पशुत्व की ओर जा रहे हैं?'—डौरोथी ने कटाक्ष किया।

'अपने-अपने विचार हैं। क्या तुमने वह दार्शनिक उक्ति नही सुनी, जिसमें कहा गया है कि अच्छी और बुरी जसी कोई चीज नही है, बल्कि हमारा सोचना ही इस प्रकार के विशेषण देता है। (नथिंग इज गुड ऑर बड, बट थिंकिंग मेक्स इट सो!)'

'बस यहीं पूर्वी और पश्चिमी चिन्तन का भेद स्पष्ट हो जाता है। हमारे यहाँ सभी बातें समाज-सापेक्ष हैं और पश्चिम में व्यक्ति-सापेक्षता को महत्त्व दिया जाता है।'

'पूर्व और पश्चिम की सीमायें अब टूट गई हैं, रुडयार्ड किपलिंग ने पूर्व और पश्चिम की पृथकता की जो उद्‌घोषणा की थी, वह झूठी पड गई है। (ईस्ट इज ईस्ट एण्ड वैस्ट इज वस्ट, एण्ड दी टवेन विल नवर मीट!)

न जाने हम कब तक इस विवाद मे उलझे रहते कि मम्मी और नीली आ गइ। वे वत्सला के स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे बडी चिन्तित थी। उनकी सम्पूर्ण जिज्ञा-

मामा का समाधान करते हुए मैंने यह बतलाया कि उसे मुखर्जी सनाटोरियम में भरती कर लिया गया है और समय-समय मैं भी देख भाल करता रहूंगा। बेचारा की हालत बड़ी चिन्ताजनक है।

सोने-सा लड़का को न जाने कौनसे घुन खाए जा रहे हैं! कोई कल्पना नहीं कर सकता था कि उसे तपेदिक हो जायगा। यह ठीक हो जाय इसी में मुखर्जी परिवार का कल्याण है! —मम्मा ने माथे पर सलवटें और आँखों में आश्चर्य उत्पन्न करते हुए कहा।

और इसी में इनका कल्याण भी है। —शैलजा ने मेरा आँखों में झांकते हुए कुछ टेढ़ेपन के भाव से कहा। यह मजाक इन्हीं का किया हुआ है! मामा ने अपनी ननद से ठिठोली करते हुए कहा। इतना भी कि मम्मा जा चुकी थीं और मैं बात-बात बच गया था! सुन लेतीं तो न जाने क्या कुछ सोचतीं!

□ □ □

उसी मध्य को शैलजा मुझसे मिलीं मुलाकात हुई और मैंने उस उलाहने के स्वर में कहा: बड़ी शिकायतें सुनी हैं तुम्हारी! बेचारा सुधारा को क्यों परेशान करते हो! यह मसखरेबाजी क्या नहीं छोड़ देते!

तो हजरत के काफी कान भरे जा चुके हैं! अच्छा कुछ हमसे भी तहकीकात कर लेते!

'कहो तुम भी अपनी कैफियत सुना दो।

यदि दो व्यक्ति एक दूसरे की ओर खिंचते हैं तो इसमें क्या गुनाह है? तुम भी तो दोस्तियाँ करते रहे थे फिर हमीं ने क्या कसूर किया है!

अरे यार तुम तो दूध पीते मजनू हो सीना ठोक कर अपने दिल की दास्तान कहते हो पर एक बात बताओ कि यदि तुम्हारी जीवन-साथिन भी तुम्हारी ही तरह करने लगे, तो तुम्हें कैसा लगेगा?'

'अपनी तरफ से पूरी छूट है।'

अच्छा जब ऐसा होगा तो दिल पर साँप लोटेंगे।'

' तो ठीक है इसको भी आजमा कर देखेंगे, फिर यदि तुमने चूं की तो मुझसे बुरा कोई न होगा!

'पूरे शौक से आजमाइये आप आखिर यह सवा हाथ का कलेजा किस दिन काम आयेगा!

तुम हो पूरे पोंगापंथी क्या दिल के अरमानों को कैद किया जा सकता है! अरे

यार, प्यार किया नहीं जाता, प्यार हो जाता है मेरी जान ! अगर कोई बौडम मुझे ऐसा उपदेश देता तो मान भी लेता, पर तुम तो खुद इश्क की राह के राहगीर रहे हो। इसलिये तुम्हारे उपदेश सुनकर, अपने कान पकड़ कर चार दफा उठक-बठक कर लेता हूँ !'—और इस नाटकीय मुद्रा के बाद, वह फिर गभीर होकर कहने लगा सुधीरा के लिय जो मेरा फर्ज है, उसम मैं कतई कोताही नही आने दूगा, आखिर तो मैं भी बाप बनने जा रहा हूँ पर अपनी पाटनर को जरा दरियादिल होना चाहिये।'

इस प्रकार वह सध्या चाय के कहकहो म समाप्त हो गई और रात जब अपनी मधुर पलकों की ढाल लिये उपस्थित हुई, तो डोरोथी ने खड्ग-हस्त होते हुये कहा मिल आये आप अपनी प्रेमिका जी से, क्या हाल है उनका ?'

जब मैंने वत्सला की स्थिति को सविस्तार बतलाया तो उसके हाथ की तलवार गिर पडी थी और वह मुझे अपनी कोमल भुजाओं मे भर कर कहने लगी 'मुझे तो डर लगता है, कहीं मैं आपको खो न बठू !

मैं समझ गया कि यह प्रशान्त-कनिका काड का अवश्यभावी परिणाम है अन्यथा डोरोथी कभी इतनी अनुदार न हुई थी। यही सब सोचकर मैंने उसे कहा तुम्हारे खो बठने का तो सवाल ही नही उठता, खो तो कोई दूसरा ही बठा है और उसके गम में उसके शरीर की प्रत्येक नस, प्रत्येक रक्त बिन्दु तड़प रहा है !'

'हमदर्दी है उस खोने वाली के साथ, पर मुझे बडा अजीब-सा लगता है कि वत्सला दीदी ने यह क्या किया ! उन्हे विवाह कर लेना चाहिये था और तब वे दाम्पत्य जीवन के सुख मे इन सब बातो को भुला सकती थीं।'

जैसे तुमने भुला दिया है ! मैंने न चाहते हुये भी व्यग्य की कटार डोरोथी पर फेंक दी।

मैं किसको भुलाती, आप तो बचपन से ही मेरे दिमाग पर हावी हो गये थे !'

'अरे कोई कल्पित प्रेमी तुम भी बना लो, कम से कम जिसे भुलाकर मुझ तक आ सको।'

यह भी खूब बात रही आ बल तू मुझे मार, मैं एसी वज्रमूर्ख नही हूँ।

'इश्क में तो थोडी मूर्खता भी आवश्यक होती है। बुद्धिमत्ता के साथ प्रेम-मार्ग पर चल पाना कठिन है।

मेरा सौभाग्य यही है कि आप बुद्धिमान हैं, अन्यथा आपका भी पर गलत रास्ते पर पड सकता था। वत्सला के प्रति आपका जो भाव है, उसे मैं भली

'तुम फिर लगी लाल और जीवनमय नजर आने लगी हो वैसा मेरा यहाँ आना और मैं जा-जा फिराऊ फिराऊ उसे रुचिपूर्वक सुना रहा।

चाहती तो बहुत हूँ कि आपके स्नेहपूर्ण हाथों से जो कुछ मुझे मिले वह तो मेरे जीवन का परम सौभाग्य है पर अब जीने में रस ना रही है। क्या रह गया डाक्टर !

चाँद चाँदनी में और एक दिन चन्द्रमा के साथ सो। —मैंने उसके पालित्य नयनों में भाव भरने का यत्न किया तुम इतनी निराश क्यों होती जा रही हो ? जिन्दगी बड़ी है या मौत ?

जिन्दगी बड़ा ही मरता है पर मौत भयानक है और जीवन का एक अंग सच है। जब जीवन नाता पर मृत्यु का प्रभाव होता है तो वह इतना रुचिकर होता है कि उसका समस्त मनुष्य का सम्पूर्ण ज्ञान विज्ञान पानी भरने लगता है।

तुम जीवन की ज्योति बनी चलना। यह क्या बातें कर रही हो! इसी उद्यान में फूल खिल रहे हैं और उन पर भौंरे गूंज रहे हैं और यही आम जीवन की सरलता और सफलता की प्रतीक बन रही है। इन फूलों-सा मुस्कराना सीखो।

यदि किसी फूल में कोई कीड़ा लग जाए तो वह कब पनप सकता है।

इसी कीड़े को निकालने को ही तो, तुम यहाँ आए हो। आखिर डाक्टर हो तो क्या अपने पथ के प्रति न्याय न होने देगा ?

मैं कभी डाक्टर भी था आज तो यह तथ्य इतना विस्मृत हो गया है जैसे कोई जलधारा मरुस्थल में खो गई हो।

तुम बड़ी मायूस बनती जा रही हो इस मायूसी पर विजय प्राप्त करो और तब तुम पाओगी कि संसार तुम्हारा है और अभी उसमें बहुत-कुछ करना शेष है।'

कैसी बातें कर रहे हो डाक्टर! क्या जिन्दगी का ताना-बाना फिर बुना जा सकता है क्या उजड़े हुए आशियों में फिर बुलबुल राग अलाप सकती है ?'

इस बार उनकी करुण दृष्टि मेरे मन पर मर्मभेदी तीर छोड़ रही थी। जीवन, सच मृत्यु पर विजयी हुआ है! मैंने उसके निष्प्राण पंजे को झकझोरते हुए कहा जैसे मैं ही जिन्दगी और मौत से लड़ रहा होऊँ। मुझे लगा कि पंजा झकझोरने से एक सोते तालाब में लहर की लकीर सर्वत्र खिंच गई है और जैसे अंध कूप में से भी जिन्दगी की पुकार आ रही है।

'मन को जितना पक्का करती हूँ, उतना ही बच्चों जैसी की तरह गिर गिर पड़ता है और काबू में नहीं आता ! तुम्हारे आने पर जैसे ज़िन्दगी की परछाई मुझ पर पड़ जाती है और जब तुम चले जाते हो, तो बेरहम मौत का साया मुझ पर पड़ने लगता है। मेरे कानों में कुछ गूंजता है मैं बचूँगी नहीं नहीं बचूंगा और क्यों बचूं ? किसके लिए बचूं ?'

सचमुच प्रश्न इतना तीखा था कि मुझे अपने मुंह पर तमाचा सा लगता दीखा और उस अन्तश्चेतना में कोई बुदबुदाया ठीक ही तो कह रही है बेचारी !' एक गहरे कुएं में से आवाज़ खींच तक आकर उस बिखर गई और जल के लिये डाला गया पात्र रीता-का रीता ऊपर आ गया। यह कैसी भयंकर यातना है !

'हे प्रभु मेरे जीवन के कुछ क्षण को इस रोगिणी को क्या नहीं दे देते मैं तुमसे करबद्ध प्रार्थना करता हूँ !' मैं मन ही मन बुदबुदाया और ऐसा महसूस करने लगा जैसे मेरे हाथ के तोते उड़ गये हैं और मैं एक बियाबान जंगल में भटक रहा होऊं ऊंचे पहाड़ हों और उन नुकीली चट्टानों पर मेरा विश्वास, मेरी आस्था डांवाडोल हो रहे हों, पर प्रत्यक्ष में मैंने इस्पाती दृढ़ता के साथ कहा तुम पवित्र हो जाओ वत्सला, अब तुम्हारी सहत मेरे हाथ में है और तुमने यदि कहना न माना, तो मैं रूठ जाऊंगा, सदा सदा के लिये रूठ जाऊंगा ! अपनी उस रूठन की धमकी के साथ ही मैंने वत्सला के मुँह में सूप से भरा हुई चम्मच डाली जिसे उसने तिक्तता के साथ निगल लिया और न चाहते हुये भी, उसने फिर अपना मुँह खोल दिया। इस बार मैंने उसे एक टानिक दिया और उम्मीद करने लगा कि धन्वन्तरि ने संजीवनी रस रोगिणी के कंठ में डाल दिया है ! वत्सला की आँखें झपक आई थी। उसे इसी अवस्था में छोड़ और श्रीमती मुखर्जी को आवश्यक निर्देश दे, मैं अपने विश्राम-स्थल पर चला गया।

२ -

३३

ठीक दो साल बाद !

समय के पग पर बढ़कर काल-पक्षी निरंतर उड़ता रहता है उसकी गति को कोई नहीं रोक सकता। पृथ्वी का गोलक पिंड कभी आकार के आगमन आता है और कभी अपकार में जीवन में इसी प्रकार सृजन और संहार निरन्तर चलते रहते हैं। समय की गंगा में बहुत पानी बह चुका है। मुझे भी तेजपुर में काम करते हुए २ वर्ष होने आ रहे हैं और अब न जाने क्यों मैं कुछ इस फौजी अनुशासन में ऊब सा गया हूँ। मन कुछ परिवर्तन चाहता है।

इस बीच मैं महीने-दो महीने में भुवाली सेनीटोरियम भी जाता रहा हूँ पर वहाँ की स्थिति में मनोवांछित परिवर्तन लक्षित नहीं हो रहा। ऐसा लगता है कि वत्सला मौत की ठंडी गोद की ओर प्रतिपल बढ़ती जा रही है उसे माता पिता का स्नेहपूर्ण संरक्षण सेनीटोरियम के उच्चाधिकारियों की सहानुभूति नेवर-क्लीनिक का मोह और मेरा मनोजन्य अनुराग, नहीं बचा सकेगा ऐसी आशंका होती है।

आज प्रात जब मैं वत्सला को देखने सेनीटोरियम में पहुँचा तो वह अर्ध निमीलित मुद्रा में सो रही थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे कोई स्वप्न देख रही हो। मैंने उसकी इस स्थिति में कोई व्याघात नहीं डालना चाहा और अपनी अंगुलियों को होठों पर ले जाकर श्रीमती मुखर्जी को संकेत किया कि वे सारी स्थिति को यथावत् रहने दें।

एक स्टूल लेकर चुपके से मैं बैठ गया, और मूक रूप में उस मनोदशा का अवलोकन करने लगा। श्रीमती मुखर्जी स्नान करने को चली गई थीं मैं भी विचारों में डूबा हुआ वहीं बैठा था कि वत्सला के चेहरे पर अचानक ही एक विलक्षण एवं भव्य रौनक आई और उसके हाथ उठ गये जैसे किसी को माला पहना रही हो ! उसके शरीर में गति का संचार हुआ और आकस्मिक रूप से वह कुछ गुनगुनाने लगी उसके शब्द स्पष्ट नहीं थे जैसे शून्यता में बिखर बिखर जाते हों ! मैं कुछ देर और चुप रहा और उसी प्रकार प्रतीक्षा करता रहा। अब उसकी स्वरलहरी कुछ स्पष्ट हो चली थी और वह गा रही थी राजा की आयेगी बरात रंगीली होगी रात मगन हो नाचूँगी ! अरे मैं यह

क्या सुन रहा हूँ, अवश्य ही वत्सला कोई मधुर स्वप्न देख रही है प्रकृति का यह कैसा विचित्र विधान है, कैसे वह प्रत्यक्ष संसार की क्षति को कल्पना के संसार में अपनी कोमल कोमल अंगुलियों से सवार करके, पूर्ण करने की चेष्टा करती है। मुझे लगा कि जिसे वत्सला वास्तविक रूप में न पा सकी थी उसे स्वप्न में पाने की चेष्टा कर रही है।

कुछ ही पलों में उसने अपने वक्षस्थल पर हाथ रखे और मुँह का रंग बिगड़ गया, उसकी सांसें उखड़ने लगीं और शरीर एवं आंखें बिल्कुल निस्तेज हो गई। मैंने अनुभव किया कि वत्सला को आक्सीजन देनी चाहिए और तुरंत ही श्रीमती मुखर्जी को बैठाकर डाक्टरों के कमरे की ओर दौड़ा। स्थिति की भयानकता डाक्टरों को समझाई और वे भी तुरंत ही अपने सारे साज-सामान के साथ रागिणी के कमरे में आ उपस्थित हुए। ऑक्सीजन की नली नाक में लगा दी गई और एक लेडी डाक्टर धीरे-धीरे दिल पर मालिश करने लगी। अचानक उसका मुँह ऊपर उठा और एक खून की के हुई आंखें पथरा चुकी थी और प्राणों का पक्षी, शरीर रूपी पिंजरे का परित्याग कर अनंत आकाश में उड़ चुका था।

मैंने अपना सिर धुन लिया और उधर दूसरे कोने में श्री और श्रीमती मुखर्जी टप-टप आँसू बहा रहे थे। उस कमरे का वातावरण निस्पंद था गति अवरुद्ध हो गई थी, केवल रोने की कुछ हिचकियां यदा-कदा वायुमण्डल में लहरा जाती थी। दिल पर पत्थर रखकर मैंने वत्सला के माता पिता को समझाने की चेष्टा की 'माताजी, पिताजी अब तो धीरज के सिवाय हमारे हाथ कुछ नहीं रहा है आपकी इतनी मेहनत, इतना खर्चा सब फिजूल गये! होनी को कौन टाल सका है! अब तो केवल धैर्य धारण करने के सिवाय हम और कुछ नहीं कर सकते।'

'डाक्टर, तुम्हारी भी सारी मेहनत बेकार गई इन दो सालों में तुम न जाने कितनी बार यहाँ आये गये कितनी ही दवाइयों के प्रयोग हुये नतीजा कुछ न निकला। आँसुओं के बीच श्रीमती मुखर्जी ने कहा मुझे यदि यह नतीजा मालूम होता तो मैं बरसों को घर पर ही रखती, हाय मेरी बेटी तुम चुपचाप में मुझे छोड़कर चली गई यह तो मेरे जाने की उमर थी तुम पहले ही चली गई! आँसुओं की झड़ी लगी हुई थी कोई ऐसा तिनका न था जिसका सहारा मिल सके!

' यह अंजाम किसे मालूम था यहाँ लाकर हमने अपने मां को निकाल ली

ना सो मा म नरी मिरा रह ज ा ि वत्सला का पूरा इलाज ना करा सा ।' मैन रिराना के गहर समुद्र म डूबा हुग्रा कहा।

मन म सारा सत्रमुच म टूट गया है निपट कंगाल हूं। मरे हृदय की उद्भात मणि को न जाने कौन विषधर चुरा ले गया है। वत्सला के माता पिता व दुख को जब कल्पना करता हू, तो मन छाती को आता है। चाहता हूं यान म भी धाड़ें मार मार कर रो पाता, उससे कुछ तो जी हल्का होता पर पुरुष होने क नाते मुझे वह सुविधा भी नहीं है !

उचित समय पर वत्सला के दाह-संस्कार की व्यवस्था हुई और उसका शरीर व पंचतत्त्व पुनः एक गरी रिराना मैं डूब गय सारा दुनिया एक दिन इसी विराट रिक्तता म समा जायगी। मैं तुम हम सब कोई नहीं बचेगा। मैं उसी प्रलय के दिन की प्रतीक्षा कर रहा हू। हाय री नियति तेरी भविष्य निधि म मरे लिए ग्रभी क्या कुछ बाकी है माथ पर दोनों हाथ म पकड़कर सोचता हूं।

ग्रोर अधिक सोचता हूं तभी थी मुखर्जी सूचित करते हैं दूर का समय हो गया है एम कब तक बैठ रहेंग डॉक्टर ? —एक टूटा हुआ पिता अपनी पुत्री के अनन्य मित्र का ढाढ़स बधाता है।

□ □ □

सून मन और भारी पगों को लेकर घर लौटा हूं। मेरा मानसिक अवस्था उस बटोही के समान है जो रास्ते म ही लुट गया है और अपनी जीवन निधि को अपनी प्ररणा के प्रसून को, मृत्यु के क्रूर करों द्वारा रौंदे जाते हुए देख चुका है। घर म रहना ग्रस्पताल जाना, सोते रहना आदि सभी शारीरिक एव मानसिक क्रियायें एक सामान्य-सूति मात्र प्रतीत होती हैं। संभवत किसी को खोकर ही हम उसक मूल्य का जान पाते हैं। किसी की ग्रनुपस्थिति ही उसके मूल्य का ग्रकन करती है। वत्सला को खोकर ग्राज मैं जान सका हूं कि वह मेरे लिए क्या थी एक नारी के रूप म ऐसी मित्र जो कभी भुलाई नहीं जा सकती जिसकी स्मृतिया ग्राजीवन मन को कुरेदती रहेंगी।

एम ही उदास बैठा हुग्रा मैं ग्रखबार के पन्ने पलट रहा था कि डौरोथी ग्रा गई। वह मेरी पीडा को जानती है और यह भी जानती है कि घाव का मर्म बिन्दु क्या है। उसने मरहम लगाने की भी चेष्टा की पर घाव कुछ ऐसा था कि ज्यों-ज्यों उस पर मरहम पट्टी की जाती था त्यों-त्यों वह और भी ग्रधिक रिसता था।

एम कब तक उदास बैठ रहोगे ग्राप। डोरोथी ने मौन भग किया।

नहीं नहीं मैं उदास तो नहीं हूं किन्हीं विचारों म खोया हुग्रा था।

'इसी खोन को तो उदासीनता कहते हैं। देखिय, आपके चेहरे का रग कैसा उ" हुआ जा रहा है!'

' सब ठीक हो जायगा ठीक हो जायगा कोई चिन्ता की बात नही है।

'क्या आप मुझे भी न बतायेंगे कि कौन सा दु ख, आपको इतना साल रहा है!'

क्या तुम्हें भी बतान की जरूरत है ?'—मैंने सूनी किन्तु तीखी दृष्टि से डौरोथी की ओर दृष्टिपात किया। वह मा बनन वाली है। देखा, विधाता का कसा अजीब खेल है कि एक ओर मृत्यु होती है और दूसरी ओर नवजीवन का शिशु अधकार के लोक म अपने ही बीज को अकुरित करता है!

देखिये आप इस तरह न बैठा करें किसी न किसी काम म अपने को लगाये रखें, तभी चिन्ता दूर हो सकती है।—यह कह वह मेरे बालो मे अपनी कोमल उगलिया फेरने लगी थी।

हाँ इसी तरह सिर को सहलाती रहो। तब तक, जब तक कि मैं सो न जाऊँ!'
न जाने कब तक डौरोथी इसी प्रकार मेरे बालो मे अँगुलिया फेरती रही और मैं एक ऐसे पत्नीत्व की छाया म जो कि मातृत्व की गरिमा धारण करने को उत्सुक था सो गया सब चिन्ताओं को छोडकर सब मुसीबतो को बेचकर और सब भावनाओं को समाप्त कर!

और तब स्वप्न के लोक में देखता हूँ कि वत्सला मेरे ही घर जन्म लेगी जसे वह मेरे ही द्वार खटखटा रही है! मैं कहता हूँ ठहरो मैं अभी दरवाजा खोलता हूँ और तब एक चचल बालिका अपने नन्हे-नन्हें कदमो को जमीन पर घसीटते हुये मेरे आगन मे खिलखिला पड़ती है। मैं स्वप्न मे ही चीख उठता हूँ 'अरे तुम तो वत्सला हो! तुम आ गई, मित्र से पुत्री बन कर!

जब मैंने इस स्वप्न की बात प्रात डौरोथी को बताई, तो वह खिलखिला कर हस पडी 'अरे आप भी क्या दूर की सोचत हैं। क्या कभी एसा भी हुआ है?'

यदि एसा हुआ तो क्या तुम रोक सकोगी?'

'रोकूगी क्यों मैं तो पलक पावड़े बिछाकर स्वागत करूगी। मेर मन पर जो छाया इतने दिनों तक पड़ती रही है यदि वह अपना अस्तित्व प्रमाणित करे तो इसम आश्चर्य ही क्या है!

इसी तरह की गप शप में वह प्रात प्रफुल्लित हो उठा और जब मैं अस्पताल पहुँचा तो मेरे लिए एक नवीन सन्देश था—मेरे स्थानान्तरण का आदेश!

'इसी खोन को तो उदासीनता कहते हैं। देखिये, आपके चेहरे का रग कैसा कुद हुआ जा रहा है !'

' सब ठीर हो जायगा ठीर हो जायेगा कोई चिन्ता की बात नहीं है।

क्या आप मुझे भी न बतायेंगे कि कौन सा दु ख, आपको इतना साल रहा है!

'क्या तुम्हें भी बताने की जरूरत है ?'—मैंने सूनी किन्तु तीखी दृष्टि से डौरोथी की ओर दृष्टिपात किया। वह मा बनने वाली है। देखा, विधाता का कैसा अजीब खेल है कि एक ओर मृत्यु होती है और दूसरी ओर नवजीवन का शिशु अधकार के लोक मे अपने ही बीज को अकुरित करता है !

देखिये आप इस तरह न बैठा करें, किसी न किसी काम म अपने को लगाये रखें, तभी चिन्ता दूर हो सकती है।' —यह कह वह मर बालो म अपनी कोमल उगलिया फेरने लगी थी।

हाँ इसी तरह सिर को सहलाती रहो। तब तक, जब तक कि मैं सो न जाऊँ ! न जाने कब तक डौरोथी इसी प्रकार मेरे बालों म अँगुलियाँ फेरती रही और मैं एक ऐसे पत्नीत्व की छाया म, जो कि मातृत्व की गरिमा धारण करने को उत्सुक था सो गया सब चिन्ताओं को छोडकर, सब मुसीबतो का बचकर और सब भावनाओं को समाप्त कर !

और तब स्वप्न के लोक में देखता हूँ कि वत्सला मेरे ही घर जन्म लेगी जसे वह मेरे ही द्वार खटखटा रही है ! मैं कहता हूँ ठहरो मैं अभी दरवाजा खोलता हूँ और तब एक चचल बालिका अपने नन्हे-नन्हे कदमो को जमीन पर घसीटते हुये मेर आगन मे खिलखिला पड़ती है। मैं स्वप्न मे ही चीख उठता हू अरे तुम ता वत्सला हो ! तुम आ गइ, मित्र से पुत्री बन कर !'

जब मैंने इस स्वप्न की बात प्रात डौरोथी को बताई, तो वह खिलखिला कर हस पडी अरे आप भी क्या दूर की सोचत हैं। क्या कभी ऐसा भी हुआ है ?'

यदि एसा हुआ, तो क्या तुम रोक सकोगी ?

'रोकूगा क्यो मैं तो पलक पावडे बिछाकर स्वागत करूगी। मेर मन पर जो छाया इतने दिनों तक पड़ती रही है यदि वह अपना अस्तित्व प्रमाणित करे तो इसम आश्चय ही क्या है !

इसी तरह की गप शप मे वह प्रात प्रफुल्लित हो उठा और जब मैं अस्पताल पहुँचा तो मेरे लिए एक नवीन सदेश था—मेरे स्थानान्तरण का आदेश !

वत्सला रह गई !

क्लीनिक' को अर्पित कर देता हूँ। यह मेरे जीवन की पवित्र थाती है। क्लीनिक के कण कण मे मुझे वत्सला का व्यक्तित्व साकार हुआ प्रतीत होता है वहा की व्यवस्था म उसकी सुरुचि एव सौंदर्यप्रियता स्पष्टत लक्षित होती हैं। जब अगुलिया उसके स्टेथस्कोप पर पडती हैं, तो मैं यह कल्पना करके रोमाचित हो उठता हूँ कि कभी यही स्टैथस्कोप उसके गले का आभूषण रहा होगा, जब कभी शल्य-यत्र को काम में लेता हूँ, तो मुझे उसका जीवित सस्पर्श अनुभव होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि उसके व्यक्तित्व के उपकरण विकीर्ण होकर इसी वातावरण में समा गये हो! वह भौतिक रूप मे भले ही अदृश्य हो गई हो, पर भावात्मक रूप मे तो उसका व्यक्तित्व, प्रत्येक व्यवस्था एव वस्तु मे स्पष्टत परिलक्षित होता है।

कुछ ही अर्से मे वत्सला अपने मरीजो के बीच बडी लोकप्रिय हो गई थी। किसी मरीज से बातचीत के दौरान जब कभी उसका प्रसग आता है, तो वह अवश्य ही उसे अश्रुपूर्ण श्रद्धाजलि अर्पित करता है। कल ही एक महिला रोगिणी से जब मैं उसके बारे मे बातचीत कर रहा था, तो उसने गद्गद् कठ से यही कहा था 'कहा बनावें डाक साब, मेम साब तो देवीस्वरूपा हतीं, ऐस प्यार तें हम सबन का इलाज करत ही कि कछु नाय कह सकत! परमात्मा उन्हें ही जल्दी उठाय लेत हैं जो बाका भौत प्यार लगत हैं। और तब उनकी आखो से चन्द आसू ढुलक पड़े थे। उन आसुओ मे मैंने उस दिव्य वात्सल्यमयी नारी के दर्शन किये, जो अपना कण-कण विनष्ट करके भी इन सब की अनन्य प्रिय हो चुकी थी। एक मजदूर नेता ने मुझे बताया कि डाक्टर वत्सला साधारण महिला नही थीं यदि वे राष्ट्रपति द्वारा राज्यसभा के लिये न मनोनीत होती तो हम अपने निर्वाचन-क्षेत्र से उन्हें लोकसभा के लिये चुनते। उनके निधन से एक ऐसी महान क्षति हुई है, जो कभी भी पूरी न हो सकेगी। फिर मेरी ओर उन्मुख होकर कहा डाक्टर साहब, यदि आप इस क्लीनिक को न सम्भालते तो सचमुच उस तपस्विनी का काय अपूर्ण ही रह जाता।"

" मैं मन ही-मन सोचता हूँ कि सचमुच वह एक तपस्विनी थी, जो न जाने किस अभिशाप से प्रेरित हो इस पृथ्वीमण्डल पर आई थी! और मैं तो यह भी जानता हूँ कि उस सन्यासिनी ने अपनी कामनाओ के ससार मे आग लगा कर एक ऐसी धूनी रमाई थी जिससे मानवजाति युग-युगान्त तक प्रेरणा लेती रहेगी।

□ □ □

छ माह बाद

सनिक अस्पताल, वत्सला क्लीनिक और घर, यही मेरे जीवन के मुख्य बिन्दु

हो गये हैं। न कभी क्लब जाता हूँ, न किसी रस्तोरां में बैठ कर गपशप करता हूँ, न कोई दुश्मन है, न दोस्त! क्या इसी को वीतराग की मानसिक स्थिति कहते हैं? जीवन, अब मेरे लिये एक विशुद्ध कर्तव्यमात्र रह गया है। आज प्रातः जब मैं प्रसूति केन्द्र पर गया, तो सूचना मिली कि डौरोथी ने एक बालिका को जन्म दिया है। उत्सुकता से अपने कदमों को ठेलता हुआ, जब मैं डौरोथी के बैड के पास गया, तो वह एक विशेष अभिप्राय से मुस्कुरा रही थी जैसे उसे एक बड़ी भारी विजय प्राप्त हुई हो और वह एक महान् स्वप्न को साकार कर सकी हो!

'लीजिये, मैंने आपके लिये वत्सला जी को पुनर्जन्म प्रदान किया है।'

मैं उसके अभिप्राय को न समझ सका और बालिका को गौर से देखने लगा 'अरे यह क्या, इसकी शक्ल सूरत तो बिल्कुल वत्सला से मिलती-जुलती है!' यह विधाता का कैसा अनोखा आश्चर्य है कि वैसी ही रूपरेखा, वैसी ही आकृति, वैसे ही अंग प्रत्यंग और वैसा ही वर्ण, इस बालिका को भी मिला है!

'कहिये अब तो खिन्न न रहेंगे, आपकी मित्र पुत्री बनकर आपके ही घर आ बिराजी है!'—डौरोथी ने ईषत् व्यंग्य के साथ कहा।

तो क्या इस लम्बे व्यवधान में तुम वत्सला के मन और शरीर का ही ताना-बाना बुनती रही थी?' मैंने यह बात कुछ ऐसे अभिप्राय से कही जैसे कि किसी कुशल गृहिणी को कोई बढ़िया ऊन की लच्छियां देकर उससे यह चाहे कि देखो इस डिज़ाइन और इस नाप का स्वेटर बुनना है, और वह गृहिणी एक सुनिश्चित तिथि पर लच्छियां देने वाले को, उसका मनोवांछित स्वेटर देकर विस्मय विमुग्ध कर दे 'लो ऐसा ही तो तुम चाहते थे न?' मेरी डौरोथी ने वत्सला को कुछ ऐसी ही कुशलता से पुनर्निर्मित कर दिया था।

मैंने बालिका को फिर गौर से देखा। सुबह की किरणों के भव्य आलोक में उसके नाक-नक्श वत्सला की ही तरह भास्वर हो उठे थे!